भारतीय मौनपालों को तथा भारत में मौन पालन के धन्धे को
संगठित रूप देने वाले, अखिल भारतीय मौनपालन-संघ
के संस्थापक तथा अवैतनिक प्रधान मंत्री, इण्डियन-
बी-जनरल के संचालक तथा अवैतनिक संपादक,
हमारे प्रान्त उत्तर-प्रदेश को सर्व प्रथम-
मौनपालन का संदेश सुनाने वाले,
कर्मठ मौन के ही समान
मौनपालन के कर्मठ
कार्यकर्ता व मौन
के अनन्य प्रेमी, अपने गुरु
श्री राजेन्द्रप्रसाद गुप्त, बी. एस सी.,
एल. एल. बी., अवैतनिक उपसंचालक मौन
पालन उत्तर प्रदेश, जिनसे मुझे इस विषय की
शिक्षा लेने का सौभाग्य मिला है, तथा जिनकी ही
एक मात्र सहानुभूति व प्रेरणा से मुझे अपने अनुभवों को
इस पुस्तक के रूप में साकार कर पाने का यह अवसर प्राप्त
हो पाया है, उन्हीं के कर कमलों में लेखक की यह प्रथम कृति

★ सादर भेंट ★

भूमिका

★

इस पुस्तक के लेखक श्री बचीसिंह रावत से मैं सन् १९३९ से, जब वे उत्तर प्रदेश सरकार के मौनपालन-शिक्षा केन्द्र ज्योलीकोट में मौनपालन की शिक्षा प्राप्त करने के लिये आये थे, परिचित हूँ। उस शिक्षा की परीक्षा में वे सर्व प्रथम तथा विशिष्टता सहित उत्तीर्ण हुए थे। आपकी योग्यता तथा लगन का थोड़ा सा प्रमाण इसमें मिल सकता है।

शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् आप सतत मौनपालन का अध्ययन क्रियात्मक रूप से करते चले आये हैं। पिछले चार पांच वर्ष से तो इस विषय में आपने अपने इस कार्य को पर्याप्त विस्तार तथा उन्नति दी है, यद्यपि अपनी जीविका के लिये आप अन्यत्र कार्य करते हैं, मैं समय समय पर आपके सम्पर्क में आता रहा हूँ। अखिल भारतीय-मौनपालन संघ के सदस्य होने के नाते भी मुझे आपके मौनपालन कार्य से दिलचस्पी रही है। मैंने अनुभव किया कि आप उन व्यक्तियों में से हैं, जो प्रतिकूल आर्थिक परिस्थिति के कारण योग्यता तथा लगन होते हुए भी अपने मार्ग में पूर्णतया अग्रसर नहीं हो पाते। हमारे देश की परिस्थिति भी अभी ऐसी नहीं बन पाई है कि जहां क्रियात्मक रूप से रचनात्मक कार्य-कर्ताओं को, राज्याधिकारी अथवा नेता, खोजकर बिना पक्षपात अथवा भेदभाव के उनके कार्य में उन्हें उचित सहायता प्रदान करें जैसा कि अन्य स्वतन्त्र व सभ्य देशों में होता है। हमारी स्वतन्त्रता की अभी शिशु अवस्था है। अवसर पाकर हमारे देश में भी विशेषतया रचनात्मक कार्यकर्ताओं को ही उच्च कोटि का मान निष्पक्ष रूप से दिया जावेगा। राजनीतिज्ञों तथा *राज्याधिकारियों का जो महत्व आज माना जाता है, वह इतना नहीं रहेगा।* इसलिये हताश होने का तो कोई विषय नहीं है। परन्तु जब तक परिस्थिति में अनुकूल परिवर्तन नहीं होगा तब तक रचनात्मक कार्य तथा रचनात्मक कार्यों से होने वाली देश की उन्नति में भी विलम्ब होता जायगा।

ऐसी परिस्थिति में जब श्री रावत ने मुझे अपनी यह पुस्तक लिखकर

दिखाई और इसके लिये भूमिका लिखने की मुझसे मांग की तो मैंने उनकी मांग को सहर्ष स्वीकार कर लिया। यदि इस भूमिका को लिखने से उनके कार्य को किसी प्रकार से पुष्टि प्राप्त होती है तो इसको मैं अपना सौभाग्य ही समझता हूं तथा उनका आभार मानता हूँ कि उन्होंने मुझे अपने इस शुभ कार्य में भाग लेने का अवसर दिया।

देश हैं, जो इस समय करोड़ों रुपये का मधु प्रतिवर्ष उत्पादन करते हैं और भारतवर्ष तथा अन्य देशों को देते हैं।

भारतवासियों के समक्ष मधु की प्रशंसा करने की कोई आवश्यकता नहीं। आयुर्वेद में तथा अन्य वेदों, धार्मिक-पुस्तकों, तथा वैदिक ग्रन्थों में मधु की भूरि भूरि प्रशंसा वर्णित है। हिन्दुओं में बच्चे के पैदा होने से लेकर उसके मरते समय तक सभी संस्कारों में मधु का प्रयोग किया जाता है। मधु एक उच्च-कोटि की औषधि तथा पौष्टिक-भोज्य पदार्थ माना गया है। मुसलमानों में उनकी धार्मिक पुस्तक "कुरान शरीफ" में तो एक पूर्ण अध्याय ही मधु-मक्षिका के विषय पर है, जिसमें हजरत मुहम्मद ने मनुष्य जाति को मधु-मक्षिका के रीति-रिवाज, रहन-सहन तथा व्यवहार का अध्ययन करके उससे शिक्षा प्राप्त करने की सम्मति दी है। तथा मधु के विषय में यहां तक कह दिया है कि मधु मनुष्य के शरीर के लिये इतना ही उपयोगी है जितना कि कुरानशरीफ मनुष्य की आत्मा के लिये। बाइबिल में भी ईसाइयों के लिये मधु का बार बार प्रशंसापूर्वक वर्णन है।

यह सब कुछ होते हुए पाठकजन पूछ सकते हैं कि क्या कारण है कि हमारे इस भारतवर्ष में जहां एक समय मधु की नहरें बहती थीं (मधुः क्षरन्ति भारत) वहां मधु का आज इतना अभाव है। कारण यह है कि मधु-उत्पादन कला भारत में चिरकाल से लोप हो चुकी है। जहां भारतवर्ष ने मधु जैसी मीठी वस्तु उत्पादन करने वाली मधु मक्षिका को जन्म दिया वहां कुछ समय बाद ही इसी भारत ने अथवा इसके समीप कहां चीन ने ही गुड़ जैसी मीठी वस्तु देने वाले गन्ने को भी जन्म दिया। गन्ने से मीठा इतने कम परिश्रम से और इतनी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होने लगा कि भारतवासियों ने मधु उत्पादन की कला को भुला दिया और मधु की आवश्यकता को पूर्ण करने के लिये जंगली मधु-मक्षिकाओं (भँवर) के छत्तों को नष्ट करके उनसे मधु प्राप्त करने की विधि को अपनाया। यह विधि अत्यन्त घृणात्मक, निर्दयतापूर्ण तथा विनाशकारी है। मधु-मक्षिका मनुष्य की परम मित्र है। यह केवल मधु ही उत्पादित नहीं करती। देश की खेती, फल, भाजी तथा बीज की उपज में भी वृद्धि

निवेदन

★

आदरणीय मौनपाल साथियो,

आपके समर्थन की आशा मे आज मैं आपके सम्मुख इस पुस्तक को लेकर आने की धृष्टता कर रहा हूं। मौनपालन के धन्धे की उपयोगिता के प्रचार का कार्य अब बहुत कुछ हो चुका है। अब हमारे सामने प्रश्न उन लोगो को मौनपालन की सही जानकारी देने का है, जो कि इसे अपनाने के लिये लालायित हैं। मौनपालन एक वैज्ञानिक विषय है। बिना इसका कुछ सैद्धान्तिक-ज्ञान प्राप्त किये, इसे क्रियात्मक-रूप मे करना कठिन ही नहीं असम्भव भी है। सैद्धानिक ज्ञान हम एक मात्र शिक्षा केन्द्रों में जाकर ही प्राप्त कर सकते हैं। जिसे करना प्रत्येक व्यक्ति के लिये सम्भव नहीं हो सकता। अपनी भाषा मे सस्ते साहित्य का अभाव, उनको घर पर स्वयं शिक्षित होने देने में एक बड़ी बाधा सिद्ध होती है, जिससे बहुतो की इच्छायें इच्छाओं तक ही सीमित रह जाती हैं और राजकीय सहायता से प्राप्त किये गये, अनेकों सस्ते मौनगृह शीघ्र ही गाय, भैंसों को सानी पानी देने का तक प्रयोजन सिद्ध करने लगते हैं।

इसी बाधा को ध्यान मे रख कर, मैंने आज से तीन वर्ष पूर्व यह पुस्तक लिख कर तैयार की। अर्थाभाव से मैं इसको आज तक प्रकाश में न ला सका। मैंने प्रत्येक सम्भव उपाय कहीं से इस हेतु सहायता प्राप्त करने के लिये किये, लेकिन सब निष्फल ही सिद्ध हुए। न तो कोई प्रकाशक ही इसका प्रकाशनाधिकार लेने को तत्पर हुआ और न अन्यत्र से ही किसी का सहायता का हाथ मेरे मार्ग से इस रोड़े को हटाने के हेतु आगे बढ़ा। अर्था-भाव के इस युग में मौनपालन सदृश उपयोगी विषय पर लिखी यह पुस्तक, हिन्दी के राष्ट्र भाषा के पद पर आसीन हो चुकने के बाद भी चन्द चांदी के टुकड़ों के अभाव म अन्धकार के गर्त मे ही पड़ी रह गई। देश का कितना दुर्भाग्य है!

इस धन्धे से अपना प्राकृतिक प्रेम होने से तथा इसकी उपयोगिता पर

अटल विश्वास होने से इस वर्ष मैंने इसके प्रकाशन का दृढ निश्चय किया। "ते ते पाव पसारिये जेती लाम्बी सौर" वाली विद्वतापूर्ण कहावत को बरबस भुलाकर अपने पावों को चादर से बाहर कर दिया और ऐसे बोझ के नीचे सिर लगा दिया, जिसमें सिर को कुचलने की भी पूर्ण सामर्थ्य है। इसका ही फल यह पुस्तक है। यद्यपि यह बहुत ही संक्षिप्त रूप में है, आपसे प्रोत्साहित किये जाने पर समयानुसार इसका दूसरा संस्करण में अवश्य आपको विस्तृत रूप में दूंगा। अर्थाभाव ने ही मुझे पुस्तक का अग भंग करने को बाध्य किया है।

इस पुस्तक में मैंने मौनपालन प्रारम्भ करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिये प्रत्येक आवश्यक सामग्री को रखने की पूरी चेष्टा की है। देश में मौनपालन के वर्तमान स्तर को, देश की परिस्थितियों को तथा साधन सुलभता को ध्यान में रख कर ही प्रत्येक विधि को पुस्तक में स्थान दिया है। किसी भी विधि को, जिसके कि साधन सुलभ नहीं हो सकते, पुस्तक में लिखने का प्रयत्न नहीं किया है। जहा तक सम्भव हो सका है चित्रों से भी प्रत्येक विधि को समझाने की चेष्टा की है।

इस सब के अतिरिक्त भाषा को भी सरल व शुद्ध बनाने की चेष्टा की है। इस विषय में प्रयुक्त होने वाले प्रत्येक शब्द का सरल हिन्दी रूपान्तर भी कर दिया है। जिसकी सूची अन्त में दे दी है, तथा जिन्हें पुस्तक में भी प्रयोग किया है।

इस पर भी मैं न तो मानता ही हू और न कहता ही हू कि यह पुस्तक इस विषय में पूर्ण है या शुद्ध है। मैंने अवश्य इसमें अधिकाश बातें अपने क्रियात्मक अनुभवों के आधार पर व अपने देश की वर्तमान अवस्थाओं को ध्यान में रख कर ही लिखी है। लेकिन कुछ बातें पुस्तक को पूर्ण करने के लिये अन्यत्र से सग्रहित ज्ञान के आधार पर भी लिख दी है। इसीलिये मैं अपने आदरणीय साथियों से निवेदन करता हू कि वे इसमें लिखी किसी बात को भी वाद-विवाद की वस्तु न बनावें। वे इसे अन्तिम लक्ष्य न मान कर अपने अन्वेषणों के लिये प्रारम्भिक स्थान ही समझें। इसे स्पष्ट मार्ग न समझ कर केवल मार्ग रक्षक ही मानें। इस दिशा में बढ़ते बढ़ते जहा पर भी इसमें

करती है। मधु-मक्खिका को इस प्रकार नष्ट करके हमने अपनी एक राष्ट्रीय सम्पत्ति को ही नष्ट किया है और मधु जैसी उपयोगी वस्तु का त्याग करके हमने कोई बुद्धिमत्ता का परिचय नहीं दिया।

यह सब कुछ समझ कर यह स्वीकार करना पड़ता है कि जो व्यक्ति, मधु-उत्पादन की आधुनिक-वैज्ञानिक-विधि, जिसमें बिना मधु-मक्खिका की हत्या किये ही और बिना उनके छत्तों को नष्ट किये ही उनको पाल कर उनसे शुद्ध मधु प्राप्त किया जाता है, को इस देश में विस्तार देने का प्रयत्न कर रहे हैं, वह एक अत्यन्त महत्व का सेवा कार्य कर रहे हैं। मधु-उत्पादन की प्राचीन कला भारत के पर्वतीय-भागों में जहां गन्ने का उत्पादन नहीं हो सकता और यातायात की असुविधाओं के कारण जहां गुड़ अथवा चीनी भी कठिनाई से पहुंच पाती है, अभी तक प्रचलित है। परन्तु यह विधि अधिक लाभदायक नहीं है। यूरोप में गन्ना बहुत देर में पहुँचा। वहां के लोगों ने मौन को अपना मित्र मानकर, वैज्ञानिक खोजों द्वारा एक ऐसी उपयोगी विधि निकाली, जो अहिंसात्मक है और अत्यन्त लाभदायक भी है। मैंने प्रारम्भ में इस आधुनिक विधि को विस्तार देने की चेष्टा अल्मोड़े के पर्वतीय भागों में की। इसमें मुझे बहुत कठिनाई अनुभव हुई। पहाड़ी व्यक्ति कदाचित यह स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं होते थे कि उनकी यह प्राचीन विधि, इस आधुनिक विधि, जिसका जन्म पश्चिम में हुआ, से किसी प्रकार कम है। जहाँ हम उनके स्वदेश प्रेम-भाव का मान करते हैं वहां हम उनके आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति से उदासीन रहने की भावना की प्रशंसा नहीं कर सकते। हर्ष है कि आज १६-१७ वर्षों के प्रयत्न के फल स्वरूप वही लोग इस आधुनिक विधि का सहृदय स्वागत कर रहे हैं और इस कुटीर धन्धे को अपनाकर अपना व्यक्तिगत तथा देश का हित कर रहे हैं। खाद्य पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि करना आज हमारे देश की सबसे कठिन तथा सबसे आवश्यक समस्या है। इन मौनपालन प्रेमियों के सम्मुख कई कठिनाइयां आज विद्यमान हैं जिनमें से एक अपनी भाषा में सन्तोष-जनक साहित्य का अभाव है। इस पुस्तक के लेखक ने यह पुस्तक लिखकर जो इस कठिनाई को हटाने का प्रयत्न किया है, यह अत्यन्त प्रशंसनीय है और

मैं इसका सहृदय स्वागत करता हूं। मेरा यह विश्वास है कि आधुनिक विधि से मधु-उत्पादकों के लिये यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

"मधुवन"
रामगढ़, जिला नैनीताल
दिनांक २६ जनवरी १९५३

राजेन्द्र नाथ मुट्टू

त्रुटियाँ या अशुद्धियाँ मालूम करें, उन्हें वाद-विवाद में डालने से पूर्व लेखक को सूचित करने की कृपा करें। लेखक को अपनी अशुद्धियां जान कर अत्यन्त हर्ष होगा, वह कृतज्ञता पूर्वक उन्हें स्वीकार कर के पुस्तक को और भी शुद्ध बनाने की चेष्टा करेगा। इस पुस्तक को लिखने से लेखक का ध्येय अर्थोपार्जन या यशोपार्जन कदापि नहीं है। उसकी एक मात्र इच्छा अपनी आने वाली सन्तान को इस विषय की सही व शुद्ध जानकारी देने की है। ताकि उनको भी वहीं से प्रारम्भ न करना पड़े, जहा से कि हम कर रहे हैं। उनका मार्ग कुछ सरल बन जावे और देश में मौनपालन का धन्धा समुचित विकास कर सके।

मुझे विश्वास है कि ऐसा ही होगा। एक व्यक्ति के लिये थोड़े से काल में इसमें सफलता पाना असम्भव ही है। केवल पारस्परिक सहयोग व सद्भावनाओं से ही हम इसमें आगे बढ़ सकते हैं। भावी सन्तति को मौनपालन की सही जानकारी दे सकते हैं, तथा मौनपालों की दुनियाँ में, अपना समुचित स्थान प्राप्त कर सकते हैं। मैं विश्वास करता हूं कि शीघ्र ही यह उपयोगी, लेकिन प्रत्येक प्रकार से गिरा हुआ धन्धा प्रकाश में आवेगा और नन्हा सा मौनागृह प्रत्येक भारतीय के घर में अपना सम्मान पूर्ण स्थान पावेगा। तथा नन्हीं सी मौन भय की वस्तु मानी जाने के स्थान में श्री सर जौन मूर के शब्दों में "मौन दुनिया में मानव की सवश्रेष्ठ नन्हीं सी मित्र है" के आदरणीय भावों से देखी जावेगी। ताकि एक बार फिर दुनिया वाले हमारे देश को शहद व दूध के देश के नाम से जानने लगें। पुष्पों से संग्रहित अमृत को मौनों के द्वारा मधु के रूप में अधिक से अधिक मात्रा में प्राप्त करके हम अपने देशवासियों को दे सकें। जिससे उनको स्वास्थ्य, सौन्दर्य व शक्ति की अनुपम प्राप्ति हो और दुनियाँ में एक बार फिर हमारे देश का नागरिक सर्वश्रेष्ठ माना जाने लगे।

अन्त में अपने गुरु श्री राजेन्द्रनाथ मुट्टू जी के प्रति जिनकी प्रेरणा, सद्भावना व सहानुभूति से ही इस पुस्तक को जन्म लेने का अवसर मिला है तथा जिनके द्वारा संग्रहित अनेकों चित्रों से इसको सौन्दर्य मिला है व अपने

मित्र श्री चन्द्रलाल साह जी के प्रति, जिन्होंने भी चित्रों के संग्रह करने में मेरा हाथ बंटाया है, तथा श्री लीलाधर जोशी जी प्रबन्धक इन्द्रा प्रिन्टिंग वर्क्स अल्मोड़ा के प्रति, जिनके सहयोग व परिश्रम से ही इस पुस्तक को यह सुन्दर रूप मिल सका है और अपने साथी उन अध्यापकों के प्रति, जिन्होंने प्रत्येक प्रकार की सहायता देकर व देने का आश्वासन देकर मुझे इसे प्रकाश में लाने का साहस प्रदान किया है तथा देशी व विदेशी उन समस्त मौनपालों के प्रति, जिनके अथक परिश्रम, अध्यवसाय व अन्वेषणों से इस धन्धे को वर्तमान वैज्ञानिक रूप मिल पाया है तथा जिनसे मुझे प्रकट या परोक्ष में कुछ भी जानकारी मिल सकी है, मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करके इन पक्तियों को समाप्त करता हूं।

अगर इस उपयोगी धन्धे के विकास में इस पुस्तक से तनिक भी सहायता मिल पावेगी तो मैं प्रत्येक प्रकार से अपने इस प्रयत्न को सार्थक व सफल समझूंगा।

—लेखक

सूची

मौनपालन

अध्याय १
मौन, मौनपालन, मौनपाल

मौन

मौन क्या है ? क्या करती है ? इसके पास क्या होता है ? ये तीन ऐसे सवाल है जिनका उत्तर मौन के बारे में पूर्ण प्रकाश डाल देता है ।

यह एक छोटा सा कीट है, जो अति पुरातन-काल से आज तक प्रत्येक बात में ज्यों का त्यों अपने वंशानुकूल ही चला आ रहा है ।

इसका मनुष्य जाति के लिये प्रधान कार्य पुष्पों से पुष्पामृत व अन्यत्र से दूसरे मीठे पदार्थों को संचय करके उसे मधु में परिवर्तन करने का है, और साथ ही साथ सेचन क्रिया द्वारा कृषि की पैदावार में वृद्धि करना भी है ।

इसके पास केवल वह वातावरण होता है, जिसमें यह अपना कार्य करती है ।

नामकरण

संसार के प्रत्येक देश में इसको अलग अलग नामों से पुकारा जाता है । हमारे देश में भी लोग इसको भिन्न भिन्न नामों से जानते हैं । मधु मक्खी, शहद की मक्खी, मौन आदि अनेकों सम्बोधन हमारे देश में इसके लिये प्रचलित हैं । या तो मधु-मक्खी शब्द ही इसके लिये अधिकांश प्रयुक्त होता है । लेकिन मधु सदृश देव दुर्लभ स्वादिष्ट व शुद्ध पदार्थ को बनाने वाले जीव के लिये मक्खी शब्द का उच्चारण कदापि उचित नहीं कहा जा सकता है । यह तो एक प्रकार से इसकी उपयोगिता के प्रति हमारी अनभिज्ञता को ही अधिक प्रकट करता है । मक्खी शब्द के उच्चारण के साथ ही साथ हमारे मस्तिष्क में एक घिनौने व अनुपयोगी जीव का ध्यान अपने आप ही आ जाता है । इसलिये इस परिश्रमी, उपयोगी व भोले जीव के आगे से मक्खी शब्द को किसी

प्रकारसे भी न लगाना ही इसके प्रति हमारी इमानदारी का प्रमाण हो सकता है। अन्य सभी नामों में मौन शब्द ही अधिक सरल, सार्थक व इसके लिये अधिक उपयुक्त मालूम पड़ता है। जीवन के प्रत्येक क्षण को अपने कर्तव्य-क्षेत्र में चुपचाप बिताने वाले जीव के लिये क्या मौन शब्द अनुचित कहा जा सकता है? कदापि नहीं।

हिमालय की तलहटी के अधिकांश भाग में इस मौन नाम से या इससे ही बिल्कुल मिलते जुलते दूसरे नाम से पुकारा जाता है। हमने भी अन्य सभी नामों से इसी को सरल, सार्थक व उपयुक्त जानकर अपनाया है और इसीका उपयोग पुस्तक में किया भी है। यों तो अखिल भारतीय मौनपाल-संघ ने भी इसी नाम को अपने साहित्य में अपनाने की चेष्टा की है, लेकिन फिर भी मौन प्रेमी जनों से मेरा अनुरोध है, कि वह अपने दैनिक व्यवहार में मधु मक्खी के स्थान पर मौन शब्द को अपना कर इसे इतना प्रचलित कर देवें, कि मौन शब्द कान में पड़ते ही मस्तिष्क में मानव जाति के लिये अत्यन्त उपयोगी इस नन्हे से कीट के लिये श्रद्धा की भावना प्रकट हो जावे।

मौनों के प्रकार

यों तो संसार के प्रत्येक देश की मौन किसी न किसी बात में एक दूसरे से भिन्नता रखती है, लेकिन इनके मुख्य भेद निम्न प्रकार माने जाते हैं —

१ ऐपिस इन्डिका (भारतीय-मौन)—यह वह मौन है जो हमारे भारतवर्ष में पाई जाती है। नाप के अनुसार यह दो तरह की होती है। एक छोटी और दूसरी कुछ बड़ी। छोटी मौन नीचे मैदानी भागों में पाई जाती है। इसे पैरा कह कर सम्बोधन करते हैं। बड़ी मौन पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाती है। जितने ऊँचे अक्षांश की ओर हम बढ़ते हैं, हमें मौन के आकार में भी वृद्धि देखने को मिलती है। चीन, जापान की मौन भी इसी के अन्तर्गत आ जाती हैं।

अब यह बात भी निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि पश्चिमी मौन भी इसी की सन्तान है। स्थान व आबहवा के अनुसार भले ही उसमें कुछ परिवर्तन आ गया हो।

यह मौन खुले स्थानों में छत्ते कम बनाती है और कई समानान्तर छत्ते लगाती है।

२. ऐपिस मेलिफिका (पश्चिमी मौन)—यह वह मौन है जो योरोप व अमेरिका में पाई जाती है। यह भारतीय मौन से नाप में कुछ बड़ी भी होती है। अभी तक कार्य में भी भारतीय मौन से यह श्रेष्ठ ही पाई गई है। यह दो रंगों की होती है। एक काली, जो मध्य यूरोप में मिलती है और दूसरी सुनहरी, जो साइप्रेस, इटली, अमेरिका व मध्य पूर्व में होती है। यह मौन भी हमारी भारतीय मौन की ही भांति कई समानान्तर छत्ते लगाती है और अन्धकार प्रिय होती है।

३. ऐपिस डौरसेटा (भँवर)—यह भारत में बहुतायत से पाई जाती
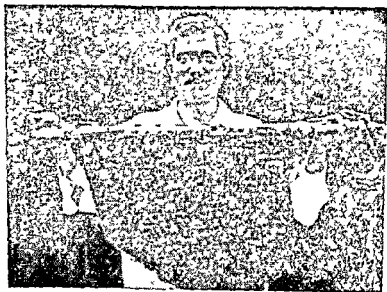
चित्र—१ भंवर (ऐपिस डौरसेटा) नीरज में

है। अभी तक इसे पालने के सभी प्रयत्न वृथा ही गये हैं (चित्र १)।
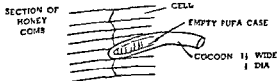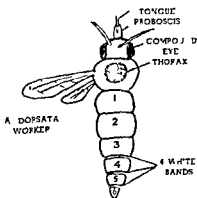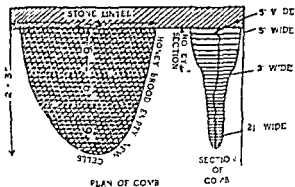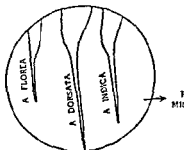
चित्र—१ भंवर (एपिस डौरसेटा) की शरीर रचना व डंक

में ऊँचे वृक्षों पर खुले में यह एक ही छत्ता लगाती है । भारतीय व पश्चिमी मौनों की भाँति न तो बन्द स्थान ही इसको प्रिय होता है, और न उनकी भाँति यह कई समानान्तर छत्ते ही लगाती है ।

नाप में भी यह बड़ी होती है । इसका डंक भी अधिक लम्बा व अत्यन्त विषैला होता है (चित्र २) । अगर किसी मनुष्य को इसके कई डंक एक बार ही लग जावें तो उसकी मृत्यु अवश्यम्भावी हो जाती है । यह गरम स्थानों में अधिकांश रहती है । शहद भी यह अत्यधिक जमा करती है । इसके एक छत्ते से एक ही बार में मन मन भर तक शहद मिल जाता है । इसके पालने के प्रयत्न किये जा रहे हैं । लेकिन सफलता अभी तक नहीं मिल सकी है ।

४ ऐपिस फ्लोरिया (पोतींगा)—यह बहुत ही छोटी मौन होती है । खुले स्थानों में, अधिकांशत झाड़ी या मकान की छत पर यह अपना छत्ता लगाती है । इसका भी एक ही छत्ता होता है, वह भी बहुत छोटा । इसके छत्ते से एक बार में २, ३ पौन्ड तक शहद निकल आता है । इसका डंक छोटा व कम विषैला होता है ।

५. मेलीपोना (डम्भर)—यह मौन अमेरिका मे अधिक पाई जाती है । वहां यह पाली भी जाने लगी है । हमारे देश में भी यह पाई जाती है । यह डंक का प्रयोग नहीं करती है, इसीलिये इसे बिना डंक की मौन कह कर भी पुकारा जाता है ।

मौनपालन

मुर्गी पालन, गो पालन की भांति आज मौनपालन भी एक धंधा हो गया है । पाश्चात्य विद्वानों ने अपने लगातार के परिश्रम व अन्वेषण से मौनों की प्रत्येक आदत व आवश्यकताओं का पता लगा कर ऐसी ऐसी विधियां ढूंढ निकाली हैं कि अपने सहयोग से हम मौनों को अधिक से अधिक आराम देकर उनसे अधिक से अधिक शहद प्राप्त कर सकते हैं । पश्चिम में इस धन्धे से धन्धे ने एक व्यवसाय का रूप ले लिया है । वे सफलतापूर्वक इस व्यवसाय में उन्नति भी कर रहे हैं । वहां इस समय अनेकों बड़े बड़े मौनालय स्थापित हो चुके हैं और नये नये हो रहे हैं । वे लाखों रुपया प्रतिवर्ष इस धन्धे से कमा

रहे हैं और करोड़ों रुपये का लाभ सेचन क्रिया द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से देश की कृषि उत्पादन में वृद्धि के रूप में दे रहे हैं। अमेरिका प्रतिवर्ष ३५ करोड़ रुपये तक का शहद उत्पादन करता है। आस्ट्रेलिया का व्यवसायी मौनपाल इस धन्धे से सालाना ३० हजार रुपये तक कमा लेता है। इन्हीं आधुनिक विधियों को प्रयुक्त करके दक्षिण अफ्रिका के एक चतुर मौनपाल ने एक ही मौनावंश से एक साल में एक टन शहद पैदा करके इस व्यवसाय में एक चमत्कार पैदा कर दिया है।

मौनों की आदतों को जानकर, उनकी आवश्यकताओं को समयानुसार समझ कर, उन्हें उसी प्रकार की सब सुविधायें देकर, कम से कम कष्ट उन्हें पहुँचा कर, अधिक से अधिक लाभ उनसे प्राप्त करने के धन्धे को ही हम मौनपालन कह सकते हैं, चाहे वह एक दो मौनावंश रख कर ही किया जावे चाहे अनेकों।

हमारे देश में पुराने समय से जिस प्रकार मौनें रखी जाती हैं, वह और चाहे कुछ भी हो, मौनपालन कदापि नहीं कहा जा सकता है। थोड़े से अशुद्ध शहद की प्राप्ति के हेतु मौनों के बसे हुए घर को उजाड़ना, उनके अन्डे बच्चों को नष्ट कर देना, क्या किसी प्रकार भी पालने का नाम सार्थक कर सकता है? कदापि नहीं।

मौनपाल

मौनपाल हम उस ही व्यक्ति को कह सकते हैं, जो उपर्युक्त प्रकार से मौनों की आदत व आवश्यकताओं को समझ कर, उन्हें समयानुसार सभी आवश्यक सुविधायें देकर, उनसे अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करने की चेष्टा करे। कोई बात नहीं, उसके पास केवल एक दो ही मौनावंश हों या अनेकों हों। वह इसको शौक के लिये करे या व्यवसाय की दृष्टि से करे।

प्रत्येक स्त्री या पुरुष मौनपाल बन सकता है। लेकिन उसकी इस धन्धे के प्रति रुचि व इसका उसे कुछ ज्ञान होना अति आवश्यक है। केवल वही व्यक्ति मौनपाल नहीं बन सकते हैं, जिन्हें डंक का असर भयंकर रूप में होता

है या जिन्हें कोई हृदय सम्बन्धी बीमारी है या जो पागल, आलसी या अन्य कोई दूसरी जीर्ण बीमारी से ग्रसित हों।

मैंने किसी पत्र में पढ़ा था कि एक व्यक्ति जो कि पिछली लड़ाई में अन्धा हो गया था, अमेरिका में ४०० तक मौनागृह रख कर सफलतापूर्वक मौनपालन कर रहा है।

ह्यूबर जो कि अन्धा था, उसी के मस्तिष्क में आधुनिक ढंग से मौन पालने का विचार सर्व प्रथम आया था।

अध्याय १

मौन की कृषि के लिये उपयोगिता

मधु के लिये मौन की उपयोगिता को तो शायद प्रत्येक व्यक्ति जानता ही है। लेकिन खेती की पैदावार को बढ़ाने के लिये भी मौन की कोई उपयोगिता होती है, इसे समझने वाले अभी तक हमारे देश में बहुत ही कम लोग हैं।

पाश्चात्य विद्वानों ने अपने अनुभव व अनुसन्धान से इस बात को सिद्ध कर लिया है कि मौनें अगर एक रुपये का लाभ मौनपाल को मधु के रूप में पहुँचाती है, तो उससे चौदह गुना तक लाभ उन लोगों को, उनकी पैदावार के वृद्धि के रूप में देती हैं, जो उस क्षेत्र में खेती या बागवानी करते हैं, जिनमें कि ये मौनें अमृत व पराग के संग्रहार्थ भ्रमण करती हैं। इसी सबब से विदेशों में मौनपालन को एक आदरणीय व्यवसाय माना जाता है। राज्य की ओर से इसके विकासार्थ बराबर प्रयत्न किये जाते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि यह सब कैसे सम्भव हो जाता है ? मौनों का खेती से सम्बन्ध कैसे व क्या रहता है ? इसका उत्तर जानने के लिये हमें फूलों की बनावट के बारे में व उनमें होने वाली सेचन क्रिया के सम्बन्ध में जानना अति आवश्यक हो जाता है।

फूलों का कार्य

हम विभिन्न प्रकार के रंग बिरंगे फूलों को निरन्तर देखते ही रहते हैं। हम जानते ही हैं, उनमें सौन्दर्य होता है और मनमोहक सुगन्ध होती है। हम इसी सौन्दर्य व सुगन्ध से आकर्षित होकर फूलों की प्रशंसा करते हैं। प्रशंसा ही नहीं, उसे तोड़ कर अनेकों भांति से अपने पास रखने का प्रयत्न करते हैं, यह हमारी बहुत ही प्राचीन स्वार्थी बुद्धि का परिणाम है। क्योंकि किसी भी अच्छी वस्तु को देख कर उसे अपने अधिकार में ले लेने की स्वाभाविक प्रवृति

तराइ भावर में लाइ के फूलों में सेचर किया के हेतु भरगोमो द मीनालय ज्योतिकांट द्वारा रचे गए मीनागृह
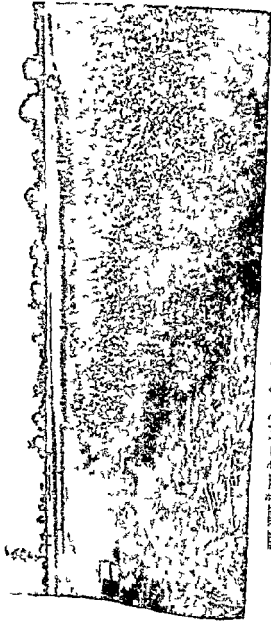
सेब के बगीचे में सेचन क्रिया के लिए रखा गया भूपेन मौनालय का एक मौनागृह

हम में हो उठती है। हम जानते भी नहीं हैं या उस समय हम भूल ही जाते हैं कि प्रकृति ने वास्तव में फूल का निर्माण हमारे या हमारे घरों की शोभा बढ़ाने के लिये नहीं किया है। उसका स्थान व उपयोगिता वहीं अधिक है, जहां पर कि प्रकृति ने उसको प्रकट किया है। वनस्पतिशास्त्र के ज्ञाताओं ने अपनी लगातार की खोजों के बाद इस बात को खोज निकाला है कि पेड़ व पौधों में फूलों का जन्म एक विशेष प्रयोजन को सिद्ध करने के लिये ही होता है। वह प्रयोजन है, पेड़ों में फल व फलों के भीतर बीज को सम्भव करके ऐसी स्थिति को पैदा कर देना कि सृष्टि से पेड़ व पौधों की वह जाति कभी भी समाप्त न होने पावे। फूल इस सब क्रिया के लिये साधन मात्र होता है। इस प्रयोजन की सिद्धि के प्रयत्न में ही फूल अपना अस्तित्व मिटा डालता है।

जैसा कि हम सब जानते ही हैं, जहां हम फूल देखते हैं, कुछ ही काल में वहां पर हमें फूल नहीं बल्कि फल दिखाई देने लगते हैं, अगर फल को तोड़ कर हम देखते हैं तो उसके भीतर हमें अनेकों बीज के दाने छिपे मिलते हैं। इन बीजों में वह शक्ति छिपी रहती है कि समयानुसार वे उस वृक्ष के ही समान अनेकों वृक्षों का जन्म सम्भव कर देते हैं, जिसने कि उनको जन्म दिया है। पेड़ में फूल लगते हैं, फूलों में फल निकलते दिखाई देते हैं, फलों के भीतर बीज बनते हैं। इन बीजों से फिर अनगिनित पेड़ व पौधों को जन्म मिलता है। अपनी जाति का अस्तित्व बनाये रखने के लिये ही प्रकृति ने वनस्पतियों में यह व्यवस्था की है। पेड़ मरता है लेकिन अपने ही समान अनेकों पेड़ों को पैदा होने की सामग्री छोड़ जाता है। इसी सामग्री को तैयार करने का वास्तव में फूल प्रकृति का एक कारखाना है। प्रकृति का कितना अद्भुत कार्य है, कि उस विशाल वृक्ष को पैदा करने की सामग्री उत्पन्न करने की सभी क्रियायें, नन्हे से सुकोमल उस पुष्प के भीतर होती हैं, जो उस वृक्ष की किसी नन्हीं सी पतली डाल पर अटका रहता है।

फूलों की बनावट व उसके भाग

फूलों के भीतर यह कार्यालय किस प्रकार फल को व बीज को बनाने का

काम करता है, इसे जानने के लिए फूलों की बनावट व उनके भागों के बारे में जानना अति आवश्यक है।
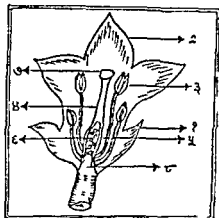
चित्र—२ उभयलिंगी पुष्प

१ अखडी २ पखुडी ३ लिंगदण्ड व पराग कोष ४ योनिसूत्र ५. गर्भाशय ६ गर्भबिन्दु ७ योनिछिद्र ८ मधुकोष

बाहरी रूप में फूलों के रंग व आकार में जो विभिन्नतायें होती हैं, उन्हें तो साधारण दृष्टि का कोई भी आदमी देख सकता है। लेकिन उनके भीतर जो कुछ ऐसी विभिन्नतायें होती हैं कि उनके होने से फूल की कार्य-गति ही बदल जाती है उन्हें केवल वनस्पतिशास्त्र के ज्ञाता ही देख पाते हैं।

फूल के सबसे निचले भाग में जहाँ कि वह डण्ठल से जुड़ा रहता है अखडियाँ होती हैं, जो फूल को चारों ओर से घेर कर सँभाले रहती हैं। इन्हीं अखडियों के आधार पर फूल की पखडियाँ टिकी रहती हैं। जिनमें कि फूल का सारा रूप व माधुर्य भरा रहता है। अगर हम इन अखडियों व पखुडियों को सावधानी से अलग कर दें तो हमें अनेकों नलिकायें सी दिखाई देती हैं। इन नलिकाओं के सिरों पर गाँठ सी बँधी रहती हैं। ये ही फूल के स्त्री व पुरुष अंश होते हैं, जिन्हें गर्भ-केशर और पराग केशर कहते हैं (चित्र २)। इन्हीं दो केशरों के मिलन से फूल में फल व फल में बीज का बनना सम्भव होता है।

गर्भ-केशर

यह फूल के बिल्कुल मध्य में होता है। एक लिंगी फूलों के केवल उन्हीं फूलों में यह पाया जाता है जो कि स्त्री जाति के फूल कहे जाते हैं। फूलों के मध्य में एक नलिका के सदृश यह दृष्टिगोचर होता है। इसके सिरे

पर गाठ सी बँधी रहती है, जिसे योनिछत्र कहते हैं । योनिछत्र से एक डंटल सा नीचे को चले जाता है, उसे योनिगूद कहते हैं । योनिगूद का निचला भाग कुछ फूला हुआ सा होता है, यही फूल का गर्भाशय होता है । इसी गर्भाशय के भीतर फूल के अनेकों रज-कण होते हैं । गर्भाशय से फल की उत्पत्ति व रज-कणों से बीजों की उत्पत्ति होती है । यही गर्भ-केशर फूलों का स्त्री अंश होता है ।

पराग-केशर

यह फूल का पुरुष अंश होता है । फूल के मध्य भाग के चारों ओर या गर्भ-केशर के चारों ओर (अगर वह उभयलिंगी पुष्प है) तो कुछ नलिकायें सी उठी दिखाई देती है । इन नलिकाओं को लिंग छत्र कह कर पुकारा जाता है । लिंग छत्र के सिरों पर भी गाठें सी बँधी रहती हैं, जिन गाठों को पराग-कोष्ठ कहते हैं । ये पराग-कोष्ठ जब पक जाते हैं तो अनेकों पराग-कण इनसे प्रकट होते हैं । लिंग छत्र जहा पर फूल से मिलता है वहा पर कुछ ग्रन्थिया सी दिखाई देती हैं, इन्हीं ग्रन्थियों से एक मीठे पदार्थ का जन्म होता है जिसे अमृत कहते हैं । इसी अमृत को सग्रह करके मौनें मधु के रूप में परिवर्तित कर देती है ।

फूलों के प्रकार

फूल दो तरह के होते हैं । एक एकलिंगी, जिसमे या तो गर्भ-केशर ही होता है और या पराग-केशर ही । दूसरे उभयलिंगी, जिसमे गर्भ-केशर और पराग-केशर एक ही फूल में साथ साथ विद्यमान रहते हैं ।

सेचन-क्रिया

मनुष्य, जानवर व पशु पक्षियों में जिस प्रकार नये जीव को जन्म देने के लिये उनके पुरुष अंश व स्त्री अंश का मिलना अति आवश्यक होता है । वनस्पतियों में भी ठीक उसी प्रकार नये बीज के जन्म के लिये इन दो अंशों का

मिलना आवश्यक हो जाता है। जैसा कि अभी ऊपर बताया गया है, फूल में ये दोनों अंश गर्भ-केशर और पराग-केशर के रूप में विद्यमान रहते हैं। इसलिए फूल को फल बनने के लिये, फल को अपने भीतर बीज उत्पन्न करने के लिये इस पराग-केशर में प्रकट होने वाले पराग-कणों का गर्भ-केशर के रजकणों के सम्पर्क में आना अति आवश्यक होता है। बिना इस क्रिया के हुए फूल में फल लगने सम्भव नहीं हो सकते। पराग-केशर से पराग कण गर्भ-केशर के योनिछत्र के द्वारा उसके गर्भाशय में प्रवेश करते हैं। पराग-कणों के किसी प्रकार भी योनिछत्र पर पहुंचने की क्रिया को ही हम सेचन-क्रिया कहते हैं।
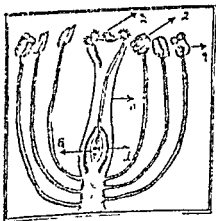
चित्र—४ सेचन क्रिया और गर्भाधान

१. पराग कोष, २. पराग कण ३. पराग कण योनिछत्र पर ४. पराग नली ५. गर्भाशय ६. गर्भ बिन्दु या रज-कण से पराग-कण का मिलना।

जब किसी प्रकार से भी पराग-कण योनिछत्र पर पहुंच जाते हैं, तो उनसे एक नलिका सी निकलती है, जिसे पराग नली कहते हैं। यह नली योनिछत्र की दीवार में छेद करके योनिछत्र के द्वारा उसके गर्भाशय तक पहुंच जाती है। गर्भाशय में इसी हेतु बने एक छिद्र के द्वारा प्रवेश करके उसके रजकणों से मिलने की इस क्रिया को फूलों का गर्भाधान कहा जाता है (चित्र ४)। इसी गर्भाधान के बाद गर्भाशय से फल की व रजकणों से बीज की उत्पत्ति सम्भव हो जाती है।

सेचन-क्रिया के भेद

सेचन क्रिया दो प्रकार की होती है। पहला आत्म-सेचन व दूसरा पर सेचन।

आत्म-सेचन

यह क्रिया उभयलिंगी पुष्पों में ही सम्भव हो सकती है। क्योंकि उनके गर्भ-केशर व पराग-केशर एक ही फूल में विद्यमान रहते हैं। एक ही फूल के पराग-कण जब उसी फूल के गर्भ-केशर के योनिछिद्र में जा गिरते हैं, तो उसी को हम आत्म-सेचन कहते हैं।

पर-सेचन

यह क्रिया एकलिंगी पुष्पों में अधिक होती है। जब एक फूल के पराग केशर के पराग-कोष्ठ से पराग-कण निकल कर दूसरे फूल के गर्भ-केशर के योनिछिद्र पर जा गिरते हैं तो उसे ही हम पर-सेचन क्रिया कहते हैं।

पर-सेचन क्रिया एक ही वृक्ष के दो अलग अलग फूलों में या दो अलग अलग वृक्षों के अलग अलग फूलों में हो सकती है।

पर-सेचन की उपयोगिता

यद्यपि फूल बहुतायत में उभयलिंगी ही होते हैं, लेकिन सेचन क्रिया उभयलिंगी पुष्पों में भी अधिकांश पर-सेचन की ही हुआ करती है। वनस्पति शास्त्र के ज्ञाताओं ने इस बात का अन्वेषण भी कर लिया है कि आत्म-सेचन द्वारा लगे हुए फल पर-सेचन द्वारा लगे हुए फलों के समान श्रेष्ठ नहीं होते हैं। प्रकृति भी आत्म-सेचन से पर-सेचन को ही अधिक श्रेष्ठ मानती है। क्योंकि फूलों में अधिकांश पर सेचन को ही होते हुए पाया गया है। आत्म-सेचन तो तभी होता है, जब कि पर सेचन क्रिया किसी प्रकार भी सम्भव न हो सके। आत्म सेचन को रोकने के लिये ही शायद प्रकृति ने अनेकों बाधायें फूलों में उत्पन्न भी कर दी हैं।

अनेकों पुष्पों का एक लिंगी होना, उनके परागकण व योनिछिद्र के पकने के समय में अन्तर का रहना, लिंगछिद्र व योनिसूत्र की ऊँचाइयों का कम अधिक होना, तथा बहुत से फूलों में अपने ही पराग-कणों से गर्भित हो सकने की सामर्थ्य का न होना इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि प्रकृति भी आत्मसेचन से पर-सेचन को ही प्रधानता देती है और उसी को अधिक उपयोगी भी मानती है।

पर-सेचन क्रिया के साधन

पर-सेचन क्रिया फूलों में निम्न साधनों से सम्भव होती है:—

१. वायु-लब्ध-सेचन—यह सेचन क्रिया है, जो वायु द्वारा किसी फूल के पराग-कणों को उड़ा कर, दूसरे फूल के योनिछिद्र में डाल देने से होती है।

२. जल-लब्ध-सेचन—वह सेचन-क्रिया है जिसमें पराग-कणों के योनिछिद्र तक पहुँचाने का काम जल करता है। पानी के ही भीतर उगने वाले पौधों में यह क्रिया अधिकांश होती है।

३. कीट-लब्ध-सेचन—यह सेचन-क्रिया ही सबसे उपयोगी होती है। अधिकांश फूलों में यही क्रिया होती भी है। इसमें योनिछिद्र तक परागकणों के पहुँचाने का काम तितलियाँ, चींटियाँ, मौन व भौंरे के समान नन्हे नन्हे कीट करते हैं।

इनके अलावा कभी कभी दूसरे जानवरों द्वारा भी सेचन-क्रिया में सहायता मिल जाती है। लेकिन उपर्युक्त तीन भेद ही सेचन-क्रिया के मुख्य माने जाते हैं। इनमें भी तृतीय भेद कीट-लब्ध-सेचन सर्वाधिक उपयोगिता रखता है। क्योंकि अधिकांश फूलों में इसी प्रकार का पर-सेचन होता है। इसमें मौन का स्थान अन्य सभी कीटों से विशेष रहता है। क्योंकि उसमें इसके लिये अनेकों विशेषतायें होती हैं, और वह सरलता व सफलतापूर्वक इस काम को कर सकती है।

मौन का शरीर इतना छोटा होता है कि वह सरलतापूर्वक प्रत्येक फूल में बैठ सकती है। साथ ही साथ उसका बदन बाल वाला भी होता है, जिससे किसी फूल के भी परागकण उसके शरीर पर सरलतापूर्वक चिपक जाते हैं। उसका भोजन प्रकृति से ही पराग व अमृत होने से उसे इसके सञ्चयार्थ पुष्पों में जाना पड़ता है। मौनागृह में मौनों की संख्या सहस्त्रों में होती है, और प्रत्येक मौन दिन में सैकड़ों पुष्पों में अमृत व पराग की खोज में जा बैठती है। इससे एक ही मौनागृह के मौनों द्वारा एक ही दिन में हजारों फूलों में सेचन-क्रिया सम्भव हो जाती है।

इन उपर्युक्त सभी बातों से स्पष्ट हो जाता है कि मौन की कृषि के लिए कितनी उपयोगिता है और हमारे जीवन में मौन का स्थान कितना महत्वपूर्ण है। सेचन-क्रिया में मौन के बराबर सहायक दूसरा कोई भी जीव नहीं हो सकता है। भारत सदृश कृषि प्रधान देश में मौनों का अभाव वास्तव में एक चिन्ता की बात है। एक ओर हम अन्नाभाव से पीड़ित हो रहे हैं, और दूसरी ओर बिना एक इन्च भी अधिक जमीन जोते, कृषि के उत्पादन को बढ़ाने वाले उपयोगी जीव को आज तक बिसराये बैठे हैं। अगर हमें सचमुच में उन्नति करनी है तो अन्न के लिए विदेशों का मुंह ताकना हमें छोड़ना होगा, और अन्नाभाव से मुक्ति पाने के लिये हमें मौन की सहायता अवश्य लेनी होगी। मौन मनुष्य का सबसे छोटा लेकिन सबसे बड़ा मित्र है। अगर हम मित्र से सहायता लेना ही न जानें या लेने की चेष्टा ही न करें, तो दोष हमारा ही होगा।

मौनों के द्वारा जिनकी पैदावार अत्यधिक बढ़ती है

नीचे कुछ फल, सब्जी व अनाजों के नाम दिये जाते हैं, जिनकी पैदावार की वृद्धि में मौन से बहुत बड़ी सहायता मिलती है:—

१. फल —सेब, खुरमानी, माल्टा, गलगल, नीबू, चकोतरा, अमरूद, आड़ू, नासपाती, अलूचा, अनार, अंगूर, खीरा।

२. शाक-भाजी—गोभी, गाजर, धनिया, मूली, प्याज, शलजम, कद्दू।

३. तिलहन—लाई, सरसों।

इन सब बातों के अलावा कुछ फल ऐसे भी होते हैं, जिनमें केवल पर-सेचन द्वारा ही फल लगने सम्भव होते हैं, जैसे बादाम, पपीता, चेरी आदि। इन फलों की पैदावार में मौन असाधारण रूप से वृद्धि कर सकती है।

अध्याय ३

भारत और मौनपालन

हमारा ही यह देश है जिसने सर्व प्रथम मौनों को पालने का प्रयत्न किया था, तथा शहद के गुणों का पता लगाया था। अब यह बात भी निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि हमारे देश की ही मौन सारे संसार में धीरे धीरे पहुँची। स्थान व आवश्यकता के अनुसार ही उसमें परिवर्तन आगये हैं। हमारे पूर्व पुरुष वैदिककाल से भी न मालूम कितने पहिले से मौन व मधु की उपयोगिता को जानने लग गये थे। लेकिन वर्षों व्यतीत होगये न तो हमारे मौनपालन के ढंग में ही कोई परिवर्तन आ सका और न हमारे मौन सम्बन्धी ज्ञान में ही कोई वृद्धि हो सकी। जबकि दुनियां हम से बहुत आगे बढ़ गई। उन्होंने लगातार अन्वेषण व अनुभव करते करते इसे वर्तमान वैज्ञानिक रूप दे दिया और इसे व्यवसायिक रूप देने में सफलता प्राप्त कर ली। आधुनिक वैज्ञानिक विधि से मौनपालन करना अत्यन्त लाभदायक है। आज इस ढंग के सम्मुख हमारा ढंग इतना पुराना व दोषपूर्ण हो गया है कि उसे मौनपालन कहना भी अनुचित प्रतीत होने लगता है।
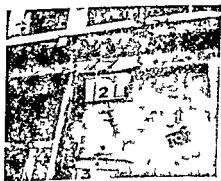
चित्र—५ नये व पुराने मौनागृह
१ दीवाल मौनागृह २ संदूक का मौनागृह
३ आधुनिक मौनागृह ४ तने का मौनागृह

भारतीय मौनपालन

सैकड़ों वर्ष पूर्व जिस प्रकार से मौनें रखी जाती थी, ठीक उसी प्रकार से हम उन्हें आज भी रखते जारहे है। उसमें परिवर्तन करने का ध्यान तक हम नहीं ला सके हैं। मिट्टी के घड़ा मे, लकड़ी के सन्दूकों मे, पेड़ के तनों के खोखलों में या दीवार के आलों म हम आज भी मौनो को रखते हैं। (चित्र ५) इनसे शहद प्राप्त करने के लिये मधुपूर्ण छत्तों को काट कर या तो निचोड़ लेते ह या उबाल लेते है या कपड़े में छान लेते है। जिससे हमको मैला व अशुद्ध शहद ही प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार मौनों को रखने मे अनेकों दोष है। जो निम्न दो भागों में विभक्त किये जा सकते है —

१ रखने के दोष—(अ) पुराने ढग के तिन आलों या बक्सा म मानें रक्खी जाती हैं, उनमें आधुनिक-मौनागृह की भाति चौखटा के निकालने व रखने की कोई भी व्यवस्था नहा होती है। जिससे मौनपाल किसी प्रकार भी मौनावश का निरीक्षण नहा कर सकता है। समय समय पर निरीक्षण न हो सकने से, मौनों की आवश्यकता व असुविधाओं की जानकारी न पाप्त कर सकने से मौनपाल किसी प्रकार भी उनके लिये सहायक नहीं हो सकता है।

(ब) इस प्रकार से रखी हुई मौनें एक ही छत्ते मे शहद व शिशुओं को भर देती हैं। इनसे शहद निकालते समय शहद तो अशुद्ध हो ही जाता है। साथ ही साथ छत्तों के काट दिये जाने से मौनों की आने वाली पीढ़ी का भी पूर्ण विनाश हो जाता है। जिससे मौनावश को बड़ी हानि पहुचती है। क्योंकि पुरानी मौनों का स्थान लेने के लिये नई मौनो का मौनागृह मे अभाव हो जाता है।

(स) शक्तिहीन मौनावशों को शक्तिशाली करने का कोई भी उपाय नहा किया जा सकता है। मालाना अनेकों बक्छुट निकल भागते हे। जिससे मौना वश शक्तिहीन हो जाता है और साथ ही साथ शहद के उत्पादन में भी कमी हो जाती है, क्योंकि जितनी ही शक्ति अविभाजित रहेगी और जितनी ही अधिक मौनें परिश्रम करने को मौनावश में होंगी उतना ही अधिक उत्पादन भी उनमें हो सकेगा। इसलिये मौना विज्ञान के ज्ञाता आजकल बक्छूटों का होना मौनपाल की अज्ञानता मानते हैं।

(ट) मौनावंश की गल्लायें न तो बांट कर बढ़ाई ही जा सकती हैं और न आवश्यकतानुसार मिला कर घटाई ही जा सकती हैं। ट

(ठ) किसी प्रकार की भी लड़ाई व लूट खसोट को रोकने का प्रबन्ध नहीं कर सकते हैं, न मौनों को उनके दुश्मनों से ही सफलतापूर्वक बचा सकते हैं।

(ड) मा-मौन सारे मौनावंश की प्राण होती है, उसका अच्छा होना व अपनी पूर्ण युवावस्था में ही मौनावंश में रहना मौनपाल के लिये लाभदायक होता है। वृद्धावस्था व कुमारावस्था में मा-मौन, कर्मठ-मौन के अन्डे देने की सामर्थ्य नहीं रखती है। मधु सञ्चय के हेतु कर्मठ मौन ही उपयोगी होते हैं, इसलिये चतुर मौनपाल मौनावंश में अधिक आयु की मा-मौन को नहीं रहने देते हैं। हमारे पुराने ढंग से मौनों का रखना में न तो हम मा-मौन की अवस्था की जानकारी ही रख सकते हैं और न उसके कार्य पर ही दृष्टि डाल सकते हैं। इसके अलावा हम उसके बदलने की भी व्यवस्था सरलता पूर्वक नहीं कर सकते हैं।

(ढ) कर्त्तव्यच्युत-कर्मठों को नष्ट करने की व्यवस्था नहीं की जा सकती है।

(ण) *मौनावंश, विशेष कर जो दीवार में होते हैं, स्थानान्तरित भी कठिनाई* से ही किये जा सकते हैं।

(त) पुरुष-मौनों को आवश्यकतानुसार नष्ट नहीं किया जा सकता है।

(थ) मा-मौन के उत्पादन का काम असम्भव हो जाता है।

(द) मौनें अपने मन अनुसार छत्त बना डालती हैं। जिनमें वे पुरुष-मौनों की कोठरियां अधिक बना देती हैं। इससे पुरुष मौनों का उत्पादन भी बढ़ जाता है। पुरुष-मौन मौनपाल के लिये अधिक उपयोगी नहीं होते हैं, इसलिये इनकी पैदावार पर रोक लगाना मौनपाल के लिये आवश्यक हो जाता है। पुराने ढंग से मौनें रखने में हम न तो पुरुष मौनों के जन्म पर ही रोक लगा सकते हैं, और न उनको नष्ट करने का ही प्रबन्ध कर सकते हैं।

(ध) मौनों की जाति में सुधार करने की क्रियायें नहीं अपनाई जा सकती हैं।

(न) बहुत छोटे होने के कारण इनका मधु-उत्पादन भी बहुत कम रहता है और आधुनिक मौनागृहों की भांति ये घटाये बढ़ाये भी नहीं जा सकते हैं।

(द) शहद निकालते समय छत्ते काट दिये जाने से मौनों को पुनः छत्ते बनाने पड़ते हैं, इसमें उनका बहुत सा समय नष्ट हो जाता है, मौनें १० से १५ पौन्ड तक शहद खाकर १ पौन्ड छत्ता तैयार करती हैं। इस प्रकार मौनपाल को दोहरी हानि उठानी पड़ती है। एक ओर तो मौनें नया छत्ता बनाने में पुराने संचित कोष को समाप्त कर डालती हैं, नया मधु संग्रह करके नहीं रख पाती हैं तथा उनका जो समय अतिरिक्त मधु-संग्रह में लगना चाहिये था, वह छत्ते बनाने में ही नष्ट हो जाता है।

(य) मधु उत्पादन में वृद्धि करने की कोई भी विधियां नहीं अपनाई जा सकती हैं, न हम एक से अधिक मा मौना को ही एक बार में प्रयोग कर सकते हैं और न अमृतभाव के पूर्व के करने के कामों को ही कर सकते हैं।

२. निकालने के दोष—पुराने ढग से मौनें पालने में जो दोष हैं, वे कुछ ऊपर लिखे जा चुके हैं। इनके अतिरिक्त भी अन्य अनेकों दोष व असुविधायें इस विधि में होती हैं। अब हम उन दोषों को लिखते हैं, जो पुराने ढग की विधि से शहद निकालने की क्रिया में होते हैं।

(अ) छत्ता, अन्डे-बच्चे, शहद, केशर व मौनों का बहुत नाश हो जाता है।

(ब) शहद मैला, अशुद्ध, सुगन्ध व स्वाद रहित ही मिल पाता है। जिसका शहर में बहुत ही कम मूल्य मिलता है। (चित्र ६)

(स) मोम जो बहुत ही मूल्य वान पदार्थ होता है, बिल्कुल ही नष्ट कर दिया जाता है।

(द) उबाल कर शहद निकालने से उसके पौष्टिक-तत्व प्राय. नष्ट हो जाते हैं।

इन उपर्युक्त दोषों से व असु-विधाओं से यह बात स्पष्ट हो जाती

चित्र—६ शहद निचोड़ कर निकालना

है कि हमारे लिये मौनपालन की आधुनिक-वैज्ञानिक विधि को अपनाना नितान्त आवश्यक होगया है। यह नवीन विधि उपर्युक्त सभी दोषों से मुक्त है। तथा इस विधि से शहद का उत्पादन कई गुना बढ़ाया भी जा सकता है।

भारत में वैज्ञानिक मौनपालन

वैज्ञानिक मौनपालन का प्रारम्भ हमारे देश में बहुत पहले से हो चुका है। अन्य नवीन उद्योगों की भांति इसके प्रारम्भ करने वाले भी अंग्रेज ही थे।

सर्व-प्रथम वैज्ञानिक रीति से भारत में मौनपालन करने का श्रेय श्री जे० सी० डौगलस नामक एक अंग्रेज को है। यह भारत में पोस्ट व टेलीग्राफ विभाग के अधिकारी थे। इन्होंने अपने अनुभव सन् १८८४ में "हैन्ड बुक ऑफ बी-कीपिंग फौर इन्डिया" के नाम से प्रकाशित किये थे।

इन्हीं की भांति लगभग ६० वर्ष पूर्व दक्षिण भारत के तिरुवनापल्ली नामक स्थान पर पादरी यस० सी० न्यूटन ने इस क्षेत्र में अपने प्रयत्न प्रारम्भ किये थे। उन्होंने भी अपने अनुभव सन १९१६ में भारत के कृषि विभाग की पत्रिका में प्रकाशित किये थे। दक्षिण भारत में आज भी इन्हीं के नाम से एक मौनागृह प्रचलित है, जिसे न्यूटन मौनागृह कहा जाता है।

ठीक इसी समय उत्तर भारत में श्री यफ० यस० कजिन नामक व्यक्ति ने इस हेतु प्रयत्न किया। इन्होंने भी अपने अनुभवों को "ए गाइड टू सक्सेसफुल बी-कीपिंग इन दी हिली डिस्ट्रिक्ट ऑफ नौर्दन इन्डिया" नाम से प्रकाशित किया।

सन् १९१३ में शिमला मौनपाल संघ स्थापित हुआ और "बी-कीपर्स रिकॉर्डस्" नामक मासिक पत्रिका भी प्रकाशित की गई, लेकिन ये दोनों ही आज से बहुत वर्ष पूर्व समाप्त होगये। इसके बाद सरकार की ओर से भी इस हेतु प्रयत्न किये जाने लगे। "इम्पीरियल एन्टोमोलॉजिस्ट विभाग" ने इस विषय पर अन्वेषण प्रारम्भ कर दिये।

पादरी न्यूटन के काम से प्रभावित होकर ट्रावनकोर राज ने श्री सी०आर० थौम्सन को इस हेतु नियुक्त किया। प्रथम उन्होंने श्री न्यूटन से ही इस विज्ञान को सीखा और बाद को सन १९३६ के लगभग वे इस हेतु आस्ट्रेलिया भी

गये। इन्हीं के सुप्रयास से आज ट्रावनकोर राज में मौनपालन का धंधा विस्तृत रूप से फैल चुका है। इसके बाद वाई० यम० सी० ए० ने मद्रास प्रान्त के मार्टेन्डम नामक स्थान पर इसकी शिक्षा देनी भी प्रारम्भ कर दी।

आज दक्षिण भारत में यह धन्धा एक विस्तृत रूप में फैल चुका है। सैकड़ों मौनागृह आज वहां पर मधु-उत्पादन के हेतु रखे गये हैं। मद्रास, बम्बई, मैसूर व ट्रावनकोर राज्यों में यह धंधा एक विशाल क्षेत्र में फैल चुका है, अनेकों सहकारी-समितियां इस हेतु स्थापित की जा चुकी हैं और अनेकों स्थानों पर इस विषय की शिक्षा देने का प्रबन्ध भी किया जा चुका है।

उत्तर भारत में पंजाब सरकार ने सर्व प्रथम इस ओर ध्यान दिया। वहां नगरौटा (कांगड़ा), रैसुन (कुलू) में राजकीय मौनालय स्थापित हैं।

कांग्रेस के प्रथम मन्त्रीमंडल काल में उत्तर प्रदेश की सरकार का ध्यान भी इस ओर गया। सन् १९३८ में थोड़ी सी पूंजी से एक राजकीय मौनालय जिला नैनीताल के ज्योलीकोट नामक स्थान पर स्थापित किया गया और वहां पर इस विषय की शिक्षा देने का प्रबन्ध भी किया गया (चित्र ७)। श्री राजेन्द्रनाथ मुट्टू जी को अवैतनिक रूप से इस मौनालय का संचालक नियुक्त किया गया।
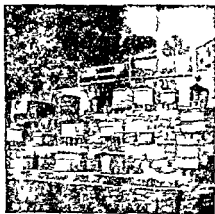
चित्र—७ ज्योलीकोट मौनालय का एक भाग

आपकी सेवायें इस धंधे व इस मौनालय के हेतु सराहनीय हैं. आपही के सुप्रयत्न से सबसे पीछे स्थापित किये जाने पर भी ज्योलीकोट का केन्द्र आज सबसे श्रेष्ठ माना जाने लगा है। वास्तव में इस क्षेत्र में आपके आविर्भाव ने एक नये युग का प्रारम्भ किया है। आपने ही

देश के कोने कोने में बिखरे मौनपालों को संगठन-बद्ध करने का प्रयत्न किया और सन् १९३७ में "अखिल भारतीय मौनपाल संघ" की नींव डाली। "इन्डियन बी जरनल" नामक पत्रिका का प्रकाशन १९३९ से प्रारम्भ किया। तब से आज तक आपही इस पत्रिका का अवैतनिक सम्पादकत्व का पद सम्हाले हैं।

आज भारत में मौनपालन का धन्धा सुव्यवस्थित हो चला है, भारतीय मौनपाल संगठन बद्ध हो चुके हैं। राज्य व जनता तक अपनी आवाज पहुंचाने के लिये उनके पास अपनी पत्रिका है। आज भले ही हमारे देश में मौनपालन अपनी शैशवावस्था पर ही हो, लेकिन वह प्रत्येक बात में देश व विदेश से आकर्षण प्राप्त करने लगा है। वास्तव में अब भारत में मौनपालन एक नये युग में प्रवेश कर रहा है। शैशवावस्था समाप्त हो चुकी है, कुमारावस्था चल रही है। यौवन उसका अभी से दिखाई देने लगा है। इसका सारा श्रेय भी मुट्टू जी को ही जाता है। भले ही उनकी सेवाओं का मूल्यांकन हम आज पूर्ण रूप से नहीं कर पा रहे हैं, लेकिन एक समय अवश्य आवेगा, जबकि उनका स्थान किसी भी बड़े राजनैतिक नेता से कम नहीं माना जावेगा, कोई आश्चर्य नहीं तब शायद हमारी वर्तमान पीढ़ी को इस लाञ्छन से भी मुक्त नहीं किया जावेगा, कि हमने उनका समुचित आदर न करके देश का बहुत भारी अनहित किया।

मौनपालन के लिये आपकी सब ही सेवायें अवैतनिक हैं। आपका "भूटेन ऐपियरीज" नामक अपना निजी मौनालय है। जो जिला नैनीताल के रामगढ़ नामक स्थान पर स्थापित है।

अब प्रत्येक प्रदेशीय सरकारें इस धन्धे की उपयोगिता को समझने लगी हैं, और इसके विकासार्थ प्रयत्न करने लगी हैं। आशा की जाती है कि आने वाले दस वर्ष इस धन्धे को पूर्ण उन्नत अवस्था में पहुंचा देंगे।

भारत मे मौनपालन के लिये क्षेत्र

मौनपालन के धन्धे के लिये अभी सारा क्षेत्र हमारे देश में खाली पड़ा है। अमेरिका के पास इस समय ५० लाख तक मौनागृह हैं, और रूस के पास ६० लाख के लगभग हैं। लेकिन हमारे देश में यह संख्या अभी तक कठिनाई

से चालीस हजार तक ही पहुँच पाई है। अमेरिका प्रतिवर्ष ३० से ३५ करोड़ रुपये तक का शहद उत्पादन करता है। इन सब बातों से स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है कि भारत जैसा विशाल कृषि प्रधान देश में मौनपालन का धन्धा कितना पनप सकता है। हम अभी कितने पिछड़े हैं और हमारे लिये कितना करने को बाकी पड़ा है।

अध्याय ४
मौन-पालन प्रारम्भ करना

मौन पालन एक ऐसा धन्धा है जिसे हम बड़े व्यापारिक पैमाने पर और कुटी व्यवसाय के रूप में, दोनों प्रकार से कर सकते हैं। कुटी व्यवसाय के रूप में करने के लिए सबसे बड़ी बात इसके पक्ष में यह है कि इस धन्धे को कभी भी यन्त्रों की प्रतिद्वन्द्विता में आकर हार खाने का भय नहीं हो सकता है। यन्त्र इसके सम्मुख प्रतिद्वन्द्वी बन कर कभी भी उपस्थित नहीं हो सकता है, अन्य दूसरे जितने भी कुटी व्यवसाय हैं, शायद वे सब बिना राजकीय सरक्षण के इस यन्त्र युग में यन्त्रों के सामने नहीं टिक सकते हैं।

इस समय देश की परिस्थितियां इस धन्धे को कुटी-व्यवसाय के रूप में ही अपनाने के लिए अनुकूल भी हैं। व्यापारिक रूप में इसे अपनाने के लिए उचित ज्ञान व सामान के प्राप्त करने के साधनों का अभी अभाव है। मेरे ध्यान से तो अगर किसी का लक्ष्य इससे व्यापारिक पैमाने पर करने का भी हो, तब भी उसको प्रारम्भ छोटे रूप से ही करना चाहिये। प्रारम्भ के लिए दो मौनागृह भी कम नहीं हैं। इससे कममें प्रारम्भ भी नहीं करना चाहिये। ज्ञान के बढ़ने के साथ ही साथ इसके विस्तार में भी वृद्धि की जा सकती है।

कोई इसको किसी रूप में भी प्रारम्भ करे या करने की इच्छा रखे, निम्नलिखित तीन बातों पर ध्यान देना उसके लिये सर्व प्रथम आवश्यकीय है।

(१) साहित्य

बिना उचित ज्ञान के कोई भी व्यवसाय नहीं पनप सकता है फिर मौन पालन तो एक पूरा विज्ञान है। मौनावंश जिसमें हजारों की संख्या में जीवित प्राणी रहते हैं, जो मनुष्य की तरह से न तो बोल ही सकते हैं और न लिख ही सकते हैं, किस भांति बिना उचित अनुभव के नियन्त्रित किये जा सकते हैं।

अमरिका में मौनपालन की शिक्षा

एक अमरिकन मौनालय

दूसरा अमरिकन
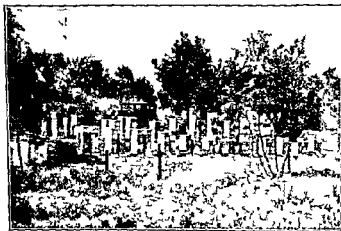
एक भी मौनागृह रखने से पूर्व इस विज्ञान का कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेना अति आवश्यकीय है। यह दो प्रकार से प्राप्त किया जा सकता है। अगर वह अंगरेजी जानने वाला है तो इस विषय के साहित्य का अध्ययन कर लेवे, क्योंकि अभी तक हमारी भाषा में इस विषय पर साहित्य उपलब्ध नहीं है, और अगर अपढ़ है या अंगरेजी जानने वाला नहीं है तो किसी ट्रेनिंग सेन्टर में जाकर इसका ज्ञान प्राप्त कर लेवे या किसी अनुभवी मौनपाल के संरक्षण में काम प्रारम्भ करे।

अंगरेजी जानने वाले के लिए निम्नलिखित पुस्तकों का अध्ययन अति उपयोगी है।

१ ए बी-सी एन्ड एक्स वाइ जेड आफ बी-कल्चर।
२ हाइभ एन्ड दी हनी बी।
३ स्वार्मिंग राइट विद बीज।
४ इंडियन बी जनरल।
५ रोमान्स आफ साइन्टीफिक बी कीपिंग।

इनके पढ़ने के बाद भी अध्ययन सदा आरम्भ रहना चाहिये। विशेष कर विदेशी मासिक पत्रिकाओं का, जिनमें अनुभवी मौनपालों के अनुभव छपते रहते हैं। जिनके कुछ नाम नीचे दिये गये हैं।

१ अमरिकन बी जनरल—अमेरिका
२ ग्लिनीग्स इन बी कल्चर—अमरिका

इनके अलावा ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अफरीका आदि प्रत्येक देश से इस विषय पर मासिक पत्रिकायें प्रकाशित होती हैं।

(२) मौनागृह

साहित्य के बाद जो दूसरी वस्तु विशेष ध्यान देने की नये मौन पाल के लिये होता है, वह है मौनागृह का चुनाव। एक भी मौनागृह रखने से पूर्व उसे समझ कर तय कर लेना चाहिये कि वह कौन सा मौनागृह प्रयोग में लावेगा। ताकि बाद को बदलने का झंझट न उठाना पड़े। मौनागृह का चुनाव करने के लिये किन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

१. यही मौनागृह प्रयोग में लाने की चेष्टा करें जिसे उस स्थान के पुराने मौनपाल प्रयोग में ला रहे हों। ताकि उनसे अन्य सहायक सामान प्रयोग करने को मिल सके।

२. भिन्न भिन्न नाप के मौनागृह प्रयोग में न लावें, अन्यथा उनका सहायक-सामान भी भिन्न भिन्न प्रकार का ही लेना होगा।

३. जब तक मौनागृह के बारे में सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी नहीं हो जावे, स्वयं मौनागृह बनवा कर प्रयुक्त करने की इच्छा न करें।

४. कभी भी प्रारम्भ में एक बार ही अधिक मौनागृह न खरीदें। एक-दो मौनागृहों से प्रथम पता लगा लेवें कि उस स्थान के लिये कौनसा मौनागृह उपयुक्त हो सकता है।

५. मौनागृह हमेशा अच्छा, अच्छे स्थान का बना हुआ ही खरीदें। दो-चार रुपये के लोभ में अजानकार लोगों का बनाया हुआ मौनागृह न खरीदें।

प्रचलित मौनागृह—आजकल हमारे यहां दो मौनागृह अधिक प्रचलित हैं।

१. ज्योलीकोट-लैंगस्ट्राथ मौनागृह।

२. ज्योलीकोट मिलेजर मौनागृह।

अगर स्थान ऐसा है, जहां मौनें बहुतायत में पाई जाती हैं या जहां वन्य-पुष्पों की बहुलता है तो प्रथम ज्योलीकोट लैंगस्ट्राथ मौनागृह प्रयोग में लाना चाहिये। यह अमेरिका के लैंगस्ट्राथ-मौनागृह के बराबर होता है। अन्यथा द्वितीय मिलेजर मौनागृह ही उपयुक्त होता है।'

अच्छे मौनागृह की विशेषतायें—मौनागृह की नाप का निश्चय कर लेने के बाद दूसरी बात ध्यान देने की उसकी बनावट है। अगर मौनागृह सही प्रकार से नहीं बना होगा तो वह भी लाभदायक नहीं हो सकता है। अच्छे मौनागृह में जो विशेषतायें होनी चाहिये वह निम्न प्रकार हैं.—

१. मौनपाल के लिये—मौनपाल के लिये मौनागृह में नीचे लिखी विशेषताओं का होना अति आवश्यक है।

(अ) उसकी नाप पूर्णत: सही हो। उसके जोड़ इस भांति मिले हों कि

हवा व प्रकाश अन्दर न घुसने पावें। उसमें हाथ से पकडने के कुन्डे लगे हों। आवागमन मार्ग ऐसा बना हो कि आसानी से घटाया बढाया जा सके।

(ब) वह हल्का हो ताकि आसानी से इधर उधर हटाया जा सके। वह उस स्थान के अन्य मौनपालों द्वारा भी प्रयुक्त किया जाता हो। उसका सहायक सामान सरलता से मिल जाता हो।

(स) वह आसानी से घटाया बढाया जा सके और आसानी से बनाया जा सके।

२ मौन के लिये—मौनों की सहूलियत के लिये मौनागृह में निम्न प्रकार की विशेषतायें होनी चाहिये —

(अ) उसकी लकड़ी सडने वाली, फूलने वाली, ऐंठने वाली, सिकुडने वाली, फटने वाली तथा पानी पीने वाली न हो। वह सूखी हो तथा रन्दे से चिकनी हो जाने वाली हो।

चित्र ८—दूरान्तर

(ब) वह पूर्ण रूप से सही बना हो। सब कोण उसके गुनिये से सही हों। जोड ठीक मिले हों। हवा के लिये उसमें उचित प्रबन्ध हो। उसकी लकड़ी न तो बहुत मोटी हो ही और न बहुत पतली। ताकि बाहरी सरदी व गरमी का असर एक दम भीतर न पड़ सके। आजकल ७ सूत लकड़ी इसके लिये उपयुक्त मानी जा रही है।
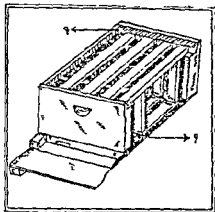
(स) उसमें दूरान्तर सही बना हो। यह अति आवश्यक वस्तु ध्यान देने की है। दूरान्तर दो सूत सही होना चाहिये। (चित्र ८)

(३) मौन

नये मौनपाल के लिये अब तीसरी वस्तु ध्यान देने की मौन है। मौन

दर् क्या से लाने व कौन सी मौन उनके लिये लाभदायक हो सकती है। इसे जानना भी अति आवश्यक है।

यों तो विदेशी मौनों के सामने हमारे भारत के प्रत्येक स्थान की मौनें अभी तक कम परिश्रमी ही सिद्ध हुई हैं। लेकिन फिर भी हमारे देश के मौनपालों ने अपने अनुभव से निश्चय किया है कि वह बाहर से मौन मँगाने के स्थान पर देश की ही मौनों में सुधार करने की चेष्टा करेंगे। विदेशों की मौनें जहां अच्छा काम करने वाली होती हैं, वहां भयकर से भयकर बीमारियों द्वारा भी ग्रसित होने वाली होती हैं। जब कि भारतीय मौन अभी तक किसी प्रकार की भयकर बीमारी से ग्रसित नहीं हैं। दूसरा देश की आर्थिक स्थिति भी विदेशों से मौनें मँगाने के अनुकूल नहीं है।

हमारे देश में प्रत्येक स्थान की मौनें अपनी विशेषतायें रखती हैं। उनमें अन्वेषण करने की आवश्यकता है। अभी तक हिमालय की तलहटी में रहने वाली पर्वतीय मौन सबसे अच्छी सिद्ध हुई है। इसका सालाना मधु उत्पादन औसतन २० से २५ पौन्ड प्रति मौनावंश तक पहुँच चुका है। यह नाप में भी कुछ बड़ी होती है। इसलिये अगर इसी मौन से मौनपालन प्रारम्भ करने की चेष्टा करें तो उपयुक्त होगा। अन्यथा अभी तो आसानी से मिल सकने वाली प्रत्येक भारतीय मौन उपयुक्त ही है। कुछ भी न होने से तो यह भी उत्तम है।

मौनें प्राप्त करने के साधन—अब प्रश्न उठता है हम मौनें कहां से प्राप्त करें। विदेशों में यह प्रश्न इतना जटिल नहीं होता, क्योंकि वहां व्यापारी मौनपालों से डाक द्वारा आप जितनी भी मात्रा में मौनें प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन हमारे लिए अभी यह सवाल विचारणीय है, क्योंकि हमारे यहां अभी न तो ऐसे मौनपाल ही हुए हैं जो मौनों का व्यापार करते हैं और न ऐसे साधन ही राज्य की ओर से उपलब्ध हैं कि मौनें एक स्थान से दूसरे स्थान को सरलता से व सुरक्षित रूप में भेजी जा सकें।

इस समय हम मौनें निम्नांकित ढंग से प्राप्त कर सकते हैं —

१ पूर्वस्थापित मौनावंश—किसी अपने सहयोगी मौनपाल से मौनों सहित मौनगृह खरीद लेवें और उसी से बढ़ाने की चेष्टा करें।

२. दीवाली आले या सन्दूक के जाले—पुराने ढग से मौनें रखने वालों से मौनें खरीद कर उन्हें नये मौनागृह में बदल लेवें। ये मौनें दीवाल के जालों में, सन्दूकों में या पेड के तनों मे मिल सकती हैं। इन जालों से विभाजन द्वारा भी मौनावंश बनाये जा सकते हैं।

३. जगली मौनावंश—जगलों में अक्सर मौनें पेड या चट्टानों पर घर बना कर रहती हैं, उनका पता लगा कर उन्हें आधुनिक मौनागृह में बदल लेवें।

४. वक्छुट—फाल्गुन या चैत में जब कि मौनों का वकछुट काल होता है मौनों का झुण्ड बैठा हुआ या उडता हुआ मिल सकता है, उन्हे पकडकर मौनागृह में रख सकते हैं।

मौन-पालन क्यों करना चाहिए

अब विचारणीय प्रश्न यह होता है कि हमें मौन-पालन क्यों करना चाहिए। नीचे लिखे कारणों से इस समय देश के लिए मौन पालन अति आवश्यक है:—

१. इस समय खाद्यान्न की कमी है। मौनें कृषि की पैदावार बढाने में सहायक होती हैं। यही एक ऐसा धन्धा है जो बिना अधिक भूमि जोते हुए खाद्यान्न के उत्पादन को बढाता है।

२. इस समय देश में पौष्टिक खाद्यों की कमी है। शहद मे ७५ प्रतिशत फलों की चीनी विद्यमान रहती है। अगर एक दो चम्मच शहद प्रति दिन मनुष्य को खाने को मिल सके तो उसे अपने स्वास्थ्य के गिरने का भय नहीं हो सकता है। प्रत्येक मनुष्य अगर उद्यम करे तो अपने खाने के लिए तो शहद पैदा कर ही सकता है।

३. महगाई ने बुद्धि जीवी मध्यम श्रेणी के लोगों की हालत बहुत बुरी कर दी है। यही एक धन्धा उनके लिए हो सकता है जिसे वे कम पैसे से कम से कम समय देकर अपने पेशे के साथ ही साथ कर सकते हैं।

४. एक मात्र यही एक व्यवसाय हो सकता है जिसमें बिना किसी का शोषण किये हुए, बिना मानव धर्म को क्षति पहुँचाए हुए आर्थिक लाभ व पौष्टिक खाद्य की प्राप्ति हो सकती है। तथा साथ ही साथ देश सेवा का भी

गौरव प्राप्त हो सकता है। इसलिए ही अमेरीका में इस धन्धे को सज्जनों का पेशा कह कर पुकारते हैं।

मौनावंश को बसाना—जब उचित साहित्य का अध्ययन करके मौनपालन का ज्ञान प्राप्त हो जावे, मौनों की व्यवस्था हो जावे तथा मौनागृह व इस सम्बन्धी आवश्यक सहायक सामान प्राप्त कर लिया जावे तब प्रश्न उठता है मौनों को किस प्रकार के मौनागृह में बसाया जावे। यह अत्यन्त आवश्यक व विचारणीय प्रश्न होता है। मौनों को मौनागृह में बसाने के लिए पहिले निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये। मौनागृह प्रत्येक प्रकार से पूर्ण है या नहीं। दूसरा मौनागृह कहां रखा जावेगा।

मौनागृह की तैयारी—मौनागृह की तैयारी से मतलब होता है कि मौनों को मौनागृह में काम करने के लिए प्रत्येक आवश्यक व्यवस्था उसमें कर दी गई है या नहीं। इसमें प्रधानतः दो काम आते हैं। प्रथम चौखटों पर तार लगाना और दूसरा उन पर छत्ताधार लगाना।
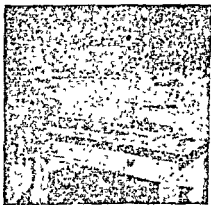
चित्र—: तार लगाना

तार लगाना—(चित्र ६) मौनागृह के शिशुकक्ष व सहकक्ष मे रखे चौखटों पर तार लगा देना छत्तों की सुरक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक होता है। जैसा कि मौनें इन्हीं चौखटों पर छत्ते खींचती है, और ये चौखट निरीक्षण के समय यदा क-ा बाहर निकालने पडते हैं। मधु, पराग व शिशुओं से पूर्ण होने पर ये इतने भारी होते हैं कि चौखट के तनिक से आगे व पीछे झुका दिये जाने पर अपने ही बोझ से टूट पड़ते हैं। जिससे छत्ते व मौनों की बरबादी तो होती ही है, साथ ही साथ मौनों का अच्छी प्रकार निरीक्षण भी नहीं किया जा सकता है। इसी खतरे से बचने के लिए चौखटों

पर तार लगा देना अति आवश्यक हो जाता है। मौनें इस प्रकार से छत्ता सींचती हैं कि यह तार छत्ते के भीतर दब जाता है जिससे छत्ता दृढ होकर प्रत्येक प्रकार के हिलने डुलने व झटके आदि के समय में सुरक्षित रह जाता है।

तार लगाने के लिए चौखट के दाये व बाये सिरे के दोनों खड़े डन्डो पर इनमे से बराबर बराबर दूरी पर दो या तीन छेद बीचों बीच बना देने चाहिये। मिलेजर व न्यूटन नाप में दो दो छेद ठीक रहते हैं जब कि लैंगस्ट्राथ आदि बड़े मौनागृहों में तीन तीन छेद किये जाते हैं। चौखट के एक सिरे पर के खड़े डंडे के कम चपटे भाग पर ठोक छेद की सीध मे दो छोटी कीलें आधी ठोक दी जाती हैं और अगर छेद तीन किये गये हो तो एक कील दाहिनें डंडे पर दूसरी ठीक उसके विपरीत दूसरे डंडे पर एक ऊपर के छेद की सीध मे और दूसरी नीचे के छेद की सीध मे ठोक दी जाती हैं। तार को इन छेदों में डालकर, उसके दोनों सिरो को इन कीलों पर मोड कर बाध दिया जाता है। पहिले एक सिरे को एक कील में मोड़ कर कील पूरी ठोक दी जाती है फिर उसे पिलास से खूब कस कर दूसरी काल पर मोड कर कील को ठोक दिया जाता है और तार को तोड कर अलग कर दिया जाता है।
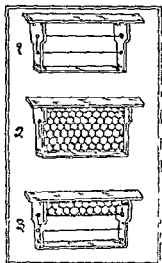
चित्र—१०
१ तारलगाना २. पूर्णछत्ताधार
३ प्रारम्भिक छत्ताधार

छत्ताधार लगाना—अब दूसरा काम छत्ताधार को चौखट पर लगाने का होता है। छत्ताधार दो प्रकार से लगाया जाता है। सहकक्ष के चौखटों पर पूरे चौखट पर इसे लगाया जाता है जब कि शिशु-कक्ष मे केवल प्रारम्भिक छत्ताधार लगा देना ही ठीक रहता है क्योकि सही नाप का छत्ताधार अभी हमारे देश मे प्राप्य नही है। गलत नाप के छत्ताधार में शिशु-पालन का काम ठीक नहीं चल पाता है। केवल १", १॥" का प्रारम्भिक छत्ताधार देने मे बाकी छत्ता मौनें अपने आप सही नाप का बना लेती हैं। (चित्र१०)

यह छत्ताधार यन्त्र द्वारा मोम का बनाया हुआ एक प्रकार की छत्ते की बुनियाद होती है। (चित्र ११) यह किसी मौनालय से मोल ली जा सकती है। जैसा कि छत्ता का ठीक चौखट के बीचों बीच लगाना आवश्यक होता है, बिना छत्ताधार के मौनें छत्ते चौखटे के बाहर भीतर भी लगा देती हैं, जो चल-चौखट-युक्त मौनागृह की सारी उपयोगिता को समाप्त कर देता है। इस छत्ताधार के लगा देने से मौनों को ठीक इसी के ऊपर कार्य करना आवश्यक हो जाता है। इस छत्ताधार में कोठरियों की बुनियाद या छाप सी बनी रहती है। मौनें उन्हीं को पूरा करके छत्ता बना लेती हैं।

चित्र—१२ छत्ताधर का एक नाव

छत्ताधार लगाने के लिये पहले चाकू से छत्ते को ठीक चौखट के भीतरी नाप का, काट लेना चाहिये। यह काम एक समतल तख्ते पर छत्ताधार के ताव को रख कर उसके ऊपर चौखट को रख कर किया जा सकता है या पटरी से भी नापकर किया जा सकता है।

छत्ता सही नाप का काट लिया जाने पर उसे चौखट के बीचों बीच तार के सहारे खड़ा कर लिया जाता है। (चित्र १२) फिर पिघला हुआ मोम चम्मच से छत्ते के दोनों ओर इस प्रकार डाल दिया जाता है कि छत्ताधार चौखट पर जुड़ जावे। इसके लिये चौखट को थोड़ा ऊपर से नीचे को ढलवा पकड़ना उपयुक्त होता है ताकि चम्मच से पिघला मोम डालते ही वह अपने आप बह कर नीचे को छत्ते व चौखट के सहारे चला आवे। इसके बाद एक पटले पर चौखट को रख कर घिर्री से तार को छत्ते पर दबा देना ठीक रहता है और तार को दबा कर पिघले मोम से दो तीन स्थान पर जोड़ देना चाहिये। घिर्री न मिलने पर पैसे

से भी यह काम किया जा सकता है । (चित्र १३) नीचे का पटला इसके लिये ठीक चोखट की भीतरी नाप का ही होना चाहिये और उस पर छत्ते को रख कर पैसे को हाथ से दबा कर तार के ऊपर घुमाते हुए एक सिरे से दूसरे सिरे तक चला जाना चाहिये । इस प्रकार तार छत्ताधार में इब जायगा और उसे हटने से रोकने के लिये दो तीन स्थान पर पिघले मोम से चिपका देना चाहिये ।

चित्र—१३ छत्ताधार चौखट पर लगाना

अगर हमने किसी पुराने वंश को बदलना हो तब हमें यह छत्ताधार लगाने की आवश्यकता नहीं रहती है क्योंकि तब इस पुराने वंश से कितने किन्नाये पूर्ण छत्ते मिल जाते है । यही चौखटों पर बांध दिये जाते हैं । बिलकुल नये वंश को बसाने के लिये छत्ताधार लगाना आवश्यक होता है ।

मौनावंश बसाना— जब उपर्युक्त काम हो जावे तो उपयुक्त समय में मौनावंश को इस नये गृह में बसाने की कोशिश करनी चाहिए । पुराने वंशों से बदलने के लिए दिन में वह समय जब कि धूप खिली हो, उपयुक्त होता है । बकछूट या ठरछूट के लिए सन्ध्याकाल ठीक रहता है । मौनावंश को बसाने के लिए मौनागृह को पहले उसके स्थान पर ले जाना चाहिये । फिर उसे खोल कर आवश्यकतानुसार विधि प्रयुक्त करके मौना मौ उसमें छोड़ देना चाहिए । बकछूट की मौनों को अनेक प्रकार से मौनागृह में बसाया जा सकता है । चतुर मौनपाल मौनागृह के द्वार दंड को हटाकर प्रवेशक पट के सहारे किसी चौड़े पटले को खड़ा करके उसमें अजगर बिछाकर मौनों को भाड़ कर भी यह काम करते हैं । जैसा कि मौनों का स्वभाव नीचे से ऊपर को बढ़ने का होता है । पटले पर भाड़ दिये जाने से वे प्राकृतिक रूप से ऊपर को चढ़ती है और बढ़ते बढ़ते उनको पूर्ण रूप से घुसा

द्वार मिल जाता है और वे उसके भीतर जाने लगती हैं, यह काम सन्ध्याकाल को किया जाता है। इस समय मौना म उड़ कर जाने से घर में आने की स्वाभाविक प्रेरणा रहती है। इसमे वे भीतर घुस कर मौनामण्डल बना लेती हैं। नये मौनपाल को इस विधि से काम नहीं लेना चाहिए। उसके लिए सबसे उत्तम विधि यह होती है कि तलपट के ऊपर पहले एक चौखट रहित वाली मधुकक्ष या शिशुकक्ष रख लेना चाहिये। उसमें टोकरी या थैली जिसमें भी मौनें पकड़ी गई हों, खुला मुह ऊपर को करके मय थैली या टोकरी के रख दी जानी चाहिये और इस कक्ष के ऊपर दूसरा असली छत्ताधार पूर्ण-चौखटा सहित कक्ष, मय ढक्कन के रख देना चाहिये। रात मे मौनें टोकरी या थैली से निकल कर ऊपर छत्ताधार वाले चौखटों पर
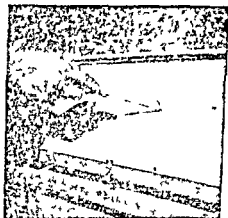
चित्र—१२ थैली का प्रयोग

चढ जायेंगी। उनके ऊपर चढ जाने पर टोकरी थैली व रिक्त कक्ष हटा दिया जा सकता है। टहनी आदि पर बैठी मौनों को भी इस प्रकार बसाया जा सकता है। अन्य दूसरी विधिया भी आवश्यकतानुसार प्रयुक्त की जा सकती हैं। अन्यत्र दकछूट वाले अध्याय मे ये सब विधिया विस्तार पूर्वक दे दी गई हैं।

बसाने के बाद ध्यान देने की बातें

मौनों को मौनागृह में बसा लेने के बाद अनेकों काम करने आवश्यक होते हैं। जिनमे मुख्य निम्न प्रकार हैं.—

मौनागृह को किसी दृढ चौकी पर समतल रूप से स्थित कर देना चाहिए। ऊपर से किसी भारी पत्थर से दबा देना भी आवश्यक रहता है।

मौनागृह बसाते समय ध्यान रखना चाहिये कि मौनागृह कहीं ऐसे स्थान

पर न रख दिया जावे, जहाँ धूप न आती हो या बच्चों के काटे जाने का खतरा हो या सामने से आम रास्ता जाता हो। किसी एकान्त स्थान में जहाँ दिन में अधिक से अधिक धूप रहती हो, जो जमीन से बहुत ऊँचाई पर भी न हो और हो सके तो वह दक्षिण पूर्व की ओर खुला हो तो सबसे उपयुक्त होता है।

मौनावंश बसाने के बाद देख लेना चाहिए कि मौनों ने कितने चौखटों को घेर पाया है। अगर मौनें कम हों, पूरे चौखट को न घेर सकती हों तो पटला लगा कर मौनागृह को उन्हीं की शक्ति के अनुसार सकीर्ण कर देना चाहिए। तीन चार चोखटों के बाद पटला डालकर यह काम किया जा सकता है। बाद को ज्यों ज्यों मौनें बढ़ती जावें, पटले को आगे की ओर खिसका कर बीच में एक एक करके चौखट डालने से स्थान विस्तृत किया जा सकता है।

अगर कहीं से शिशुपूर्ण छत्ता मिल सके तो एक ऐसा छत्ता दे देना भी बहुत उत्तम होता है। इससे मौनों के भागने की शंका कम रहती है क्योंकि शिशुओं को छोड़ कर भाग जाना मौनों के लिए प्रत्येक अन्य प्राणियों की भांति कठिन ही होता है।

कम से कम १५-२० दिन तक लगातार शरबत दिया जाना अति आवश्यक होता है। इससे मौनों को घर में रहने के लिए आकर्षित तो किया ही जाता है, साथ ही साथ उन्हें छत्ता बनाने में भी सहूलियत प्राप्त हो जाती है। शरबत के लिए दो भाग पानी में एक भाग चीनी मिला कर घोल बना लिया जाता है। किसी चौड़े बरतन में उसे रखकर उसमें रद्दी कपड़ा इतना डुबा देना चाहिये कि उसमें मौनें डूबने न पावें। और यह बरतन ठीक चौखटों के ऊपर मौनागृह के भीतर ढक्कन के नीचे या सहकक्ष को चौखटों से रिक्त करके रखा जाता जा सकता है। हाथ से कुछ शरबत के छींटे नीचे मौनों पर भी डाल दी जावें तो उपयुक्त होता है। इससे मौनों को शरबत ढूढने में सरलता होती है।

इसके अतिरिक्त मा-मौन उसमें विद्यमान है या नहीं, यह जान लेना अति आवश्यक होता है। बहुत बार मां-मौन खो जाती है। अगर मा-मौन देखने में नहीं आती है तो उसका उचित उपचार उचित समय में कर लेना ही लाभदायक होता है।

अध्याय ५

मौनागृह उसके भाग तथा अन्य आवश्यक सामान

मौनागृह—लकड़ी के बने हुए उस सन्दूक को हम मौनागृह कहते हैं, जिसमें मौनें रक्खी जाती हैं या पाली जाती हैं। इसके छत्ता लगाने के लिए चौखट बने रहते हैं। यह एक स्थान से दूसरे स्थान को सरलतापूर्वक हटाया जा सकता है इसलिए इसका पूरा नाम आधुनिक-चल-चौखट युक्त-मौनागृह है। (चित्र १४)

मौनागृह का इतिहास—या तो अभी यह बात अनिश्चित ही है कि दुनिया के किस देश के निवासियों ने सर्वप्रथम मौनों को पालना प्रारम्भ किया था। लेकिन जैसा कि भारत की सभ्यता का इतिहास सबसे प्राचीन है। वेदों में मधु की महत्ता व उपयोगिता को समझा गया है। इससे विश्वास हो सकता है कि शायद यहां के रहने वालों ने सर्वप्रथम मौनों को पालना प्रारम्भ किया हो। या तो आज से लगभग ६००० वर्ष पूर्व मिश्र में मौनों के पाले जाने के प्रमाण मिले हैं।
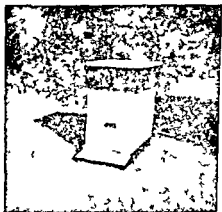
चित्र—१४ आधुनिक मौनागृह

पुराने समय में दुनिया के प्रत्येक देश में मौनें उसी प्रकार पाली जाती थीं, जिस प्रकार कि हम आजकल पालते हैं और उनके मधु निकालने का ढंग भी इससे समानता रखता था, लेकिन जैसा कि सर्व निश्चित ही है कि पाश्चमी देश के रहने वालों ने कभी भी, किसी

भी अवस्था या बात में, वर्तमान से सन्तुष्ट रहना नहीं सीखा है। जितने ही वे विज्ञान में उन्नति कर गये हैं तथा सबसे पहले सभ्य होने वाले हम भारतियों को पीछे धकेल कर इस बात में बहुत ही आगे बढ़ गये हैं।

उनके अन्य अनेक धन्धों की भांति मौना को पालने के ढंग की विधि में भी परिवर्तन करने की इच्छा हुई। जैसा कि कहावत ही है कि "जहां चाह वहां राह" या "जिन खोजा तिन पाइया"। उनकी इच्छा पूर्ति हो गई, उनका यही असन्तोष मौन पालन को नवीन रूप दे सका तथा इसे व्यवसायिक धन्धा के समकक्ष में ला सका।

सन् १७८६ की बात है कि यूरोप के स्विट्जरलैण्ड नामक देश में ह्यूबर नामक व्यक्ति पैदा हुआ जो अपने युवाकाल में ही अन्धा हो गया था लेकिन मौना का वह अनन्य प्रेमी था। अन्धावस्था में भी उसने इसमें अपनी खोज व प्रयत्न को बन्द नहीं किया। अपने नौकर व स्त्री की सहायता से उसने अनेकों बातें मौनों के बारे में जान ली और अपने उन सभी अनुभवों को भावी-मानव के
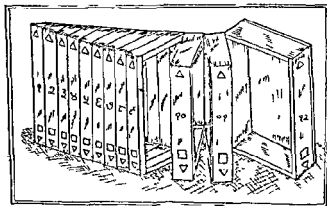
चित्र—१५ ह्यूबर का किताब के पन्नों की तरह खुलने वाला प्रथम मौनागृह

लिये लिखकर रख गया। वास्तव में यहीं से वैज्ञानिक मौनपालन का श्रीगणेश होता है। इसीलिये आज का मौनपाल जगत इस व्यक्ति को आधुनिक मौनपालन का पिता कह कर आदर करता है। इसी व्यक्ति के मस्तिष्क में सर्वप्रथम आया

प्रवेश-मार्ग लगकर बना होता है, जो आवश्यकतानुसार प्रयोग में लाया जा सकता है।

४. वायु-तट—यह भी द्वार तट की ही भांति दूसरा तट होता है। इसके मध्य में वायु के आने-जाने के लिये लम्बा छिद्र बना होता है और उस पर जाली दुरी रहती है लेकिन मिलेजुल मौनागृह में अक्सर इसे नहीं बनाते हैं।

५. शिशुकक्ष—इसको शिशुखण्ड भी कहा जाता है। मौनागृह का यह पहला कमरा होता है। इसमें सात या नौ चौखटे होते हैं तथा एक पटला होता है। इसीमें मौनों के अण्डे-बच्चे अधिकांश रहते हैं।

६. अन्तर्पट—इसको निर्गमक-पट भी कहते हैं। यह तिपरती लकड़ी का बना एक चौखट होता है, जिसके मध्य में एक छेद होता है। यह मधुकक्ष से मौनों को निकालने व मौनागृह की गर्मी को फैलाने से रोकने के काम में आता है।

७. मधुकक्ष—इसको मधुखण्ड भी कहते हैं। शिशुकक्ष के ऊपर यह प्रयोग में आता है। निष्कासन के लिए सम्पूर्ण मधु इसी में सम्रहित किया जाता है, यह दो नाप का बनाया जाता है। एक को पूर्ण-मधुकक्ष कहते हैं दूसरे को अर्ध मधुकक्ष। पूर्ण मधुकक्ष की ऊँचाई शिशुकक्ष के बराबर ही होती है। जब कि अर्ध-मधुकक्ष की ऊँचाई लगभग इसके आधे के ही बराबर होती है। इसमें ८ या १० चौखट होते हैं।

८. छत—यह मौनागृह की छत होती है इसको ढकना भी कहा जाता है। पानी से बचाव करने के लिए इस पर टीन दुका रहता है। मौनागृह के ऊपर ढक्कन की भांति यह प्रयुक्त किया जाता है।

९. चौखट—ये पतली लकड़ी के ठीक चौकोरनुमा बने होते हैं, मौनें इन्हीं के अन्दर अपने छत्ते लगाती हैं।

१०. पटला—यह लकड़ी का एक बन्द चौखट होता है, शिशुकक्ष को घटाने के काम में आता है। अगर मौनें कम हों तो उनकी गरमी को फैलाने से बचाने के लिए इसे लगा कर शिशुकक्ष को मौनों युक्त चौखटों तक ही सीमित कर दिया जाता है।

अन्य आवश्यक सामान

प्रत्येक मौनपाल को मौनपालन का धन्धा सुचारू रूप से करने के लिए मौन व मौनागृहों के अलावा अन्य सहायक सामान की भी आवश्यकता होती है जो निम्न प्रकार है:—

चित्र—१८ मौनी परदा

१. मौनी पर्दा—(चित्र १८) इसमें मौनी जाली भी कहा जाता है। जैसा कि सर्वविदित ही है मौन के पास डंक होता है जिसके काटने से सूजन हो जाती है। यह डंक विनाशकारी नहीं होता है। इसलिये शरीर के अन्य भाग में अगर डंक लग भी जावे तो कोई बात नहीं, लेकिन चेहरा अवश्य इससे बचाना चाहिये क्योंकि इससे सूरत कुछ समय के लिए कुरूप सी हो जाती है। जिससे अपने को शर्म तथा देखने वाले को भय हो जाता है। इसी मुँह की रक्षा के हेतु यह परदा बना होता है। यह सिर में डालकर पहना जाता है। इसमें सब वस्तुयें स्पष्ट दिखाई देती हैं। इसके लगाने से मौन का डंक अन्दर मुँह पर नहीं पहुंच सकता है।

चित्र—१९ धुंवाकर

२. धुंवाकर—(चित्र १९) मौनों में सुचारु रूप से कार्य करने के लिये धुंवे की विशेष महत्ता है। धुंवे से

कि मौनें इन चौखटों में लगा सकती हैं। जो आसानी से देखे जा सकते हैं। चौखटायुक्त प्रथम मौनागृह इसी ने बनाया। लेकिन वह पुस्तक के पन्नों की भांति खुलता व बन्द होता था। (चित्र १५)

इससे भी पाश्चात्य लोगों को सन्तोष नहीं हो सका। खोज बन्द नहीं हुई। अन्त में सन् १८५१ में लैंगस्ट्राथ नामक एक अमरिकन को इसमें पूर्ण सफलता मिल ही गई। उसी ने आधुनिक मौनागृह हमारे लिए सम्भव कर दिया। वास्तव में ह्यूबर का अधूरा काम लैंगस्ट्राथ ने पूर्ण कर दिया।

मौनागृह के भेद—नाप के अनुसार दुनिया में अनेकों मौनागृह मौन व स्थान की आवश्यकतानुसार प्रचलित हैं। हमारे देश में भी ज्योलीकोट लैंगस्ट्राथ, ज्योलीकोट मिलेजर, ब्रिटिशस्टैन्डर्ड व न्यूटन मौनागृह प्रयोग में लाये जाते हैं। लेकिन अधिकांश लैंगस्ट्राथ नाप ही दुनिया में प्रचलित है। बनावट के अनुसार हम इन्हें निम्न तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।
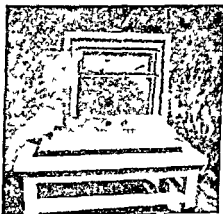
चित्र—१६ पारदर्शक मौनागृह

१ इकहरा मौनागृह।
२ दोहरा मौनागृह।
३ पारदर्शक मौनागृह।

इकहरा मौनागृह—प्रत्येक नाप का इकहरा व दुहरा मौनागृह बन सकता है। इकहरे मौनागृह में तख्ते की एक ही परत होती है। यही अधिक प्रयुक्त भी होता है।

दोहरा मौनागृह—दोहरा मौनागृह बहुत कम प्रचलित है। इसके बनाने में दोहरा तख्ता प्रयोग में लाया जाता है और तख्ता की दो पत्तों के बीच में बुरादा, घास आदि के भरने को स्थान रिक्त छोड़ा जाता है। यह गर्मी

व सर्दी से मौनों का बचाव अच्छा करता है। लेकिन भारी व अधिक मूल्य का होने के कारण कम काम में लाया जाता है।

पारदर्शक मौनागृह—(चित्र १६) यह मौनागृह मधु उत्पादन के काम में नहीं आता है। अन्वेषण, अनुभव या प्रदर्शन के लिए ही इसकी उपयोगिता है। एक या एक से अधिक चौखटों वाला यह बनाया जा सकता है। इसके दो ओर तख्ते के स्थान पर शीशा लगाया रहता है ताकि बिना मौनागृह को खोले बाहर से ही मौना के भीतरी प्रत्येक गति-विधि का पता लग सके। इनके अतिरिक्त लघु मौनागृह व मा मौन का गर्भाधान कराने के मौनागृह भी होते हैं, परन्तु ये बहुत छोटे होते हैं।

मौनागृह के भाग—(चित्र १७) प्रत्येक मौनागृह में निम्न लिखित भाग होते हैं —

१. आसन या चौकी—वास्तव में यह मौनागृह का भाग तो नहीं होता है, लेकिन जैसा कि इसका प्रयोग आवश्यक हो जाता है। इसे भी हम मौनागृह के भाग में ही सम्मिलित कर लेते हैं। मौनागृह को रखने की यह चौकी होती है। यह किसी प्रकार की भी बन सकती है।

२. तलपट—यह मौनागृह का तला होता है। इसी पर सारा मौनागृह स्थित रहता है। इसके आगे से आरोहक पट लगा रहता है तथा प्रवेश-मार्ग भी इसी के ऊपर होता है। पीछे से वातायन भी इसी पर होता है।
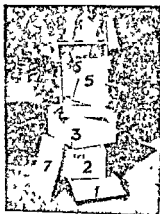
चित्र—१७
१ तलपट २ शिशुकक्ष ३ मधुकक्ष या मधु खण्ड ४ अन्तर्पट ५. चौखट ६ ढक्कना ७ पटला

३. द्वार-दण्ड—यह लकड़ी का एक टुकड़ा होता है जिसमें दो नाप का

मी।। का ध्यान बदल जाता है। पाल्ने का ध्यान उसी तरफ रहता है। इसी के लिये धुआकर रखा होता है। इस पर धौंकनी लगी रहती है जिससे आवश्यकतानुसार धुआं दिया जा सकता है।

चित्र—२० मुक्तक-यंत्र

३ मुक्तक यंत्र—(चित्र २०) यह लोहे का बना हुआ लगभग ६ इंच लम्बा डेढ़ इंच चौड़ा एक यंत्र होता है। एक ओर इसकी धार पतली रहती है तथा दूसरी ओर की धार मुड़ी रहती है। यह मौनागृह के किसी भाग को भी जो आपस में चिपक जावें, छुडाने के काम आता है। इसमें कील निकालने के लिये एक छेद भी बना रहता है।

४ माँ मौन रोक पट—(चित्र २१) इसको रानी रोक जाली भी कहते हैं। यह जस्त की चादर या तार की बनी रहती है। इसके छेद इस परिमाण के बने होते हैं कि कर्मठ मौनें उससे आ जा सकती हैं। लेकिन माँ-मौन नहीं आ जा सकती है। इसका प्रयोग अक्सर मां मौन को सहकक्ष में जाने से रोकने के लिये किया जाता है।
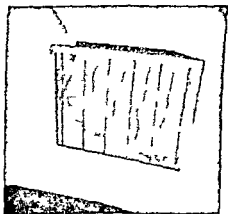
चित्र—२१ मा मौन-रोक पट

५ मौना निर्वासक यंत्र—(चित्र २२) यह चद्दर का एक छोटा यंत्र बना होता है। इससे मौनें एक ओर तो निकल आती हैं लेकिन दूसरी ओर नहीं जा सकती हैं। यह मौनों को किसी कक्ष से हटाने के काम आता है।

६ फिर्री—(चित्र २३) यह एक लम्बे डंडे पर पैसे के बराबर गोलाई की फिर्री होती है जो एक कील द्वारा जुड़ी रहती है। इसके मध्य में गोलाई

पर तार के बराबर गहरा गड्ढा खुदा रहता है या गोलाई ऽात ार बनी होती है जो कील पर गोल घूम सकती है। यह छराधार को तार पर चिपकाने के काम आती है।

चित्र—२२ निर्वातक यत्र

७ समतल-सूचक-यत्र—यह वही यत्र होता है जो समतल बनाने के लिये बढ़ई या राजों के पास रखा रहता है। यह मौनागृह को समतल रखने के काम में आता है।

८ ताप-मापक यत्र-(थरमामीटर)—स्थान के दैनिक तापक्रम को जानने के लिये उपयोगी है।

६ तार—इस्पात का पतला तार होता है यह चौखटों पर लगाया जाता है। इससे चौखटों पर लगी छत्ते दृढ़ रहते हैं।
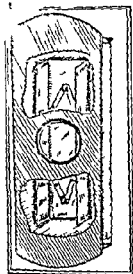
१० हथौड़ी—इसके लिये वह हथौड़ी उपयोगी होती है जिसमें एक ओर कील निकालने का होता है। यह आवश्यकतानुसार कोई भी काम आ सकती है।

चित्र—२३ घिरी
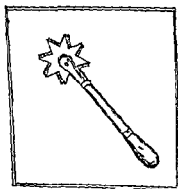
११ छुरा—यह पतला छुरा होता है जिसके दोनों ओर धार होती है। यह छत्ता को काटने आदि के काम आता है।

१२ बरमा—यह चौखटों पर तार लगाने के लिए छेद करने के काम आता है।

१३ छत्ताधार—यह मोम की बनी छत्ते की बुनियाद होती है जो बनी

बनाई मिलती है। इनमें लगाने से मौनें छत्ते टेढ़े नहीं लगाने पाती हैं।

चित्र—२४ निष्कासक यंत्र

१४ मधु निष्कासक यंत्र—(चित्र २४) यह एक आवश्यक यंत्र है, जिसकी मौन पाल को अति आवश्यकता होती है। यह शहद निकालने के काम आता है। इसमें छत्ता डाल दिया जाता है और इसको घुमाया जाता है जिससे शहद तो निकल कर अलग हो जाता है और छत्ता पुनः प्रयोग करने के लिये ज्यों का त्यों सुरक्षित रह जाता है।

१५ पुरुष पाश—यह मौनागृह के द्वार पर लगाने का यंत्र होता है। पुरुष मौनों को भीतर जाने से रोकने के काम में आता है, इसमें इस नाप के छिद्र बने रहते हैं कि कमेंट मौनें तो उनसे निकल सकती हैं लेकिन पुरुष मौन नहीं निकल सकते हैं।

१६ मा मौन रोक द्वार—पुरुष पाश की ही तरह मौनागृह के द्वार पर लगाने का यह भी एक यंत्र होता है। इसमें मौनें तो बाहर भीतर आ जा सकती हैं, लेकिन मा मौन नहीं निकल सकती है। बच्छूट काल में बच्छूट होने से मौनों को रोकने के लिये या अगर मौनपाल मौनालय से दूर रहता हो, तो बच्छूट के हाथ से न निकल जाने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। मां-मौन रोक पट की चादर का ही १॥", २" चौड़ा टुकड़ा लेकर भी इसे बनाया जा सकता है।

१७ वाहक पिंजड़ा—(चित्र २५) यह तीन चार चौखटों का एक छोटा सा मौनागृह ही होता है। मौनों को इधर उधर ले जाने के लिये इसका प्रयोग

किया जाता है। अगर कहीं से हमने मौनें बदल कर लानी हों या चाकूट पकड़ कर लाना हो, तो इससे सरलतापूर्वक ला सकते हैं। पूरा मौनागृह उठाकर ले जाना असुविधापूर्ण होता है। घर लाकर इसमें के चौखटों को मय मौनों के निकाल कर हम मौनागृह में सरलता से रख सकते हैं। इसका तला बीलों से जुदा रहता है। प्रवेशमार्ग भी बन्द करने का होता है। ऊपर का ढकन कब्जेदार व जालीदार होता है। इसके ऊपर से पकड़ने के लिये हैन्डिल भी लगा होता है।

चित्र—२५ ग्राहक पिंजडा
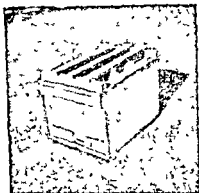
यह वह सामान है, जिसकी कि प्रत्येक मौनपाल को आवश्यकता हो सकती है। लेकिन अगर व्यवसायिक पैमाने पर इसे कोई करना चाहे, तब तो और भी बहुत सा सामान आवश्यक हो जाता है। प्रवेशक पिंजड़े, (चित्र २६) खिलाने के बर्तन, मधु-संग्रह करने व मधु-पकाने के बर्तन, काम में न आने वाले छत्तों को सभालने की आलमारी, मोम-निकालने का सामान आदि बहुत सा सामान और रखना पड़ता है।

चित्र—२६ प्रवेशक पिंजड़े

अध्याय ६
मौन की शरीर-रचना

मौन का शरीर तीन भागों में विभक्त रहता है, जिनमें उसकी प्रत्येक इन्द्रियां जुड़ी रहती हैं। ये भाग इस प्रकार होते हैं। पहला सिर, दूसरा सीना तथा तीसरा पेट। (चित्र २७)
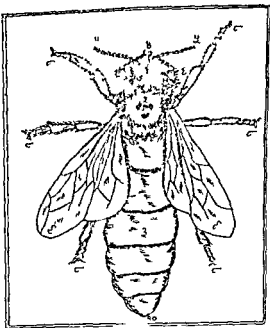
चित्र—२७ मौन का शरीर
१ सिर २ सीना ३ पेट ४ मुह ५ स्पर्शेन्द्रियां ६ मिश्रित आंख ७ साधारण आंख ८ पैर ९ पर १० डंक

सिर—मौन का सिर मनुष्य या अन्य दूसरे जानवरों के सिरों से अनेक बातों में भिन्नता रखता है। इसमें इसका मुह, मस्तिष्क, आँखें व स्पर्शेंद्रियां जुड़ी रहती हैं।

मुह—यह सिर के ठीक सामने की ओर होता है। इसमें होंठ, जबड़े व जीभ सम्मिलित रहती हैं। मौन के जबड़े ऊपर नीचे चलने के स्थान पर अगल बगल को चलने वाले होते हैं और उसकी जीभ भी दो भागों में विभक्त रहती है।

मस्तिष्क—मौन का मस्तिष्क तीन भागों में विभक्त रहता है। जिसमें पहला भाग बड़ा होता है। इसी में उसका असली मस्तिष्क भी होता है। इसका सम्बन्ध उसकी दृष्टि से होता है। दूसरे का सम्बन्ध स्पर्शेन्द्रियों से होता है तथा तीसरे भाग का सम्बन्ध मुंह से होने पर स्वाद आदि से रहता है।

आँखें—मौन की आँखें दो तरह की होती हैं। पहली साधारण-आँखें और दूसरी मिश्रित आँखें।

१. साधारण आँखें—ये आँखें तीन होती हैं। मस्तिष्क के ऊपर ठीक सामने की ओर बनी होती हैं।

२. मिश्रित-आँखें—ये आँखें सिर के दोनों ओर एक एक होती हैं। प्रत्येक आँख में अनेकों इकाइयां जुड़ी रहती हैं, जो भिन्न भिन्न दिशाओं की ओर देखने के काम आती हैं। मनुष्य की भांति ये आँखें गोल घूमने वाली नहीं होती है।

स्पर्शेन्द्री—स्पर्शेन्द्रियां दो होती हैं। ये भी मस्तिष्क पर सामने की ओर को दो सींगों के समान बनी होती हैं। ये सींगों की भांति कठोर व अस्थिर नहीं होती हैं, बल्कि बहुत कोमल व मुड़ने वाली होती हैं। इन्हीं स्पर्शेन्द्रियों से मौन सुनने व सूंघने का काम लेती है।

सीना—यह मौन के शरीर का दूसरा भाग होता है। इसमें उसके पर व पांव जुड़े रहते हैं।

पर—प्रत्येक मौन के चार पर होते हैं जो उसको उड़ने में सहायता देते हैं। ये पर सीने के दोनों ओर दो दो होते हैं। प्रत्येक ओर के दोनों पर आपस में एक दूसरे से जुड़े भी रहते हैं।

पैर—मौन के छः पैर होते हैं। तीन एक ओर और तीन दूसरी ओर। ये पैर चलने फिरने के अलावा फूलों से पराग संग्रह करने के लिये भी अपनी उपयोगिता रखते हैं। इनमें आगे के दो पैर स्पर्शेन्द्रियों को स्वच्छ करने के लिये व अन्तिम दो पैर पराग ढोने के प्रयोजनार्थ विशेष प्रकार से बने होते

हैं। (चित्र २८) प्रत्येक पैर में भागों की अधिकता होती है। पैर के अन्तिम भाग पंजेनुमा होते हैं, जो मौन को खुरदरे पदार्थों पर चिपकने में सहायता देते हैं। तथा उन पंजों का मध्य भाग गद्दे नुमा होता है जो मौन को चिकने पदार्थों पर चलने में सहायता देता है। कमेरा मौन के पिछले पांवों के मध्य जोड़ पर टोकरीनुमा बना रहता है, जिन्हें पराग टोकरियां कहते हैं। ये ही टोकरियां पराग एकत्र करने व उसे ढोने में सहायक होती हैं। ये पराग-टोकरियां पुरुष मौन व मा-मौन के पांवों पर नहीं होती हैं। (चित्र २९)
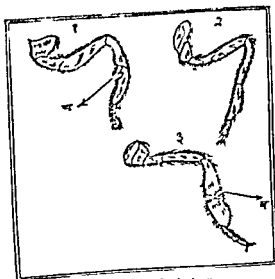
चित्र—२८ कमेरा के तीनों पैर
१. अगला पैर २ मध्य का पैर ३ पिछला पैर
(क) स्पर्शेन्द्रियों को स्वच्छ करने वाला (ख) पराग टोकरी

पेट—अब यह तीसरा और अन्तिम भाग मौन के शरीर का होता है।

चित्र—२९ मा-मौन व नर-मौन के पिछले पैर
१. मा-मौन का पिछला पैर २ नर-मौन का पिछला पैर

इसी के भीतर मीन की आँतें, अमृत इकट्ठा करने का पेट तथा असली पेट होता है। मोम बनाने की ग्रन्थियां व मीन का डंक भी इसी भाग पर जुड़े रहते हैं।
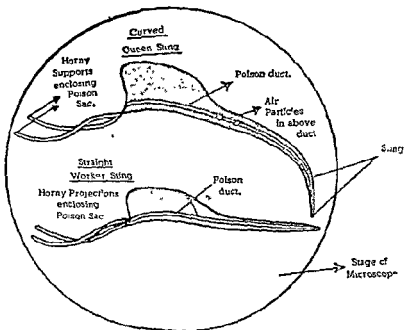
चित्र—३० मा-मीन और कर्मठ-मीन के डंक

मोम बनाने की ग्रन्थियां—ये मीन के पेट के नीचे के भाग पर बाहर की ओर बने होते हैं। मीन शहद को खाकर उसको मोम में परिवर्तित करती है। यह मोम उसके शरीर से इन्हीं ग्रन्थियों के द्वारा बाहर को निकलता है। ये संख्या में आठ होती हैं।

डंक—(चित्र ३०) यही एकमात्र साधन अपनी रक्षा का प्रकृति की ओर से इस नन्हे से प्राणी को मिला हुआ है। इसको यह तभी प्रयुक्त करती है, जब कोई कष्ट अनुभव करती है या जब किसी खतरे की सम्भावना से आशंकित

हो उठती है। इसका डक अधिक विषैला नहीं होता है। कोमल स्थानों पर इसके लगने से सूजन अवश्य आ जाती है। डक लग जाने पर कुछ काल तक जलन का भी अनुभव अवश्य होता है, लेकिन बिना उपचार के वह अपने आप शान्त भी हो जाती है। लगभग २४ घंटे बाद मौन के डक का असर समाप्त हो जाता है। भले ही मौन डक मारकर कोई भयंकर अपराध तो नहीं करती है लेकिन फिर भी इसका प्रायश्चित वह अपना जीवन देकर कर डालती है। क्योंकि जो मौन एक बार डक का प्रयोग कर चुकती है, वह फिर जीवित नहीं रह सकती।

इसका डक आरीनुमा बना होता है। इसीलिये जब यह मनुष्य के मांस में घुस जाता है तो फिर सरलतापूर्वक नहीं निकल पाता है। क्योंकि इसके आरीनुमा होने के साथ ही साथ मनुष्य का मांस कठोर भी अधिक होता है। जब मौन डक निकालने के लिये बल का प्रयोग करती है, तब यह सब सम्बन्धित भागों के बाहर खिंच कर मनुष्य के मांस में घुसा ही रह जाता है। मौन का डक के लिये इससे सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। इसके साथ इस पर जुड़े हुए अन्य भाग भी बाहर खिंच आते हैं, जिससे कुछ ही काल बाद मौन की मृत्यु हो जाती है। (चित्र ३१)

चित्र—३१ डक से लगे भाग

पुरुष मौन का डक नहीं होता है और मां मौन अपने डक का प्रयोग दूसरी मां-मौन के प्रति ही करती है।

मौन का पाचन-प्रणाली—मौन जो कुछ भी खाती है, वह एक पतली नली से होकर सर्वप्रथम मधु-संचयक थैली में पहुंचता है। इसके बाद

आमाशय में होकर छोटी आंतों के द्वारा बड़ी आंत में जाकर मलद्वार से बाहर को निकलता है। (चित्र ३२)

चित्र—३२ पाचन प्रणाली
१. नली २ मधु-सचयक थैली
३ आमाशय द्वार ४ आमाशय
५. छोटी आंत ६. बड़ी आंत

मधु-संचयक-थैली—मौन के शरीर में यह एक विशेष प्रकार की थैली होती है। मौन पुष्पों से जो अमृत संग्रह करती है, वह सब इसी थैली में सग्रहित हो जाता है। इसी में से फिर उगल कर मौन या तो कोठरियों में शहद बनाने के हेतु जमा कर देती है या जमा करने के लिये अन्य सेवक मौनो को दे देती है। इस मधु-सचयक थैली के बाद मौन का आमाशय होता है। इनके मध्य में आमाशय-द्वार होता है। जो आवश्यकतानुसार खुलकर फिर बन्द हो जाता है। जितनी मौन को भूख होती है उतना ही भोजन इस द्वार से होकर मौन के आमाशय में पहुंच जाता है और बाकी इसी थैली में इकट्ठा रह जाता है। जो भोजन आमाशय में पहुँचता है उसी को मौन हजम करती है, उसका पौष्टिक तत्व उसके शरीर में मिल कर उसका पोषण करता है, और निकृष्ट भाग गुदाद्वार से बाहर को निकल आता है। मधु सचयक थैली नर-मौन व मा मौन में बहुत छोटी होती हैं।

रक्त का दौर—(चित्र ३३) मौन के शरीर में रक्त का संचार करने के लिये उसका हृदय मनुष्य की भांति एक ही स्थान पर नहीं होता है। मौन का

हृदय उसके पेट के ऊपरी भाग में लम्बाकार एक ओर से दूसरे ओर तक फैला रहता है। इसके चार भाग होते हैं। जहा पर ये भाग एक दूसरे से मिले होते हैं वहां पर दिल अधिक सकीर्ण बना होता है। दिल से एक नला सिर तक और एक पीछे को पेट के नीचे के भाग की ओर चली जाती है। यह नली मास पर मिलने के अनेकों स्थानों पर खुली रहती है। और इन्हीं से सम्पूर्ण शरीर में रक्त प्रवाहित होता है।
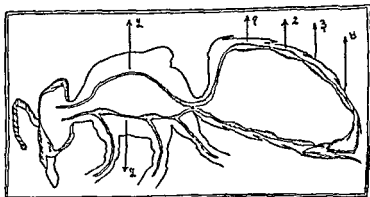
चित्र—३३ रक्त का दौर
१ २ ३ ४ दिल ५ रक्त वाहिनी नसें

श्वास प्रणाली—मनुष्य की भाति मौन नाक या मुह से सास नहीं लेती है। इसके लिये उसके शरीर के दोना ओर दस दस छिद्र होते हैं जो छोटी छोटी नलिकाओं द्वारा शरीर के भीतर बनी हवा की थैलियों से सम्बन्धित रहते हैं। इन्हीं के द्वारा मौन बाहर व भीतर वायु को फेंकती है।

इन सब इन्द्रियों के अलावा पुरुष व मा मौन की जननेन्द्रिया भी होती हैं, तथा नसों का विस्तृत जाल मौन के शरीर में फैला होता है।

अध्याय ७
मौनागृह के वासी

मौनपालन की परिभाषा में हमने बतलाया था कि मौनों की आदतों को जानकर, उन्हें उन्हीं पर प्रयुक्त करने के नाम को ही मौनपालन कहते हैं। इसलिये किसी भी व्यक्ति के लिये, जो किसी प्रकार भी मौना को रखने की इच्छा रखता हो, इस अध्याय की बहुत बड़ी उपयोगिता हो जाती है। इसमें मौनागृह के भीतर रहने वाली प्रत्येक मौन के जीवन, काम व रहन-सहन आदि के बारे में
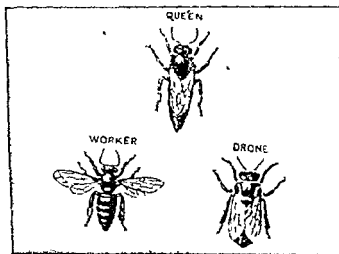
चित्र—३४ मौनागृह के वासी

प्रत्येक जानकारी आ जाती है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये सफलता पूर्वक मौनपालन अपनाने को इन जानकारियों से परिचित होना अति आवश्यक होता है। अन्यथा उसके प्रयोग कभी भी सफल नहीं हो सकते हैं।

मौनागृह के भीतर जैसा कि अनभिज्ञ लोग सोचते हैं, केवल एक ही प्रकार की मौन नहीं होती हैं। कार्य व प्रकार के अनुसार ये तीन भागों में विभक्त होती हैं। पहला माँ मौन, दूसरी कर्म मौन तथा तीसरा नर या पुरुष मौन होते हैं। अब संक्षेप में इनका विवरण दिया जाता है। (चित्र २४)

१. माँ-मौन

नामकरण—हमारे देश में लोग इसको राना या रानी कह कर पुकारते हैं। और इसी प्रकार पश्चिमी देशों के लोग इसको क्वीन कह कर सम्बोधन करते हैं। अगर गौर किया जावे तो ये दोनों ही नाम सार्थक नहीं मालूम पड़ते हैं। जैसा कि अब यह बात स्पष्ट ही हो चुकी है कि यह मौन गर्भ ग्रहण करती है और जनन-कार्य किया करती है, राजा शब्द तो इसके लिये बिल्कुल ही अनुचित बैंचता है। हाँ रानी शब्द कुछ इसके लिये सही हो सकता है, क्योंकि यह मौन स्त्री जाति की होती है। लेकिन न तो मौनागृह में कोई राजा ही होता है जिससे कि यह रानी बन सके और न कोई शासक या आदेशक ही होता है, जो कि राजा या रानी की पदवी ग्रहण कर सके। इसलिये हमने इसका माँ-मौन कह कर ही सम्बोधन करना उचित समझा है। क्योंकि यही एकमात्र मौन सारे मौनागृह में अण्डे देने वाला होता है और एक प्रकार से यह ही सारे मौनागृह की जननी भी होती है। इसका काम दिन भर अण्डे देना ही होता है। इसीलिये पश्चिमी मौनपाल इसको अण्डे देने का यंत्र कह कर भी पुकारते हैं। हम इस सम्बोधन को अनुचित व तिरस्कार पूर्ण समझते हैं। इसीलिये हमने माँ-मौन ही इसके लिये उपयुक्त समझा है। काम व आकृति के अनुसार यह उचित भी जँचता है।

जन्म—सबसे आश्चर्यजनक बात इसके जन्म के विषय में होती है। इसका जन्म बिना कारण के नहीं होता है। जीव-संसार में जन्म के बारे में ऐसी बात बहुत ही कम पाई जाती है। इसके जन्म के दो कारण होते हैं। पहला कारण मौनवंश की आवश्यकता और दूसरा कारण मौनों की इच्छा होना है। इन दो कारणों में से बिना एक के उपस्थित हुए माँ-मौन का जन्म सम्भव नहीं हो सकता है।

मा-मौन अपने परिवार के साथ

भरगोमौन्द-मौनालय ज्यालांकोट का एक बाह्य मौनालय

रावत-मौनालय का पृष्ठ भाग
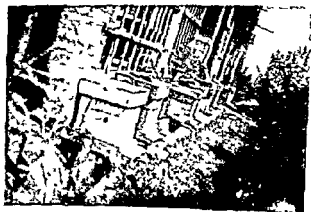
इनमें मौनावश को मा-मौन के जन्म की आवश्यकता तब होती है, जब किसी कारण वश मौनावश मा-मौन विहीन हो जाता है। या तो मा मौन स्वयं ही किसी प्रकार से मर जाती है या मार दी जाती है और मौनों की इच्छा मा मौन को पैदा करने के लिये तब हो उठती है, जब मौनों को बकूट करना होता है, या वृद्धावस्था के कारण मा-मौन को बदलना होता है।

जन्म कैसे होता है—अब मौनों के संसार की यह दूसरी विचित्रता है। मा-मौन का जन्म किसी प्राकृतिक घटना या परिस्थितियों के उपस्थित हो जाने से नहीं होता है। वह स्वयं नहीं पैदा हो पड़ती है। घटनाओं का संयोग उसके जन्म का कारण नहीं होता है और न कोई विशेष कर्म ही उसके जन्म के कारण होते हैं। वास्तव में उसे मौनों द्वारा पैदा किया जाता है।

मा-मौन का जन्म कैसे होता है? इस बात को जानने से पूर्व यह जान लेना भी आवश्यक है कि कर्मठ मौन और मा मौन का जन्म बिलकुल एक ही प्रकार के अन्डे से होता है। यह मौनों की इच्छा व उनके प्रयत्नों पर निर्भर रहता है कि किसी भी कर्मठ मौन के अन्डे से वे मा-मौन को पैदा कर लेवें।

जब ऊपर बतलाये गये कारणों में से कोई भी कारण मा-मौन के जन्म का उपस्थित हो जाता है, तब मौनें कर्मठ मौन के किसी भी अन्डे को या किसी नवजात-कीट को मा मौन बनाने के लिये चुन लेती हैं। और उसे एक विशेष प्रकार का भोजन खिलाना प्रारम्भ कर देती हैं। यह भोजन मधु अवलेह के नाम से पुकारा जाता है। बस यही भोजन होता है, जो मा-मौन का जन्म सम्भव कर देता है। वह कीट जिसे अपने पूरे जन्म-काल तक यह भोजन खाने को मिल जाता है उसकी गर्भदानी का विकास अपनी पूर्णावस्था को पहुंच कर गर्भ-ग्रहण करने की योग्यता पा लेता है। बस वही मा-मौन बन जाता है, अन्य कीट जिन्हें यह भोजन पूरा नहीं मिल पाता है, और दूसरा रूखा, साधारण भोजन खाने को मिलता है, कर्मठ-मौन बन जाते हैं। वास्तव में कर्मठ मौन वह अपूर्ण स्त्री मौन है, जिसकी गर्भदानी उचित भोजन के अभाव से अविकसित व गर्भ-ग्रहण करने के अयोग्य ही रह जाती है। भोजन से मानव के स्वभावों में परिवर्तन की बात तो बहुत से लोग जानते होंगे, लेकिन शरीर-रचना में भी

मोनन के अन्तर से अन्तर आ जाने की बात हमें यहाँ देखने को मिलती है। कर्मठ मौन के कीट को केवल २, ३ दिन तक ही यह मधु अवलेह दिया जाता है। बाद को उसका पोषण एक साधारण भोजन द्वारा ही किया जाता है।

मधु अवलेह—यह एक भोजन होता है, जो मा मौन बनाने के लिये कर्मठ मौन के कीट को खिलाया जाता है। यह मौन की शिर की ग्रन्थियों से निकला हुआ दूध के समान एक पदार्थ होता है। ये ग्रन्थियाँ कुमारावस्था की मौनों में पूर्ण रूप से विकसित रहती हैं। इन ग्रन्थियों को अंग्रेजी में फैरेंजीयल ग्लैन्ड्स कहते हैं। इसको विदेशों में शाही-जरदी कह कर पुकारते हैं। हम इसको मा मौन लप्सी भी कह सकते हैं।

जन्म का काल—मा-मौन को लगभग ३ दिन अण्डावस्था में, पाच, छः दिन कीटावस्था में व ७ दिन कोष-कीटावस्था में रहना पड़ता है। इसके बाद लगभग १५ या १६ दिन के बाद ही वह पूर्ण मा मौन बन कर जन्म लेने के योग्य बन जाती है।

मा मौन-कोठा—(चित्र ३५) प्रत्येक मौन अपनी कोष-कीटावस्था में एक खोल के भीतर बन्द रहता है। मा मौन को भी इसी प्रकार के एक खोल के भीतर बन्द रहना पड़ता है। इस खोल से वह पूर्ण मा-मौन बन कर ही बाहर निकलती है। इसी खोल को मा-मौन कोठी कहते हैं। यह प्रायः छत्ते के अन्तिम भाग में लगभग पौन इंच
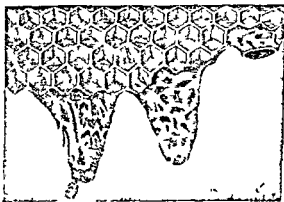
चित्र—३५ मा-मौन कोठी

लम्बी तथा साधारण कर्मठ-मौन की कोठियों के मुकाबले गोलाई में ज्यादा

अण्डाकार बनाई जाती है। कभी कभी छत्ते के मध्य अगल बगल में भी मौनें इसे अपनी सहूलियत अनुसार बना देती है।

जब मौनों को मा मौन बनानी होती है, तो वे किसी भी कर्मठ-मौन के अन्डे को या नवजात कीट को चुन लेती हैं, और शीघ्र ही उसे मधु अवलेह खिलाना प्रारम्भ कर देती हैं। साथ ही साथ वहा पर के दाईं, तीन कोठरिया की गोलाई लेकर कोठी बनाना प्रारम्भ कर देती हैं। कीट के ही साथ साथ यह कोठी भी बढ़ती जाती है। अन्त में जब कीट कोष-कीटावस्था में पहुंचने वाला होता है तो कोठी में मधु-अवलेह अत्यधिक मात्रा में रख दिया जाता है तथा कोठी का मोहरा भी बन्द कर दिया जाता है। इसके बाहर से मोम की एक मोटी परत लगा दी जाती है। इसके बाद ७ दिन तक मौन इसी कारावास की अवस्था में परवरिश पाती है।

मा-मौन का कोठी से निकलना— जिस काल मा-मौन कोठी का मोहरा बन्द किया जाता है, उस काल मा-मौन एक साधारण कीट की ही अवस्था में होती है। दो तीन दिन बाद उसका सिर बनना प्रारम्भ होता है। फिर पैर व अन्त में पर बनते हैं। इस प्रकार कोठी के भीतर ही मा-मौन अपनी पूर्णावस्था को पहुंच जाती है। इसके जन्म के बारे में अन्य मौनें इतनी निश्चित व जानकार होती हैं, कि वे मा मौन के जन्म के दो तीन दिन पूर्व से कोठी के सिरे को पतला करना प्रारम्भ कर देती हैं, ताकि मा-मौन यथा समय सरलता पूर्वक बाहर अपने कर्तव्य क्षेत्र में आ सके। इसकाल भीतर से मा-मौन भी कोठी के सिर को काटना प्रारम्भ कर देती है। कोठी का सिरा ठीक गोलाई में खुलता है। मानो किसी ने परकार से गोलाई काट दी हो, और एक दिन मा-मौन के क्षीण धक्के से यह ढक्कन खुल जाता है, और मा मौन कोठी से बाहर निकल आती है। बाहर मौनें इसके स्वागत मे इतनी अधीर रहती हैं, कि इसे देखकर रोमान्च हो उठता है। कोठी का ढक्कन जब खुलता है, तो वह गिर कर अलग नहीं हो जाता, बल्कि कोठी पर ही ठीक कब्जा लगे सन्दूक के ढक्कन की भांति लटका ही रह जाता है। कोठी को देख कर कोई भी विज्ञ मौनपाल जान सकता है, कि किस कोठी से मा-मौन ने सुरक्षित रूप में जन्म ले लिया है। बहुत बार मा-मौन हीन वंश में जब मा-मौन बनने वाली

होती है, तो भी पालक उसे देखने के लिये अधीर रहता है, लेकिन वह किसी समय भी कोठी से निकल कर मौनों के समूह में मिल जो जाती है कि उसे देख पाना कठिन हो जाता है। इस समय कोठी के द्वार को देखकर मौनपालक मां मौन के सुरक्षित निकल आने की अवस्था का पता कर सकता है। अगर ढक्कन गोलाई में कटा हो, और कोठी पर लटका हो, तो अवश्य मां-मौन का जन्म बिना किसी हानि के हुआ समझना चाहिये। क्योंकि मौनें या मां मौन जिस कोठी के बीच को नष्ट करती हैं, उसको सिरे से तोड़ने के स्थान पर बगल बगल से छेद करके तोड़ती हैं।

पकी हुई मां-मौन कोठे —ज्यों ज्यों भीतर मां मौन बढ़ती जाती है। बाहर कोठी के सिरे का रंग भी बदलने जाता है। सर्व प्रथम कोठी का सिरा बहुत मोम व मोमी रंग का होता है, धीरे धीरे उसमें परिवर्तन आने लगता है। यह पतला व भूरे लाल रंग का होने लगता है। वह छोटा के ऊपर टीक टोपी के समान दिखाई देने लगता है। इस समय अगर गौर करके देखा जाये, तो वह इतना पारदर्शक भी हो जाता है कि भीतर मां-मौन की चेष्टायें बाहर से देखी जा सकती हैं। जब कोठी के सिरे का यह रंग लाली लेने लगता है तो इसी को माँ-मौन-कोठी का पकना कहते हैं।

कोठा से निकलने पर मां-मौन का प्रथम कार्य—माँ मौन जब जन्म लेती है तो अत्यन्त कोमल व दुबली-पतली होती है। उसका रंग भी सफेदी लिये हुए होता है। कोठी से निकलते ही वह सर्वप्रथम किसी शहद के कोठे के पास जाती है और उसमें सिर डालकर शहद खाती है। उसके बाद अन्य माँ-मौन या मा-मौन-कोठियों की खोज में निकल पड़ती है। एक एक करके सभी होने वाली मा मौनों को कोठियों के भीतर ही समाप्त कर देती है। अधिकतर वह इन कोठियों को तोड़ कर छेद कर देती है और उसके भीतर की मां-मौनों को घायल कर देती है। अन्य कर्मठ मौनें उन्हें फिर समूल नष्ट कर देती हैं। बहुत बार वह मा मौनों को कोठियों के भीतर मारने के स्थान पर उनको बाहर निकल आने पर मारती है। अगर उसके जन्म से पूर्व कोई मा-मौन वहां उपस्थित हो तो वह पहले ही उससे भी द्वन्द-युद्ध द्वारा जीवन-मरण

का निबगग कर लेती है। जिसकी को मौनारंश का मातृपद न हासने वाली को मृत्यु की प्राप्ति होती है। यही एकमात्र राजसी प्रवृत्ति मा-मौन में पाई जाती है। जिससे इसको रानी या राजा शब्द से पुकारा जा सकता है।

कब की मां-मौन उत्तम होती है—यों तो वैज्ञानिक विधि से चतुर-मौनपाल द्वारा बनाई हुई मा-मौनें कभी की भी उत्तम हो सकती हैं। लेकिन बक्छूट काल व वृद्धोद्वार के समय में जो माँ-मौनें बनाई जाती हैं वे अति उत्तम होती हैं। इन दोनों दशाओं में मौनों के पास एक मा-मौन तो उपस्थित रहती ही है। इसलिये वे दूसरी माँ-मौन को बनाने में शीघ्रता नहीं करती हैं, बल्कि पूर्ण सावधानी से उसे बनाती हैं। इसीलिये बक्छूट काल की मा-मौन, कोठी से निकलते ही दृढ व शक्तिशाली मालूम पड़ती है। इसका एक बड़ा कारण भी होता है। फेरेन्जीयल लैन्डस जिनमें कि मधु अवलेह प्रकट होता है, शिशु व कुमारावस्था की मौनों में पूर्ण विकसित रहते हैं। जैसा कि बक्छूट काल शिशु-उत्पादन का भी काल होता है, इस समय मौनागृह में शिशु व कुमार मौनों की भी कमी नहीं रहती है। इसलिये इस काल बनने वाली मा-मौनों को मधु-अवलेह पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है, जिससे उसका विकास पूर्ण रूप से सम्भव हो जाता है। अगर मौनपाल के पास साधन हो, तो बक्छूट-काल में अच्छे मौनावंश में बनने वाली मा मौनों को बचा कर रख सकता है, और समय समय पर अन्य वंशों में उन्हें प्रविष्ट करा सकता है।

एक मौनावंश में मा-मौनों की संख्या—प्रत्येक मौनावंश में केवल एक ही मा-मौन रह सकती है। यह एक प्राकृतिक नियम है। बहुत बार दो माँ मौनें भी एक ही वंश में दिखाई पड़ जाती हैं। वृद्धोद्वार के समय मौनें पुरानी माँ मौन की ओर अधिक ध्यान नहीं देती हैं। उसे अपनी हो मौत मरने को छोड़ देती हैं। ऐसे समय में अनेकों बार माँ और बेटी साथ साथ महीनों तक अन्डे देते हुए भी पाई जाती है।

कुमारी मां-मौन—मा-मौन का गर्भाधान-संस्कार दो दिन से दस दिन के भीतर तक हो जाता है। जब तक किसी पुरुष मौन से उसका गर्भाधान नहीं हो जाता वह कुंआरी ही कही जाती है। मा-मौन का रहन-सहन कुमारावस्था

मे एक साधारण कर्मट-मौन की ही भांति होता है। जन्म से ३, ४ दिन तक कभी कभी वह इतनी बड़ी दिखाई देती है, कि मानो वह जवान मा-मौन हो। लेकिन फिर उसका आकार घटने लगता है। यहाँ पर एक तीसरी विचित्रता मौनों के ससार म होती है वह यह होती है कि मा मौन अपनी कौमार्यावस्था मे भी जनन-कार्य कर सकती है। अब प्रश्न उठता है अगर मा मौन बिना गर्भाधान के भी जनन-कार्य कर सकती है, तब उसके गर्भाधान-सस्कार की फिर उपयोगिता ही क्या रह जाती है? लेकिन नहीं, बात ऐसी नहीं है। मा मौन का गर्भाधान-सस्कार होना अति आवश्यक होता है। मा-मौन जो अन्डे बिना गर्भाधान हुए अपनी कौमार्यावस्था म देती है, वे अन्डे एक मात्र पुरुष मौनों के ही होते हैं। पुरुष मौनों की मौनावंश के लिए अधिक उपयोगिता नहीं होती है। कर्मट मौन के अन्डे देने की सामर्थ्य तो मां मौन में तब ही आ पाती है, जबकि किसी पुरुष मौन द्वारा उसका गर्भाधान हो जाता है। कौमार्यावस्था की इसी जनन शक्ति को अंगरेजी में पार्थियोजेनेसिस कहते हैं। हम इसको पुरुषाभाव-जनन शक्ति भी कह सकते हैं।

गर्भाधान—मां मौन जब ४, ५ दिन की हो जाती है, तो वह अक्सर दिन में जबकि मौसम गर्म रहता है, अपने मौनागृह से बाहर निकल आती है, और एक ही बार नहा बल्कि कई बार उड़ उड़ कर पुन. वापिस लौट आती है। वह ऐसा उड़ना सीखने के लिये और अपने घर की स्थिति का सही ज्ञान पाने के लिये ही करती है।

इसके बाद एक दिन जबकि मौसम अच्छा हो, धूप खिली हो, वह गर्भाधान के हेतु आसमान मे उड पडती है। उस समय की उसकी विशेष प्रकार की ध्वनि व सुगन्ध से मौनागृह के पुरुष-मौन उसकी कौमार्यावस्था का अनुभव कर लेते हैं। और उसका पीछा करने को निकल पडते हैं। जो पुरुष मौन उसे सर्वप्रथम पकड़ लेता है उसी से ही उसका गर्भाधान आसमान में हो जाता है। यह गर्भाधान [illegible] आसमान में अधिक ऊँचाई पर भी नहीं होती है।

बेचारे पुरुष-मौन [illegible] कैसा दुर्भाग्य होता है, कि वह अक्सर पुनः कभी

भी उसके जीवन में नहीं आने पाता। मा-मौन व पुरुष-मौन की जननेंद्रिया इस प्रकार की बनी होती हैं, कि वे सम्भोग किया में एक दूसरे से फँस जाती हैं और सरलतापूर्वक अलग भी नहीं हो पाती हैं। गर्भाधान किया हो चुकने पर पुरुष-मौन व मा-मौन एक दूसरे से चिपके हुए, गोल चक्कर में घूमते हुए पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। (चित्र ३६) इसकाल पुरुष-मौन की जननेन्द्री फट जाती है और तभी उसका वीर्य स्खलित हो पाता है। पृथ्वी पर गिर कर मा-मौन छुटकारे के लिये अपनी ओर को खींचना प्रारम्भ कर देती हैं। फल यह होता है कि पुरुष-मौन की जननेन्द्री मय अन्य उससे मिले हुए अंगों के बाहर को खिंच आती है। मा-मौन तो जननेन्द्री के इसी भाग को लेकर घर लौट आती है, और पुरुष मौन वहीं मृत्यु की गोद में तत्काल सो जाता है। मां मौन जब घर लौटती है तब सेवक मौनें उसकी परिचर्या प्रारम्भ कर देतीं हैं। गर्भाधान की इस क्रिया में १५ मिनट से ३० मिनट तक लग जाते हैं।
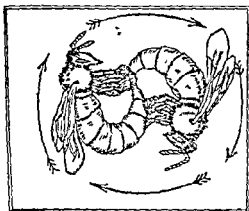
चित्र—३६ मा-मौन का गर्भाधान

क्या गर्भाधान संस्कार केवल एक ही बार होता है?—प्रायः मा मौन का गर्भाधान जीवन में केवल एक ही बार होता है। इसके बाद जीवन भर अन्डे देने की शक्ति उसमें आ जाती है। लेकिन बहुत बार अन्डे देना प्रारम्भ करने से पूर्व वह इस हेतु दुबारा शिकारा भी निकलते देखी गई है। अन्डे देना प्रारम्भ कर लेने के बाद वह इस हेतु फिर कभी भी बाहर आते नहीं देखी गई है। दुबारा आने की स्थिति तो तभी आती है, जब प्रथम गर्भाधान किसी प्रकार अपूर्ण रह जाता है।

अन्डे देना प्रारम्भ करने का काल—गर्भाधान संस्कार हो चुकने के ४, ५ दिन के बाद से मा-मौन प्रायः अन्डे देना प्रारम्भ कर देती है। लेकिन बहुत बार जब कि मौसम अच्छा न हो या अमृत का अभाव हो, तो उसकी इस क्रिया के प्रारम्भ होने में भी देर हो जाती है।

अन्डों के प्रकार—मा-मौन जो अन्डे देती है वे दो प्रकार के होते हैं। एक कर्मठ मौनों के और दूसरे पुरुष मौनों के। पुरुष मौन के अन्डे मा-मौन बिना गर्भाधान हुए ही, अपनी कुमारावस्था में भी दे सकती है। लेकिन कर्मठ मौन के अन्डे देने की सामर्थ्य उसमें केवल गर्भाधान होने के बाद ही आ सकती है। इसीलिये पुरुष मौन के अन्डे अगर्भित अन्डे व कर्मठ मौन के अन्डे गर्भित अन्डे भी कहे जाते हैं। इन्हीं कर्मठ-मौन के अन्डों से मा-मौन को भी जन्म मिलता है।

मा-मौन का डंक—मा-मौन का डंक होता है। लेकिन इसका उपयोग वह हमेशा दूसरी मा-मौन के प्रति ही करती है। मनुष्य के प्रति इसका उपयोग नहीं के बराबर पाया गया है।

मा-मौन की अवस्था—मौन-पाल व मौनावंश की आवश्यकता के अनुसार मा-मौन केवल दो ढाई साल तक को ही उपयोगी हो सकती है। यों तो उसका जीवन इससे अधिक भी हो सकता है। लेकिन कुमारावस्था की ही भांति वृद्धावस्था में भी कर्मठ मौन के अन्डे देने की सामर्थ्य वह खो बैठती है। उसकाल वह पुरुष-मौन के अन्डे ही अधिक देने लग जाती है। पुरुष-मौनों का अधिक होना मौनपाल या मौनावंश के हितार्थ किसी प्रकार भी नहीं हो सकता है। इसीलिये अधिक अवस्था की मा-मौन भी मौनपाल के लिये लाभदायक नहीं होती। दो साल के बाद इसका बदल दिया जाना ही उपयुक्त रहता है।

मां-मौन का कार्यक्षेत्र—गर्भाधान-संस्कार हो चुकने के बाद वास्तव में माँ-मौन की स्थिति कुछ बातों में ठीक एक रानी के समान हो जाती है। वह सिवाय वसछूट या घरछूट करने के और कभी भी बाहर नहीं निकलती है। अन्डे देने के अतिरिक्त और दूसरा काम भी नहीं करती है। वह एक दिन में

हजार से तीन हजार तक अन्डे दे डालती है। लेकिन हमारी भारतीय मां-मौन की अन्डे देने की गति इससे अभी बहुत कम है। उसमें सुधार करने की बहुत आवश्यकता है। हमारी भारतीय मा-मौन पान्च-सात सौ तक अन्डे ही रोजाना दे पाती है। इसकी इसी क्रिया को देखकर ही पश्चिमी मौन-पाल इसे अन्डे देने का यंत्र कह कर भी सम्बोधित करते हैं।

मां मौन अपघात—अनेकों बार देखने में आया है कि मौनें किसी कारणवश माँ-मौन का वध कर देती हैं। इसके लिये वे माँ-मौन के चारों ओर एक मंडल सा बना लेती हैं और उस मंडल को इस प्रकार से ठोस कर देती हैं कि माँ-मौन का उसके भीतर ही दम घुट जाता है और वह मर जाती है। इसी को मा-मौन अपघात कहा जाता है। यह प्रायः मौनपाल की लापरवाही से भी हो जाता है। निरीक्षण करते समय यदि मौनपाल द्वारा ढक्कन शीघ्रता से हटा दिया जावे या बन्द किया जावे जिससे कि मौनागृह में किसी प्रकार का झटका सा लग जावे तब मौनें इससे भयभीत सी हो उठती हैं और समझ नहीं पाती हैं कि इसका क्या कारण है। वे इसका उत्तरदायित्व मा-मौन पर डाल बैठती हैं और उसी पर अपना क्रोध उतार देती हैं।

मा-मौन की पहिचान—मा-मौन को पहिचानना बड़ा ही सरल है। थोड़े से अभ्यास से मौनपाल इसे मौनागृह में पा सकता है। यह अन्य मौनों से आकार में ड्योढ़ी के लगभग होती है। इसका पेट लम्बा, नुकीला और कुछ कुछ कालिमा लिये सा होता है। कर्मठ-मौनों के समान कई समानान्तर धारियां इसमें देखने को नहीं मिलती हैं। इसके पर बहुत छोटे दिखाई पड़ते हैं। वे पेट को पूर्ण रूप से नहीं ढक पाते हैं। सब से बड़ी पहिचान इसकी यही होती है कि इसके समान दूसरी मौन एक ही मौनावंश में नहीं होती है।

अगर मौनपाल चाहता हो, तो वह उसे सरलता पूर्वक खोज निकाल सकता है। अधिकांश यह मध्य के चौखटों में विद्यमान रहती है। लेकिन अन्डे देने के काल में अन्डे देते देते किनारे के अन्तिम चौखटों तक भी पहुंच जाती है। इसे खोजने के लिये निरीक्षण के समय मौनपाल को ध्यान में रखना चाहिये कि ताजे अन्डे किस चौखट पर हैं। जिन चौखटों में ताजे अन्डे मिलें,

उनमें देखा जावे, कि पूरे चौखट पर अन्डे दे दिये गये हैं या नहीं, अगर चौखट में कुछ कोठरियां अन्डे रहित मिलें, तब मां-मौन को उसी में खोजना चाहिए । इसके अतिरिक्त भी मां-मौन अगर नई हो तो वह बड़ी लजीली भी होती है । जिस चौखट में वह होगी उसके बाहर निकलते ही वह सामने से पीछे की ओर भाग पड़ती है। वह छिपने की सी चेष्टा करती है। मौनों की घबराहट से इस बात का अनुभव किया जा सकता है। मौनें इसकी रक्षार्थ चौकन्नी रहती हैं। इसके भयभीत होते ही, भागने की चेष्टा करते ही वे भी इसी के पीछे भागती हैं। यों तो पुरानी माँ-मौन बड़ी धैर्यवान मालूम होती है । वह चौखट के बाहर निकलने पर भी अपने अन्डे देने का कार्य नहीं छोड़ पाती है । अनेकों बार अन्डे देते हुए वह देखी जा सकती है। इस काल उसका पेट कोठरी के भीतर रहता है । केवल सिर व पर ही बाहर को रहते हैं । अगले दो पावों से वह कोठरी की सामने की दीवार को और पिछले दो पाँवों से पीछे की दीवार को पकड़े रहती है। इसलिये भी उसे एकाएक देख लेना कठिन ही होता है।

यों तो इसके बाल, बदन व परों का रंग अन्य मौनों से भिन्नता रखता है। बालों में कुछ कुछ सुनहरापन और रंग में पैजनीपन रहता है । लेकिन फिर भी मौनपाल यथाशीघ्र खोज निकालने के लिये चमकते हुए रंग की बूंद इसकी पीठ पर लगा देते हैं। यह रंगने की क्रिया बड़ी आसान होती है । इसके लिये मां-मौन को पहिले हाथ से पकड़ लेना चाहिये और एक पतले ब्रुश से किसी चमकते हुए शीघ्र सूख जाने वाले रंग की एक बूँद इसकी पीठ पर डाल देनी चाहिये। जब वह बूँद कुछ सूख जावे तब उसे मौनो के मध्य छोड़ देना चाहिये।

प्रत्येक निरीक्षण में माँ-मौन को देख लेना ही आवश्यक नहीं होता है । अगर कुछ सन्देह हो तभी उसे देखने की चेष्टा करनी चाहिये । अन्य कालों में ताजे अन्डों के परिमाण से मौनगृह में इसके होने का विश्वास किया जा सकता है।

मां-मौन के पर काटना--उड़ने के लिये परों का प्रयोग ही प्रत्येक उड़ने वाला प्राणी करता है। मौनों के पास भी उड़ने के लिये नन्हे नन्हे से

पर होते हैं। मा-मौन, जिसका कार्यक्षेत्र घर के भीतर ही होता है। अपने इन परों का प्रयोग या तो घर छोड कर भागने के लिये ही करती है या गर्भाधान काल में गर्भार्य उडान के लिये ही करती है। जैसा कि मौनपालन का तनिक भी ज्ञान रखने वाला कोई भी व्यक्ति जानता है कि मौनें बिना माँ-मौन के नहीं भागती हैं। इसलिये मौनों को घर छोड कर भागने से रोकने के लिये या अगर भाग ही पड़ें तो हाथ से न गँवाये जाने के लिये मौनपालों ने मा-मौन के पर काटने की क्रिया को अपनाया है। वास्तव में यह क्रिया लाभदायक भी होती है। अगर मौनपाल हर समय मौनालय पर उपस्थित नहीं रहता है तब मौनें उसकी अनुपस्थिति में कभी भी भाग सकती हैं।

जैसा कि अभी ऊपर कहा है कि मौनें बिना माँ-मौन के नहीं भागती हैं। अगर मा-मौन के पर कटे होंगे तो वह मौनों के साथ उडकर आने में असमर्थ रहेगी और मौनों को लाचार होकर भागने का इरादा या तो बदलना पड़ेगा या रोकना पड़ेगा। अगर माँ-मौन मौनागृह से बाहर मौनों के साथ निकल भी आवेगी, तब भी वह दूर नहीं जा सकेगी, उसे पास में ही कहीं बैठना पड़ेगा। उसके साथ ही साथ मौनों को भी ठहर जाना होगा। इस स्थान से मौनपाल उन्हें पुन. पकड कर मौनागृह में बसा सकता है। पर काटने से मा-मौन के अपने दैनिक कार्य में भी कोई बाधा नहीं आने पाती है।

पर काटने की विधि—मा-मौन मौनावश की प्राण होती है। साथ ही साथ उसका पेट भी बड़ा कोमल होता है। इसलिये मौनपाल की थोड़ी सी लापरवाही से भी उसे हानि पहुँच सकती है, तथा वह बेकाम हो सकती है। मौनपाल को माँ-मौन के पर काटने की क्रिया को अपनाने से पूर्व इस क्रिया में सिद्धहस्त हो जाना चाहिये। एक छोटी सी कैंची लेकर प्रथम नर-मौनों पर उसे इस क्रिया को सीखना चाहिये। इसके बाद जब पूर्ण चतुरता इस क्रिया में प्राप्त कर ली जाने तब ही माँ-मौन के पर काटने की चेष्टा करनी चाहिये।

इस क्रिया को अपनाने के लिये पहिले माँ-मौन को दाहिने हाथ से परों के बल पकड़ कर सावधानी से उसे बायें हाथ के अँगूठे व पहिली अँगुली के बीच सिर से पकड़ लेना चाहिये। इस काल ध्यान रखना चाहिये कि न तो माँ-मौन

दबने ही (चित्र ३६) पावे और न इतनी ढिलाई से ही पकड़ी जावे कि वह निकल कर भाग जावे। इस प्रकार पकड़ लिये जाने पर प्राकृतिक रूप से उसका पेट अपने को छुड़ाने की क्रिया में प्रयत्नशील पर से अलग नीचे को हो जावेगा और पर ऊपर उठ जावेंगे। तब दाहिने हाथ से तीक्ष्ण कैंची लेकर सावधानी से पर काट दिया जाना चाहिये। पर जड़ से कभी भी नहीं काटना चाहिये उसे मध्य में काट देने से भी काम चल जाता है। बहुत से मीनपाल दोनों पर साथ ही काट देते हैं। बहुत एक पर प्रथम वर्ष दूसरा दूसरे वर्ष में काटना ठीक समझते हैं। इससे माँ मीन की उम्र का भी ज्ञान उनको रह जाता है। इसके लिये वे सम वर्ष में दाहिना पर व विषम वर्ष में बाया पर काटते हैं।
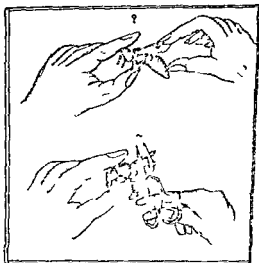
चित्र—३७ मा-मीन के पर काटना
१ माँ-मीन को सिर के बल पकड़ना २ पर काटना

सिद्धहस्त मीनपाल चाकू या ब्लेड से भी पर काट सकते हैं, क्योंकि पर बड़ा कोमल होता है। वह आसानी से कट जाता है। पर काटने में दो शर्तें ध्यान में रखनी चाहिये। पहली बात मा-मीन का पेट कदापि नहीं दबना चाहिये और दूसरी बात उसके पर जड़ से काटने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये।

मा-मीन जो सैकड़ों अन्डे प्रति दिन देती है, वास्तव में बड़ी ही कोमल होती है। पेट तो उसका सर्वाधिक कोमल होता है। हाथ से थोड़ा दब जाना भी उसे अन्डे देने की क्रिया में असमर्थ बना कर उसकी उपयोगिता को

ही नष्ट कर देता है। इसीलिये अनुभवी व दक्ष मौनपाल को ही यह काम करना चाहिये।

अनेकों बार इस क्रिया में मौनपाल के हाथ से मा-मौन छूट जाती है और आसमान मे उड़ पडती है। नया मौनपाल इससे बड़ा निराश हो उठता है और वह नई मा-मौन प्रवेश कराने की चिन्ता करने लग जाता है। वास्तव में यह अवस्था इतनी घबराहट की नहीं होती है। ऐसा हो जाने पर मौनपाल को मौनागृह या ढक्कन खुला ही छोड कर अलग बैठ जाना चाहिये और आसमान या मौनागृह के आसपास तीव्र दृष्टि रखनी चाहिये। मा मौन कुछ ही काल मे या तो मौनागृह में आ जावेगी या आसपास मे ही कहीं बैठ जावेगी। वह जहा भी बैठी होगी कुछ मौनें उसके पास अवश्य उडती हुई होंगी। कुछ ही काल में मौनागृह की मौनें उसे खोज लेंगी और मौनागृह मे ले आवेंगी। इस समय मौनपाल भी उसे पकड कर मौनागृह मे डाल सकता है।

अच्छी व बुरी मां-मौनों की पहचान—अच्छी व बुरी मा-मौनों की यो तो उनके अन्डे देने की गति व किस्म से ही पहिचान की जा सकती है। लेकिन बाहरी बनावट पर भी उनके गुण व काम अनेकों बार निर्भर करते हैं। प्राय. अच्छी मा मौनें निम्न प्रकार की होती हैं —

१ वह नाप में बड़ी व लम्बी होती हैं।
२. उसका पेट लम्बा व गहरे रंग का होता है।
३. सिर, सीने व पेट के पास वे बड़ी दिलाई से जुडी रहती हैं।
४. पाव लम्बे होते हैं।

जब कि बुरी मा-मौनों में इसके विपरीत निम्न बातें पाई जाती हैं.—

१. उसका आकार छोटा होता है।
२. पेट छोटा व चपटाकार होता है।
३. सिर, सीने व पेट बिल्कुल सटकर जुड़े रहते हैं।
४. पाव छोटे होते हैं।

२. कर्मठ-मौन

मां मौन का हाल अब आप जान चुके हैं, यह दूसरे प्रकार की मौन मौनावंश में पाई जाती है। पाई ही नहीं जाती है, बल्कि अगर कहा जाय कि मौन व मौनावंश का अस्तित्व ही इसे लेकर होता है तो भी कुछ अत्युक्ति नहीं होगी। जनन कार्य के अतिरिक्त मौनागृह के भीतर होने वाले अन्य समस्त कार्य यही मौन करती है। इसे ही कर्मठ मौन कहा जाता है।

नामकरण—बिना किसी की आज्ञा की बाट जोहे हुए, चौबीसा घंटे निस्वार्थ होकर जो अपनी जाति सेवा के कामों में ही रत रहे तथा मधु सदृश देव दुर्लभ स्वास्थ्य दायक पदार्थ का सञ्चय करने में गरमी, जाड़ा व बरसा का अधिक ध्यान किये बिना जो अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को कठिन परिश्रम में हा बिता दे, उस प्राणी के अलावा भी अन्य किसी के लिये क्या कर्मठ शब्द का सम्बोधन उचित और अधिक सार्थक हो सकता है? शायद नहीं, कर्मयोगियों में किसी भी कर्मयोगी से मौन का स्थान पीछे नहीं हो सकता है। इसीलिये अगर हम इसे कर्मठ शब्द से पुकारें, तो कोई अनुचित नहीं कहा जा सकता है।

पहिचान—इसकी पहिचान सरल है। मौनावंश में सबसे अधिक संख्या इन्हीं की होती है। इसका पेट कई समानान्तर धारियों से अलंकृत रहता है। प्रवेश द्वार पर अगर कुछ काल तक कोई ध्यान लगा कर देखे, तो सबसे अधिक कार्य व्यस्त यही मौनें पाई जायेंगी। पीले नीले व सफेद रंग के पराग का बोझ पावों पर लाद कर लाने वाली भी यही मौनें होती हैं। सब से बड़ी पहिचान तो इसकी यह होती है कि डंक मारने वाली भी यही होती हैं। नर मौन व मा-मौन डंक नहीं मारती हैं।

जन्म—मा-मौन का गर्भाधान हो चुकने के बाद ही, इन मौनों का जन्म सम्भव होता है। मा-मौन व इनका जन्म एक ही प्रकार के अन्डे से होता है। केवल भोजन के अन्तर से ही इनके आकार व्यवहार व कर्मों में अन्तर आ जाता है।

यह तीन दिन तक अण्डावस्था में, ४, ५ दिन तक कीटावस्था में तथा ११, १२ दिन तक घोर कोषावस्था में रह कर लगभग १६, २० दिन में अपनी पूर्णावस्था को पहुँच कर मौन के रूप में प्रकट हो जाती है।

जन्म के बाद—कोठे से बाहर निकलते ही मौन सर्व प्रथम अपने पर व बदन को सहलाने लगती है। फिर अपनी जाति की भलाई के लिये कर्म-क्षेत्र में उतर पड़ती है। प्रथम दिन वह कोई भी विशेष काम नहीं करती है। बदन को सहलाना, खुले कोठों से शहद खाना व इधर उधर घूमना ही उसकी प्रथम दिन की दिनचर्या होती है। दूसरे दिन से वह कार्य भार ग्रहण कर लेती है, और कीटों की परवरिश करने लग जाती है।

कार्य-विभाजन—मौनवंश में कोई भी शासक या आज्ञा देने वाला नहीं होता है। मा-मौन को रानी तो अवश्य कहा जाता है, लेकिन शासन के अर्थ में यह सम्बोधन उसके लिये पूर्णरूप से अनुपयुक्त ही है। इनकी दुनिया का सीधा सा नियम है। अपनी आवश्यकतानुसार लेना और अपनी शक्ति व योग्यतानुसार जाति की भलाई के लिये ही परिश्रम करना। इसके लिये अयोग्य हो जाने पर जीवन से भी मुक्ति पा लेना। वास्तव में कैसा परिशोधित साम्यवाद इनकी दुनिया में है।

कोई भी मौन जो घायल होकर जाति की सेवा करने में असमर्थ हो जाये कदापि घर के भीतर बैठकर खाने को जीवित नहीं रहेगी। वह या तो स्वयं ही बाहर निकल कर अपना प्राणान्त कर लेगी या बिना उसकी पिछली सेवाओं का ध्यान किये हुए वह अन्य साथी मौनों द्वारा पकड़ कर बाहर करदी जायेगी। ममता व निर्ममता का कैसा विचित्र संयोग इनके जीवन में होता है। एक ओर तो एक दूसरे से इतना ममत्व कि किसी मौन के लिये भी अलग रह कर अपना जीवन बिताना बिल्कुल ही असम्भव होता है और दूसरी ओर किसी के थोड़ा भी जाति सेवा के अयोग्य हो जाने पर निर्ममता से उसे घर से बाहर कर देने में भी ये कभी नहीं हिचकिचाती हैं।

कर्तव्य या कार्य के अनुसार मौनों का जीवन दो भागों में विभाजित रहता है। पहला जीवन का पूर्वार्द्ध भाग, दूसरा उत्तरार्द्ध भाग।

में भी ये गुण कुछ न कुछ मात्रा में अवश्य ही आ जायेंगे। आवश्यकतानुसार काम करने की प्रेरणा मौनों में अपने आप किसी आन्तरिक प्रेरणा के अनुसार ही आ जाती है।

गंध की पहिचान—यह एक विचित्र सी ही बात है कि मौनों के कान व नाक नहीं होते हैं, लेकिन फिर भी सूंघने व सुनने की शक्ति उनमें अत्यधिक पाई जाती है। भिन्न भिन्न अवसरों पर उनकी ध्वनियां भी अलग अलग होती हैं। अमृतधार के समय, वकछूट के समय उनका गुञ्जन अलग ही प्रकार का होता है। दब जाने पर या किसी और कष्ट में पड़ जाने पर उनकी ध्वनि बड़ी करुणाजनक रहती है। ऐसा ही मा-मौन के खो जाने पर भी उनका हाल होता है। आखिर ध्वनियों में इस विभिन्नता का क्या कारण हो सकता है। क्या दूसरों को अपनी अवस्था से परिचित करने के लिए ही ये ऐसा नहीं करती हैं? अवश्य करती हैं। जब वकछूट होने को होना है तो पहिले कुछ मौनें बाहर निकल कर विचित्र प्रकार की ध्वनि से वातावरण को गुंजा देती हैं और शीघ्र उनके साथ और भी मौनें आ मिलती हैं। उसी प्रकार जब मौन डंक मार देती है तो वह विचित्र प्रकार की ध्वनि करती है। साथ ही साथ डंक से एक अद्भुत गंध भी निकलती है। जिसके बाद ही अनेकों मौनें उसी स्थान पर डंक मारने की चेष्टा करने लगती हैं। आखिर वे एकाएक ऐसा क्यों करने लगती है। क्या उस डंक की गंध व डंक मारने वाली उस मौन की करुणाजनक वाणी ही उनको इसके लिए प्रेरित नहीं करती है। उसी प्रकार अपने व पराये घर की मौन व मा-मौन की पहिचान वे यथाशीघ्र कर लेती हैं। मौनों की सूंघने व सुनने की यह शक्ति कहां होती है? इस पर अभी खोज चल ही रही है। कुछ मौनपालों का मत है कि उनकी यह शक्ति स्पर्शेन्द्रियों में होती है लेकिन इसमें अभी मतभेद है।

मौनों का आराम व नींद—मौनें जब बाहर से काम करके लौटती हैं, तो प्रायः वे दुबारा काम के लिए बाहर निकलने के स्थान पर छत्ते में आराम से टहलने सी लगती हैं, कोठियों में घुस कर आराम सी करने लगती

यूपेन एपियरीज (हिमालयाज), मधुबन, रामगढ़, जिला नैनीताल (संयुक्त प्रान्त) का केन्द्रीय कार्यालय
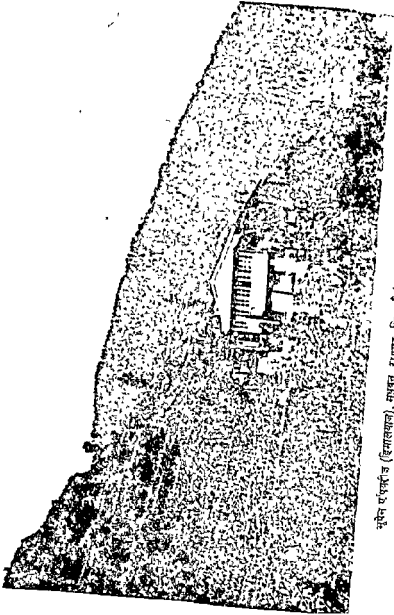
रावत मोनालय, रानीखेत

के नाम से पुकारते हैं। इन नृत्यों से मौनें हर्ष तो मनाती ही हैं, साथ ही साथ अपनी साथी मौनों को अमृत व पराग मिल पाने की दिशा व दूरी की भी सूचना दे देती हैं। ये नृत्य दो प्रकार के होते हैं। पहिला अमृत-नृत्य और दूसरा पराग-नृत्य।

अमृत-नृत्य—जब बाहर से अमृत की प्राप्ति बहुलता से होने लगती है तब मौनें इस प्रकार का नाच करते हुए देखी जाती हैं। अमृत के भार से लदी मौन घर के भीतर आते ही अमृत का बोझ कोठरी में उतार कर या सेवक मौनों को सौंप कर, एक छोटे से घेरे में कई बार गोलाई में नाचती है। आधा मिनट से कुछ मिनट तक वह ऐसा करती है। साथ ही साथ एक ही छत्ते पर दो तीन स्थानों पर वह इस प्रकार का नाच करते हुए देखी गई है। इसी को मौनपाल अमृत-नृत्य के नाम से सम्बोधित करते हैं।

पराग नृत्य—यह दूसरे प्रकार का नृत्य होता है। इसे मौनें तब करती हैं, जब कि बाहर पराग बहुलायत से पाया जाने लगता है। इसमें पराग का बोझ लादे हुए मौन अर्द्ध-चन्द्राकार गोलाई में नाचती है, और फिर उसी गोलाई से लौट कर प्रथम स्थान से ही घेरे की दूसरी ओर की गोलाई को भी पूर्ण कर लेती है। इसी को मौनपाल पराग-नृत्य के नाम से जानते हैं।

ये ऊपर वर्णित दोनों नृत्य अमृत व पराग के मिल पाने के समाचार के तथा इनके मिल पाने की दिशा व दूरी के सूचक होते हैं।

अमृत व पराग का संग्रह करना—मौनें अपनी एक यात्रा में प्रायः एक ही जाति के फूलों से अमृत व पराग का संग्रह करती हैं। कभी कभी एक ही यात्रा में अलग अलग जाति के फूलों से भी इनका संग्रह करते हुए देखा गया है लेकिन ऐसा बहुत कम ही होता है।

इसी प्रकार से अधिकांश मौनें एक यात्रा में अमृत व पराग में से केवल एक ही का संग्रह करते पाई गई हैं। लेकिन कभी कभी अमृत व पराग दोनों का साथ साथ संग्रह करते भी उन्हें देखा जाता है।

अमृत व पराग का कोठरियों में जमा करना—पराग का बोझ लेकर मौन जब घर के भीतर प्रवेश करती है, तो उसे उतार फेंकने के लिये वह अधिक आतुर नहीं दिखाई देती है। कभी तो बड़ी देर तक छत्ते के ऊपर वह आराम से घूमती रहती है। वह पराग जमा करने के लिये सावधानी से कोठरी का चुनाव करती है। अधिकांश इस हेतु नर-कोठरी ही चुनी जाती है। लेकिन स्थानाभाव की दशा में कोई भी खाली कोठरी वह इसके लिये चुन लेती है, या आधी पराग से भरी गई कोठरियों में भी वह अपना बोझ उतार देती है। अण्डे बच्चे वाले कोठों में पराग भर देने की भूल उससे कदापि नहीं हो सकती है। पराग लाने वाली मौन कोठरी में पराग के बोझ को धकेल कर फेंक सी जाती है। अन्य सेवक मौनें उसे उचित प्रकार से सभालने का काम करती हैं।

ठीक इसी प्रकार अमृत लाने वाली मौन भी अमृत को जमा करने में सावधानी से ही काम लेती है। अमृत को कभी तो मौन स्वयं कोठरी में उतार देती है और कभी अन्य सेवक मौनों को सौंप कर बाहर निकल जाती है। वे सेवक मौनें ही उसे कोठरियों में सभालने का काम करती हैं।

अमृत का शहद में परिवर्तन—मौनें फूलों से जो अमृत सग्रह करती हैं वह बिल्कुल पानी के समान पतला होता है तथा उसमें वे सभी तत्व भी विद्यमान नहीं रहते हैं जो कि शहद में पाये जाते हैं। मौन का काम इस अमृत को शहद में परिवर्तन करने के लिये इसे गाढ़ा करने का तथा इसमें शहद के सभी उपयोगी तत्वों को पैदा करने का होता है। अमृत में लगभग ८० प्रति सैकड़ा पानी का अंश विद्यमान रहता है। जब कि शहद में कठिनाई से यह अंश १६ से २० प्रतिशत ही पाया जाता है। इसी प्रकार अमृत में गन्ने की चीनी का अंश अधिक मात्रा में रहता है जब कि इसके शहद में परिवर्तित कर दिये जाने पर यह चीनी किसी भी शहद में दो ढाई प्रतिशत से अधिक नहीं रहती है। अमृत को इसी शहद में परिवर्तन करने की क्रिया को ही हम मधु का पकाना कहते हैं।

कुछ मौनपालों का मत है कि अमृत को गाढ़ा करने की क्रिया का कुछ

अश मौन गस्ते में ही तब कर लेती है, जब कि पूजा से इसे संग्रह करके वह घर को लौटती है। लेकिन अधिकांश का मत इसके यही है कि मौनें इस पूरी क्रिया को घर के भीतर ही अमृत को कोठरी म जमा कर दिये जाने के बाद ही करतीं हैं। इसमें आवश्यक नहीं है कि वही मौन इस क्रिया को करे जो कि अमृत को बाहर से लाती हैं। यह क्रिया मौनों द्वारा सामूहिक रूप में की जाती है। अधिकांश यह क्रिया रात म ११, ११॥ बजे तक होती रहती है। जब कि मौन को दिन के कामों से छुट्टी मिल जाती है। इस काल मौनपाल अगर मौनगृह पर कान लगा कर सुने तो एक अत्यन्त सुरीली भनभनाने की ध्वनि सुनाई देती है। जब यह क्रिया समाप्त हो जाती है, तब एक दम सुनसानी व सन्नाटा सा छा जाता है।

इसके लिये मौनें अपने आप तीन समूहों में विभक्त हो जाती हैं। पहले समूह का काम गर्मी पैदा करना और अमृत की बूंद को मुह म लेकर उसे मधु में परिवर्तित करने का होता है। इस काल केवल मौन के भीतर ही पाये जाने वाले कुछ रस भी उस अमृत में मिल मिल जाते हैं कि इससे विद्यमान गन्ने की चीनी का अधिकांश भाग फलों की व अंगूर की चीनी में बदल जाता है। यही वह क्रिया है जो मौन की उपयोगिता को कभी भी कम नहीं होने देती। रसायन शास्त्रियों के लिये इस रस का निर्माण करना कठिन ही नहीं असम्भव भी है।

इसी क्रिया के समय, अगर मौनों को छत्ता बनाना होता है तो वे छत्ते बनाने का काम भी करती हैं। मौनपाल शहद को पकाने की व छत्ता बनाने की क्रिया में बड़ा सामञ्जस्य मानते हैं।

दूसरा समूह पंखा करके भीतर की भाप भरी नम हवा को बाहर धकेलने का और तीसरा बाहर की शुष्क हवा को भीतर पहुंचाने का उपयोगी काम करता है। इस प्रकार अमृत में से उड़ने वाला पानी का अंश सरलतापूर्वक वायु के साथ बाहर निकल जाता है।

मोम पैदा करना—मौन को छत्ते बनाने के लिये बड़ी आवश्यकता होती है। यह मौन के शरीर से निकला एक मोम का पदार्थ होता है। इसके लिये ऊंचे तापमान की आवश्यकता होती है। मौन शहद को खाती है, और

तब उसके शरीर में मोम का बनना सम्भव होता है। यह पेट के नीचे होने वाली ८ मोमी-ग्रन्थियों से बाहर को निकलता है। मौन मुंह से मोम पैदा नहीं करती है।

रंग, समय, स्वाद व स्थान की पहिचान—मौन को इन सब की पूरी पहिचान होती है। वह पास पास के विभिन्न रंगों में रंग दिये जाने पर अपने घरों को सरलतापूर्वक पहिचान लेती हैं। ठीक प्रातःकाल वह काम पर लग जाती है। संध्या को ठीक समय पर घर को लौट आती हैं। आंधी व पानी के आने की जब सम्भावना होती है, तब वह एकाएक घर को लौट पड़ती है। फूलों में अमृत के संग्रहार्थ उसी काल पहुंचती हैं, जब कि उनमें अमृत निकलता है। इसी प्रकार अपने घर के चारों ओर के स्थान को कम से कम १, १॥ मील की परिधि में वह पूर्ण रूप से पहिचानती है। इतने क्षेत्र में कहीं पर भी छोड़ दिये जाने पर वह सरलतापूर्वक अपने घर लौट आती हैं। इन बातों से स्पष्ट होता है कि मौन को उपर्युक्त सभी बातों की सही जानकारी रहती है।

मौनी-गोंद—यह एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ होता है। जो मौनागृहों के छिद्रों को बन्द करने या छत्तों को चिपकाने के काम आता है। मौनें इसको पौधों की कोपलों से या उनमें से निकलने वाले चिपचिपे पदार्थ से संग्रह करती हैं। यह भी पराग-टोकरियों में भर कर लाया जाता है। इसे उतारने के लिये मौन को अन्य मौनों की सहायता लेनी पड़ती है।

मौन का डंक—डंक का प्रयोग करने वाली भी यही कर्मठ जाति की ही मौन होती है। इसका प्रयोग यह हमेशा आत्म-रक्षार्थ ही करती है। किसी को कष्ट पहुँचाने की या छेड़ने की भावना इसमें नहीं रहती है। अगर मौनपाल विज्ञ हो तो वह बिना एक भी डंक लगे हुए सैकड़ों मौनागृहों का सफलतापूर्वक निरीक्षण कर सकता है। (चित्र ३८) उन्हें नंगे हाथों से इधर उधर कर सकता है। वास्तव में मौनपालन व मौनों के बारे में जानकारी का न रहना ही डंक का कारण होता है। मौन हमेशा तभी डंक का प्रयोग करती है जब कि उसको कोई

चोट पहुँचती है या पहुँचने की आशंका हो पड़ती है। इस आशंका का कारण मौनव्रत का अभद्र या कठोर व्यवहार ही होता है।

चित्र—३८ मौनों से बनाई गई दाढ़ी

अपनी रक्षा का एक मात्र व अन्तिम अस्त्र डंक ही मौन के पास होता है। जो मौन एक बार डंक मार बैठती है, वह साथ ही साथ अपने जीवन को भी दाँव पर लगा देती है। प्रायश्चित का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है। जिसके जीवन का प्रत्येक क्षण परोपकार के कामों में ही बीतता हो, उससे अगर अज्ञान में भी किसी का अनिष्ट हो पड़े, वह उसके प्रायश्चित के लिये जान को भी दे देने की कोशिश कर बैठे, तो कदापि अनुचित नहीं कहा जा सकता है।

मौन का डंक आरीनुमा बना होता है। मनुष्य का मांस इतना कठोर होता है कि जब मौन कभी डंक मार बैठती है तो वह मनुष्य के मांस में गड़ जाता है। मौन के लिये इसे छुड़ा लेना बड़ा ही कठिन हो जाता है। जब

वह छुड़ाने के लिये शक्ति का प्रयोग करती है, तो डक मय उससे सम्बन्धित अवयवों के निकल कर मनुष्य के मांस में गड़ा ही रह जाता है। मौन को इससे सदा के लिये विलग होना पड़ता है। जिसका फल कुछ ही काल में मौन को मृत्यु के रूप में मिलता है।

डक से बचने के उपाय—मौन के डक से बचने का सरल व साधारण उपाय यही है कि मौनों के सम्पर्क में आने के लिये सावधानी से काम लिया जावे। उनकी आदतों के बारे में पूर्ण जानकारी रक्खी जावे और उनकी आदतों के अनुसार उनसे व्यवहार किया जावे। निरीक्षण उचित प्रकार, उचित काल में सावधानी पूर्वक किया जावे। अगर इस पर भी कोई मौन डक मार ही बैठे तो उस मौन को तत्काल स्वयं ही मार दिया जावे, अन्यथा वह अपनी करुणा-जनक वाणी से अन्य मौनों को भी डक मारने के लिये प्रेरित करेगी। इसके अलावा जिस स्थान पर डक मारा गया हो, चाकू या नाखून से एक किनारे से डक को बाहर निकाल कर, वहां पर कोई घास आदि मल देनी चाहिये। डक से एक प्रकार की सुगन्ध निकलती है। उससे अन्य मौनें भी डक मारने के लिये आकर्षित होती हैं। इसलिये उस सुगन्ध को मिटा देना उपयुक्त रहता है। डक को ऊपर से खींच कर कभी भी नहीं निकाला जाना चाहिये। क्योंकि ऊपर से खींचने से डक और भी भीतर घुस जाता है, उसका विष और भी भीतर प्रवेश कर लेता है।

यों तो डक कोई हानिकारक वस्तु नहीं है। गठिया, वात के लिये इसे उपयोगी माना जाता है। हां अधिकता प्रत्येक वस्तु की बुरी होती है। अगर डक की जलन अधिक प्रतीत हो, तो उसे निकाल कर उस स्थान पर खट्टी वस्तु, फिटकरी, अमृतांजन या मिट्टी तेल जो भी उपलब्ध हो सके मल दिया जाना चाहिये। इससे अवश्य कुछ आराम मिलता है। पानी में गंधक घिस कर लगाने से भी आराम पहुंचता है। गंधक न मिलने पर सलाई की नाक की गंधक पानी में घिस कर भी लगाई जा सकती है। सिरका, कच्चा प्याज भी इसके लिये ठीक होता है।

है। लेकिन बात इसके विपरीत ही होती है। जीवों में यही एक अभागा होता होगा, जिसको अपना सम्पूर्ण जीवन बिना किसी जीवन सहचरी के एक कट्टर सन्यासी की भांति बिताना पड़ता है। अगर किसी को जीवन सहचरी प्राप्त करने का सौभाग्य मिल भी जावे, तो उसको इसका मूल्य अपने जीवन के ही रूप में चुकाना पड़ता है। न मालूम प्रकृति का इस बेचारे नन्हे से जीव पर क्या कोप है। इसका अपने जन्म, जीवन व मृत्यु पर कोई भी अधिकार नहीं होता है। मौनें अपनी आवश्यकतानुसार ही इन्हें जन्म लेने देती हैं और आवश्यकता के पूरी होते ही इनका विनाश भी कर डालती हैं।

पहिचान—इनकी पहिचान बड़ी ही सरल होती है। यह कर्मठ मौन से कुछ बड़ा व मा मौन से छोटा होता है। बदन इसका अधिक बाल वाला होता है। सिर व पेट काले, गोल व चपटे आकार के बने होते हैं। बसन्त में इनकी मौनागृह में उत्पत्ति बढ़ जाती है। अन्य कालों में मौनागृहों में ये बहुत ही कम या बिल्कुल ही नहीं दिखलाई पड़ते हैं। इनकी गुंजन की ध्वनि बड़ी तीव्र व स्पष्ट होती है। आत्म रक्षार्थ इन बेचारों के पास डंक भी नहीं होता है।

जन्म—इनका जन्म भी बड़ा विचित्रतापूर्ण होता है। इसके जन्म में पितृ पक्ष नहीं होता है। इसकी केवल माता होती है, पिता नहीं। मा-मौन इसको बिना किसी पुरुष के सहवास के अपनी कौमार्यावस्था में भी पैदा कर सकती है। कर्मठ, जिनमें कि गर्भाशय कभी भी नहीं होता, वे भी इसे जन्म दे सकते हैं।

इसको ३ दिन तक अन्डावस्था में लगभग ७ दिन कीटावस्था में व १४ दिन तक कोष कीटावस्था में लग जाते हैं। इस प्रकार अन्डे से मौन बन कर निकलने में इसको लगभग २४ दिन लग जाते हैं।

नर मौन की भी कोष कीटावस्था एक कोठरी के भीतर बीतती है। ये कोठरियां ठीक उसी तरह की होती हैं, जिस प्रकार की कर्मठ कोठरियां होती हैं। केवल नाप में ये कुछ बड़ी होती हैं। अधिकांश छत्ते के निचले भाग में ही इन्हें बनाया जाता है।

कर्मठों से उत्पन्न पुरुष-मौन—अगर किसी कारणवश मौनगृह की मौन विहीन हो जाता है और मौना को नई माँ मौन या उसे बनाने के लिये उपयुक्त साधन नहीं मिल पाते हैं, तो अनेकों कर्मठ-मौनें स्वयं भी अंडे देना प्रारम्भ कर देती हैं। इन कर्मठों को कर्त्तव्यच्युत कर्मठ कहा जाता है। ये कर्मठ हमेशा एकमात्र पुरुष-मौन के ही अन्डे दे सकती हैं। इनके द्वारा उत्पन्न पुरुष-मौन आकार में बहुत ही छोटे होते हैं। वे ठीक कर्मठ के ही आकार के होते हैं। यद्यपि मा मौन को गर्भित कर सकने की सामर्थ्य इनमें होती है। लेकिन वे ऐसा बहुत ही कम कर पाते हैं।

नर-मौन की शरीर रचना—कर्मठ-मौन से इसकी शरीर रचना भी भिन्न ही होती है। इसका सिर व मिश्रित आँखें बड़ी होती हैं। पर भी बड़े होते हैं। इसके पिछले पाँवों में पराग-टोकरियाँ भी नहीं होता हैं। इसकी जीभ पुष्पों से अमृत संग्रह कर पाने के अयोग्य होती है। मधु-सञ्चयक थैली इसके भीतर अवश्य होती है। लेकिन वह इतनी छोटी होती है कि उसमें अधिक अमृत संग्रह नहीं किया जा सकता है। डंक तो इसका होता ही नहीं है।

आदतों की विचित्रता—शरीर तो नर मौन का भिन्नताओं से पूर्ण होता ही है। साथ ही साथ कर्मठ मौनों से इसकी आदतें भी भिन्न ही होती हैं। इसको जन्म लेने में अन्य मौनों से देर लगती है। इसी प्रकार यौवन भी इसको देर में ही आता है। मौनागृह के भीतर कुमारी माँ-मौनों के प्रति यह आकर्षित नहीं होता है। इसकी ध्वनि अन्य मौनों से तीव्र होती है। ठंडक को यह बहुत ही कम पसन्द करता है। गरमी में यह आनन्द से रह सकता है। अपने स्थान की इसको भी पूर्ण पहिचान होती है। लेकिन नये स्थान को यह अधिक देरी से पहिचान पाता है।

कर्मठों का इसके प्रति बर्ताव—कर्मठ मौनों का इसके प्रति बड़ी लापरवाही का व्यवहार होता है। वे इसके आने-जाने की अधिक चिन्ता नहीं करती हैं। किसी भी मौनागृह में बिना बाधा के यह प्रवेश पा सकता है।

माँ मौन के गर्भाधान काल में ये इनको पैदा होने देती है, अन्य काल में स्वयं ही इन्हें मार मार कर समाप्त कर डालती हैं।

आयु—नर-मौन को अगर अपनी आयु मरना हो, तो यह मा मौन से भी अधिक जीवित रह सकता है। लेकिन इसका जीवन व इसकी मृत्यु हमेशा परवश ही रहती है। यह अधिक से अधिक दो-ढाई मास जीवित रह पाता है। वसन्त में मौनगृह में अवश्य इनकी संख्या बढ़ जाती है। लेकिन अमृतश्राव के थमते ही इन्हें भी नष्ट कर दिया जाता है। अमृतश्राव के समय में व कुंआरी मा-मौन के मौनागृह में होने की दशा में इन्हें जीवित रहने दिया जाता है।

उपयोगिता—नर मौन सिवाय मा-मौन के गर्भाधान के और कोई भी काम नहीं करता है। इससे यह बिल्कुल अनुपयोगी ही प्रतीत होता है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। गर्भाधान करने का काम भी बड़ी उपयोगिता रखता है। माँ मौन के अण्डे देने की गति व उसके द्वारा उत्पन्न मौनों में जो गुण आते हैं उनमें नर मौन की बड़ी प्रधानता रहती है। इसलिये मा-मौन के गर्भाधान में हमेशा ध्यान रखना चाहिये कि हमेशा उसका गर्भाधान अच्छे वंश के पूर्ण विकसित नर मौन द्वारा ही होना चाहिये।

नर मौन भीतर सञ्चित मधु के बहुत बड़े भाग को खा डालते हैं। इसलिये मौनगृह व मौनपाल दोनों के लिये कभी भी इनकी अधिकता लाभदायक नहीं होती है। अमृतश्राव के बाद अगर मौनागृह में कुमारी मा-मौन न हो तो इन्हें नष्ट कर ही डालना चाहिये।

नष्ट करने की विधि—नर मौन को पुरुष पाश लगा कर नष्ट किया जाता है। जब भी मौनागृह में नर मौन अधिक दिखाई देने लगें, उन्हें पुरुष पाश से नष्ट कर दिया जाना चाहिये। पुरुष पाश से नर-मौन बाहर तो आ जाते हैं, लेकिन भीतर नहीं जा सकते। किसी एक काल समस्त मौनागृहों के द्वार पर पुरुष पाश लगा देने चाहिये। संध्या को जितने नर मौन बाहर रह जावें उन्हें नष्ट कर डालना चाहिये। अगर सभी मौनागृहों पर ये पाश नहीं लगाये जायेंगे तो एक से निकाले गये नर मौन दूसरे में घुस जायेंगे। अगर पुरुष पाश न हो तो मा मौन रोक पट के टुकड़े से पुरुष पाश बना लिया जा

सकता है। इसे द्वार पर लगा कर मौनों के चौखटों को अन्तारक पट के सहारे कोई पटरा खड़ा रखके, उसमें समाचारपत्र बिछा कर झाड़ देने से नर-मौनों को भीतर जाने से रोका जा सकता है। इस प्रकार कर्मठ मौनें तो अन्दर चली जायेंगी, केवल नर-मौन ही बाहर रह जायेंगे। उन्हें बाद को नष्ट किया जा सकता है।

सबसे सरल विधि नर-मौनों के उत्पादन को रोकने की उनके छत्तों के निर्माण को बन्द कर देने की हो सकती है। अगर नर-कोठरिया छत्तों पर कम बनाई गई होंगी तो नर मौना का उत्पादन भी कम ही होगा। विदेशों में सही नाप के छत्ताधार देने से यह काम किया जाता है। लेकिन हमारे लिये सही नाप के छत्ताधार अभी प्राप्य नहीं हैं। इसलिये मौनागृह से उन छत्तों को हटा कर, जिनमें नर-कोठरिया अधिक बनाई गई हों, हम इस काम को कर सकते हैं, या शिशुपालन के समय में हमें छत्ते से उस भाग को तोड़ देना चाहिये, जिसमें नर कोठरिया अधिक बनाई गई हों।

मधुपूर्ण चौखट

मौना गृह का निरीक्षण

अध्याय ८
मौनागृह का निरीक्षण

आधुनिक चल-चौखट-युक्त मौनागृह की यही सबसे बड़ी विशेषता है।
हम उसका समयानुसार निरीक्षण कर सकते हैं और मौना-वंश की प्रत्येक भीतरी गति विधि से परिचित हो सकते हैं। यही वैज्ञानिक-मौन-पालन में सफलता की कुंजी है। क्योंकि हम प्रत्येक समय जान सकते हैं कि मौनावंश उन्नति कर रहा है या अवनति। ज्योंही किसी कारण से मौनावंश अवनति कर रहा हो, यथाशीघ्र उसका पता लगाकर, उसका उचित उपचार करके हम मौनावंश को उन्नति की ओर ले जा सकते हैं। इसलिये प्रत्येक मौ पाल का कर्तव्य हो जाता है कि वह १५ दिन में एक बार मौनागृह का आन्तरिक निरीक्षण अवश्य करे और वकछूट-काल में सप्ताह में एक बार निरीक्षण अवश्य करे। अन्य समय में भी मौनागृह के प्रवेश मार्ग पर आने जाने वाली मौनों से मौनावंश की गति का परिचय लेते रहें। अनुभवी मौनपाल केवल प्रवेश-मार्ग पर दृष्टि डाल कर ही भीतरी गति को मालूम कर सकता है।

मौनपाल को प्रत्येक मौनावंश के बारे में एक निरीक्षण-तालिका बनाकर रखनी चाहिये जिसमें निरीक्षण की प्रत्येक बात व उपचार सम्बन्धी प्रत्येक बात अंकित रहनी चाहिये। ताकि उसको देख कर दूसरे निरीक्षण के समय मौनपाल जान सके कि मौनावंश प्रगति कर रहा है या अवनति।

निरीक्षण-तालिका— एक बड़े तात्र में निम्न प्रकार कोष्ठ बनाकर मौनागृह की निरीक्षण-तालिका मौनपाल को रखनी चाहिये। बहुधा मौनपाल इस निरीक्षण-तालिका को मौनागृह के अन्दर ही शिशु-खण्ड या मौनागृह के ऊपर अन्तर्पट लगाकर, उसके व ढक्कने के बीच में, जहां मौनों का पहुंचना सम्भव न हो सके, रख देते हैं। परन्तु ध्यान रहे, जब मौनागृह में नमी की मात्रा बढ़ रही हो, तो यह नमी से बिगड़ने न पाये, और यह इस प्रकार भी न रखा जाये कि मौनें ही इसे कुतर कुतर कर फेंक डालें। निरीक्षण-तालिका निम्न भांति होनी चाहिये,

निरीक्षण-तालिका

स्थिति.......................

किस्म मौन प्राप्ति ....

प्राप्ति की तिथि......

मौनावंश संख्या . ...

किस्म मौनागृह............ ....

मां-मौन बदलन की तिथि...... ....

तिथि	मौन-युक्त चौखट संख्या कर्मठ व नर-मौनों की संख्या	शिशु मौनें						भोजन		शत्रु	रोग	मौना-वंश का कार्य विवरण	उपचार या नया प्रबन्ध	परिणाम
		अन्डे		कीट		कोष-कीट								
		कर्मठ	नर	कर्मठ	नर	कर्मठ	नर	शहद	पराग					

इन उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त अन्य बातें अपनी आवश्यकतानुसार मौनपाल इस तालिका में अंकित कर सकता है।

निरीक्षण के लिये उपयुक्त काल—निरीक्षण सदैव दिन में करना चाहिये जब कि आसमान स्वच्छ हो, धूप खिली हो, हवा वर्षा का नाम न हो। ऐसे समय में निरीक्षण करने से काटे जाने का भय कदापि नहीं रहता है। प्रथम तो इस समय अधिकांश सग्रही मौनें मौनागृह से बाहर काम पर गई होती हैं। दूसरा धूप में मौनागृह खुलने से मौनों को कष्ट अनुभव नहीं होता है। क्योंकि मौनागृह के अन्दर मौनें बहुत ऊँचे ताप मान में रहने की आदी होती है। ठंडे में मौनागृह खुलने से उनको कष्ट होता है। बहुत गरम में भी यह काम ठीक नहीं होता। अधिक धूप में छत्ता के पिघल कर टूटने का भय रहता है।

निरीक्षण करने के लिये आवश्यक तैयारी—मौनागृह का निरीक्षण करने जाने से पूर्व मौनपाल को धुआँकर जला लेना चाहिये। चाकू व मुक्तक-यन्त्र साथ में रख लेने चाहिये। तथा सिर पर मौनी जाली अवश्य लगा लेनी चाहिये। बहुत से मौनपाल बिना जाली पहिने मौनावंश देखना बहादुरी समझते हैं। परन्तु यह वीरता नहीं मूर्खता है। क्योंकि मुह पर मौनपाल के डंक लगना, मौनपालन के प्रति देखने वालों में भय व घृणा पैदा करने के लिये कम नहीं हैं। मौनपाल को कभी भी ऐसा अवसर नहीं आने देना चाहिये।

निरीक्षण करने के लिये बैठने का उचित स्थान—मौनपाल को मौनागृह का निरीक्षण करने के लिये कभी भी सामने से नहीं आना चाहिये। हमेशा अगल या बगल से मौनागृह का निरीक्षण करना उचित होता है। (चित्र ३६)

निरीक्षण करने में सावधानी की बातें—मौनागृह का निरीक्षण करते समय मौनपाल को निम्न बातों की सावधानी रखनी चाहिये अन्यथा उसे अपने काटे जाने का भय तो रहता ही है, साथ ही साथ मौनावंश को भी हानि पहुँचने की सम्भावना हो सकती है—

(१) मौनागृह का ढक्कन शीघ्रता से या झटके से कभी भी न हटावें।

ऐसा करने से मौनों में भय की भावना फैलती है। वे फाटे को जोर्नित हो उठती हैं। तथा प्रत्येक बार वे अपना जोर मौनपाल पर उतार बैठती हैं।

चित्र—३१ बठने का उचित स्थान

(२) चेहरे पर मौनी जाली अवश्य लगा लेवें, मौनागृह के सम्मुख से कभी भी मत, होवें, तथा ढक्कन हटाने ही धुआंकर से थोड़ा धुआं मौनागृह में अवश्य दे देवें। धुंयें से मौनों में डरने की भावना सी जाग उठती है तथा वे शहद खाने की ओर प्रवृत हो उठती हैं। शहद से भरी मौन डंक मारने को कम प्रवृत होती हैं।

(३) मौनागृह के बाहर शहद को न गिरने देवें क्योंकि इससे लूट होने की आशंका रहती है।

(४) सबसे आवश्यक बात जो ध्यान देने योग्य है वह है हाथों की स्थिरता। मौनपाल के हाथ चौखटों को उठाते समय कभी भी अस्थिर न हों। मौन के डंक मारने पर भी हाथों में अस्थिरता नहीं आनी चाहिये। डंक की जलन को सरलता पूर्वक सह लेने की मौनपाल को आदत होनी चाहिये। सावधानी से डंक निकाल कर अपना कार्य प्रारम्भ रखना चाहिये, न कि घबरा कर चौखट को फेंक दे या डंक मारने वाली मौन को हिलाकर भगाने की चेष्टा करें। मौन चाहे कहीं पर बैठ जावे, यदि मौनपाल स्थिर रहेगा तो वह कुछ ही काल में स्वयं उड़ जावेगी और कभी भी नहीं काटेगी। यदि मौनपाल भय से शीघ्रता करने लगे, स्थिरता छोड़ दे, हिलने लगे, या हाथ में मौन को

भगाने लगे तो मौन अवश्य काट देगी और एक के डंक मारते ही अनेकों मौनें डंक मारने को प्रयत्नशील हो उठेंगी। जब मौन डंक मारती है तो वह एक करुणाजनक शब्द करती है, जिसे सुनकर अन्य मौनें भी सतर्क हो जाती हैं और आत्मरक्षार्थ डंक का प्रयोग करने लगती हैं। इसके लिये उस मौन को, जिसने डंक मार दिया हो उड़कर अन्य मौनों को सतर्क करने से पूर्व ही, समाप्त कर देना चाहिये। इसके अतिरिक्त मौन के डंक से एक विचित्र प्रकार की तीक्ष्ण गंध निकलती है जो अन्य मौनों का ध्यान खतरे की ओर आकृष्ट करती है। इससे बचने के लिये, डंक के ऊपर कोई घास पत्ती मलकर डंक की गंध को मिटा देना चाहिये और फिर आगे कार्य करना चाहिये। हाथों में (Talcum Powder) टैलकम पौडर मलने से भी डंक कम लगते हैं।

निरीक्षण करने का सही ढंग—मौनागृह निरीक्षण करने के लिये सर्व प्रथम मौनपाल को मौनागृह के दायें या बायें खड़े होकर, धुआकर से एक दो धक धुयें की प्रवेश मार्ग से भीतर को दे देनी चाहिये (चित्र ४०) फिर ढक्कन को हटाकर सुविधानुसार एक ओर रख लेना चाहिये। यह ढक्कन बैठने के प्रयोग में भी लिया जा सकता है। यदि अन्तर्पट लगा हो तो उसके निर्गमनछिद्र से दो तीन धौंक धुयें की भीतर को दे दी जावें। यदि अन्तर्पट न लगा हो, तो वैसे ही चौखटों के ऊपर को धुवा दे दिया जावे। फिर सावधानी से अन्तर्पट को हटाकर एक ओर रख लिया जावे।

चित्र—४० धुआकर से धुआ देना

अब देखें कि मौनों ने कितने चौखटों को घेर रक्खा है। यदि कुछ चौखटें मौनों से रिक्त हों तो मौनवंश को कम, उन्हीं रिक्त चौखटों की ओर खड़ा रहना चाहिये और रिक्त चौखटा को बाहर निकाल कर रख देना चाहिये,

फिर प्रत्येक चौखट को बारी बारी से अपनी ओर खिसका कर, यदि वह दूसरे से चिपकाया गया हो, तो प्रथम उसे छुड़ाकर, ऊपर निकाल लेना चाहिये।

चित्र—४१ चौखट बाहर निकालना

(चित्र ४१) उसका अच्छी प्रकार निरीक्षण करके, जो कुछ उसमें करना हो वह सब करके, फिर उसे उसी स्थान पर रख देना चाहिये। इसी प्रकार अन्य चौखटों को सावधानी से पूर्व भाति ही रख देना चाहिये। शीघ्रता में मौनों के दबने का व कटे जाने का भय रहता है। चौखटों को पुनः रखने में एक बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि उनके बीच में व अगल बगल में अन्तान्तर चौथाई इंच से कम न रहने पावे। देख लेने के पश्चात निरीक्षण-तालिका में सब बातें अंकित कर लेवें और फिर सावधानी से अन्तर्पट रखकर ढकन लगा देवें और इसी प्रकार अन्य मौनागृहों का भी निरीक्षण करें।

चित्र—४२ चौखट के भीतरी भाग का निरीक्षण

यदि सम्पूर्ण चौखटों पर मौनें काम कर रही हों तो सर्व प्रथम देख लेवें कि

किसी किनारे का चौखट सरलता पूर्वक बाहर निकल सकता है। मुक्त-यंत्र के सहारे उसे बाहर निकाल लेवें और निरीक्षण करने के बाद शिशु-कक्ष के सहारे
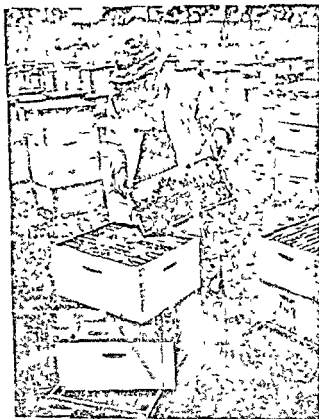
चित्र—४३ चौखट के बाहरी भाग का निरीक्षण

प्रवेश मार्ग के पास आरोहक पट पर रख देवें या इस हेतु बनाई गई खूंटी पर टांग कर रख देवें और फिर प्रथम भांति ही प्रत्येक चौखट को बारी

बारी से निकाल कर देखते जायँ और उनके पूर्व स्थान पर रखते जायँ। जब सम्पूर्ण चौखट देख लिये जायँ तो बाहर रक्खे चौखट को भी यथा स्थान रख देवें।

चिपके हुए चौखटों को खाली हाथ के जोर से छुड़ाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये बल्कि छुरा-यंत्र की सहायता से उन्हें छुड़ाना चाहिये।

चौखटों को देखने की विधियाँ—चौखटों का निरीक्षण हम दो प्रकार से कर सकते हैं। पहला बिना चौखटा घुमाये हुए और दूसरा चौखट को घुमा कर। इनमें पहली विधि सरल है।

पहली विधि—यदि प्रकाश की कमी न हो तो इसी विधि से चौखट देखे जा सकते हैं। इसके लिये प्रथम चौखट के दो सिरों पर दो हाथ रख लेने चाहिये और चौखट को सावधानी-पूर्वक मौनागृह से बाहर निकाल कर उसे ज्यों का त्यों, सामने मुँह से कुछ नीचे रोक लेना चाहिये। इसके लिये चाहे मौनपाल खड़ा हो या बैठा, उसे दृष्टि नीचे को करके देखना पड़ेगा। चौखट का नीचे का सिरा यदि भीतर की ओर को बढ़ाया जावेगा तो भीतर की ओर का धरातल सम्मुख आजावेगा (चित्र ४२) और यदि नीचे की ओर का सिरा बाहर को बढ़ाया जावेगा तो बाहरी धरातल सम्मुख आ जावेगा (चित्र ४३) इस प्रकार चौखट के दोनों ओर की जाँच हो सकती है।

१—बाहर की ओर का निरीक्षण करने की विधि

२—भीतर की ओर का निरीक्षण करने की विधि

चित्र—४४ निरीक्षण के लिये चौखटों को घुमाने की पहिली विधि

दोनों ओर का निरीक्षण करने के लिये चौखट मौनागृह से ऊपर चित्र में दिखलाये गये बिन्दु-द्वार चौखट की स्थिति में उठाया जाता है। फिर

निरीक्षण करने के लिये अपने चौखट की स्थिति में रखके उसका निरीक्षण किया जाता है। (चित्र ४४)

दूसरी विधि—(चित्र ४५) इस विधि में अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। यदि चौखट पर अधिक मौनें लगी हों तो शीघ्रता से इस क्रिया को करने में मौनों के गिर पड़ने का भय रहता है।
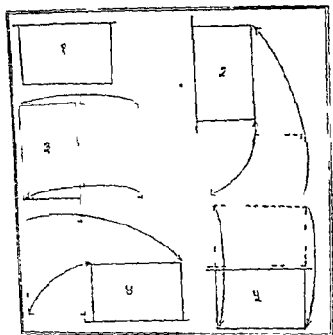
चित्र—४५ निरीक्षण के लिये चौखट घुमाने का दूसरी विधि

सर्व प्रथम मौनागृह से चौखट को निकाल कर अपने मुंह के समीप व सम्मुख, ऊपर चित्र ४५ में दिखलाये गए स्थिति १ की भांति रख लेना चाहिये और सामने वाले भाग का निरीक्षण कर लेना चाहिये। निरीक्षण कर लेने के पश्चात दूसरी ओर का निरीक्षण करने के लिये चौखट को निम्न प्रकार घुमाना चाहिये।

बायें हाथ को अपने ही स्थान पर रोक कर दायें हाथ वाले भाग को ठीक ऊपर को इस भांति उठायें कि चौखट के ऊपर नीचे के डंडों के स्थान पर अगल बगल के डंडे पृथ्वी के समानान्तर, स्थिति २ में दिखलाये गये काले रंग के चौखट के समान हो जायें। फिर उसी दोनों हाथों से दरवाजे की चूल की भांति घुमाकर स्थिति ३ के समान कर लेना चाहिये। इस प्रकार चौखट का पिछला भाग सम्मुख आ जावेगा। अब बायें हाथ को अपने स्थान पर रोक कर दायें हाथ वाले भाग को नीचे की ओर इतना लायें कि, स्थिति ४ में दिखलाये गये काले रंग के चौखट के समान, चौखट के नीचे ऊपर के डंडे पृथ्वी के समानान्तर आ जायें। इस स्थिति में स्थिति १ से इतना ही अन्तर रहेगा कि चौखट का नीचे का डंडा ऊपर व हाथ से पकड़ा हुआ डंडा नीचे आ जावेगा। अब चौखट के दूसरी ओर । निरीक्षण किया जा सकता है क्योंकि अब दूसरी ओर का भाग सम्मुख रहेगा।

निरीक्षण हो चुकने पर चौखट को स्थिति ५ की भांति घुमा कर अपनी सही स्थिति १ की अवस्था में लाकर मौनागृह में यथा स्थान रख लेना चाहिये।

निरीक्षण करते समय देखने योग्य बातें व करने योग्य काम—मौनागृह का निरीक्षण करते समय मौनपाल को समय व ऋतु का ध्यान अवश्य रखना चाहिये। तभी समयानुसार मौनों की सही आवश्यकता का उसे अनुभव हो सकता है। संक्षेप में प्रत्येक ऋतु में निम्न बातों का उसे ध्यान रखना चाहिये —

वसन्त ऋतु—इस ऋतु के ही उचित प्रबन्ध पर, मौनपाल की अत्यधिक सफलता निर्भर करती है।

इस ऋतु में निम्न लिखित बातों को देखना मौनपाल के लिये आवश्यक होता है —

(१) मौना वंश शक्ति शाली है या नहीं। यदि बहुत ही शक्तिहीन है तो उसको शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न करें।

(२) मौना वंश में भोजन की कमी न रहने पावे। यदि मधु व पराग का संग्रह उचित मात्रा में न हो तो उनको पूरिकारक भोजन देने की व्यवस्था करें।

(३) मा-मीन को अन्डे देने के लिये स्थान की कमी न रहे। उसको उचित मात्रा मे कर्मठ मौन की कोठरी वाले छत्ते दे दें।

(४) मा-मीन की कार्य गति कैसी है। यदि सतोषजनक नहीं है तो उसे बदलने का प्रबन्ध करें।

(५) यह काल ही वक्छूट काल होता है। वक्छूट होने से मौनावंश की शक्ति विभाजित हो जाती है। इसलिये वक्छूटों का हो जाना मौनपाल की अनुभव हीनता का सूचक होता है। इस समय मौनपाल को मौनों की वक्छूट करने की प्रवृति का उचित ध्यान रखना चाहिये। उन्हें इस ओर प्रवृत्त होते पाते ही वक्छूट होने से रोकने का प्रयत्न करना चाहिये।

ग्रीष्म ऋतु—इस काल मौनपाल को देखना चाहिये कि मौनों को गरमी से अधिक कष्ट तो नहीं हो रहा है। इस से बचने के लिये छाया व पानी का प्रबन्ध करना चाहिये। ऐसे स्थानों में जहा गरमी अधिक मात्रा में पड़ती है दिन मे मौनागृह के ऊपर पानी से भीगा वस्त्र डाल देना चाहिये और मौनागृह में वायु के प्रविष्ट होने के लिये उचित प्रबध कर देना चाहिये।

वर्षा ऋतु—इस ऋतु में मौनपाल को निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये.—

(१) इसी काल शक्तिहीन मौनवंश में मोमी-पतिंगा प्रकट हो जाता है इसकी उचित देख-भाल भी पाल को करनी चाहिये।

(२) मौनागृह के अन्दर पानी को प्रविष्ट नहीं होने देना चाहिये।

(३) मौनावंश में भोजन की कमी नहा होने देनी चाहिये।

शीत-काल—इस ऋतु मे जो स्थान अधिक ठडे हो जाते हैं वहा निरीक्षण करने की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती है। क्योंकि शीत-कालीन बन्धन कर दिया जाता है। हाँ नवम्बर तक निरीक्षण करने की आवश्यकता होती है। इस काल भी मौनों को भोजन देने की ओर उचित ध्यान देना चाहिये। इसके बाद एक दो बार कभी अच्छी धूप के दिन देख लेना चाहिये कि मौनागृह में भोजन की कमी तो नहीं हो रही है, तथा मौनागृह में सीलन तो नहीं आ रही है। शीत-कालीन बन्धन करते समय नम वायु के

बाहर निकालने का मार्ग छोड़ देना चाहिए। यह मार्ग शिशु-खण्ड के ऊपरी भाग पर एक गोल छिद्र बनाकर किया जा सकता है।

प्रत्येक मौसम में निरीक्षण करते समय ध्यान देने योग्य बातें—अब कुछ बातें ऐसी होती हैं जो कि मौनपाल को प्रत्येक मौसम में निरीक्षण करते समय ध्यान में रखनी चाहिए। ये निम्न प्रकार हैं:—

(१) निरीक्षण करते समय मौनपाल को मौनवंश में कमेरी-मौन व नर मौनों की संख्या का ध्यान रखना चाहिये। तथा कमेरी व नर-मौनों के अंडे-बच्चों का भी ध्यान रखना चाहिये। इसी से मौन-वंश की उन्नति तथा अवनति का अनुभव हो सकता है।

(२) मौनगृह में संचित मधु व पराग की मात्रा पर ध्यान रखना चाहिये। इसी से मौनपाल को ऋतुभार का अनुभव हो सकता है। तथा वह भूख से मौनों को मरने व भागने से बचा सकता है।

(३) मौनी-शत्रु व रोगों का ध्यान रखना चाहिये ताकि उचित काल में इनका उपचार किया जा सके।

(४) मां-मौन का पता रखना चाहिये। यदि वह न देखी जा सके तो ताजे अन्डे बच्चों से उसका होना न होना निश्चित किया जा सकता है।

(५) यदि मां मौन के बारे में शंका हो तो शीघ्र ही सावधानी से देखकर शंका का समाधान कर लेना चाहिये ताकि कर्तव्यच्युत कमेरों के होने से पूर्व उन्हें मां मौन या उसे उत्पन्न करने के साधन दिये जा सकें।

(६) यदि सहायक व संयोजक छत्ते बन रहे हों तो छत्तान्तर सही करके, उन्हें बनने से रोकने की व्यवस्था करनी चाहिये।

(७) नर-मौनों की कोठियां वाले छत्ते न बनने दिये जावें।

(८) पिछले निरीक्षण के समय किये गये उपचारों की प्रतिक्रियाओं की ओर ध्यान देवें और उससे आगे को काम करें।

(९) चौखटों का निरीक्षण कर चुकने के बाद अन्तिम बात यह ध्यान में रखी जावे कि प्रत्येक चौखट के किनारों व मध्य भाग का छत्तान्तर सही रहे। चौथाई-इंच,से यह कम न हो। अन्यथा सहायक-छत्ते बनने की सम्भावना होती है।

अध्याय ६
शिशु-पालन

शिशु—मौनों के ससार मे शिशु शब्द का प्रयोग उस अवस्था की मौनों के लिये किया जाता है, जब कि वे कोठरी के भीतर ही रहती हैं। यानी जब मौन अडावस्था, कीटावस्था और कोष-कीटावस्था मे रहती हैं। तब हम उन्हें शिशु कह कर सम्बोधन करते हैं। इसके बाद कोठरियों से निकल आने पर उन्हें कुमार मौन और बाद को युवा मौन कह कर पुकारा जाता है।

शिशु-पालन—शैशवावस्था की मौनों के परवरिश की प्रत्येक क्रिया शिशु पालन के नाम से पुकारी जाती है।

शिशु-पालन का समय—शिशु पालन की क्रिया मां मौन के अडे देने पर निर्भर करती है। माँ-मौन के अडे देने की गति, मौसम की अनुकूलता, भोजन की प्राप्ति तथा मौनागृह मे स्थान की उपयुक्तता पर निर्भर करती है। जिन स्थानो पर हमेशा ये अवस्थाएँ कुछ न कुछ मात्रा मे विद्यमान रहती है वहा शिशु पालन भी हमेशा चलता ही रहता है। हां, उसमें कमी व अधिकता समयानुकूल आती रहती है। प्रधानतः हमारे देश मे दो प्रधान अमृतस्राव होते हैं। जिनमे बाहर पुष्पो की अधिकता रहती है और मौनों को पर्याप्त मात्रा में भोजन मिलता रहता है। इनमें पहला अमृतस्राव वसन्त में व दूसरा कार्तिक यानी अक्टोबर व नवम्बर मास मे होता है। इसलिये शिशु पालन भी इन्हीं दो समयो पर अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच जाता है।

शीत प्रदेशो में फरवरी मास से अधिकाश शिशु-पालन वृद्धि करने लगता है और मई, जून तक अपनी उन्नति पर पहुंच जाता है। इसके बाद इसमे कमी आजाती है और बरसात में कभी कभी तो यह बिल्कुल ही बन्द हो जाता है। बरसात समाप्त होते ही इसमें फिर वृद्धि होने लगती है और अक्टूबर, नवम्बर में यह पुन अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच जात. है। इसके बाद फिर

इसमें उतार आता है और यही फरवरी के बाद से वृद्धि होने लगती है। अधिकतर कुछ न कुछ मात्रा में यह हमेशा ही चलता रहता है। बरसात व शीत के कुछ दिन ही इसमें रोक दिखाई देती है।

शिशुओं के प्रकार—*मौना-वंश में मौनों के ही अनुसार शिशु भी* तीन प्रकार के पाये जाते हैं। मा-मौन शिशु, कर्मठ-शिशु तथा नर-शिशु। इनके जन्म, अवस्था आदि के बारे में पहले ही बतला दिया जा चुका है। इनका शैशवकाल तीन विभागों में विभक्त रहता है। अण्डावस्था, कीटावस्था तथा कोष-कीटावस्था। अण्डावस्था व कीटावस्था में उन्हें मुक्तकीट कह कर पुकारा जाता है क्योंकि उस काल कोठरियों का मुंह जिनमें उन्हें परवरिश मिलती है, खुला रहता है। उसके बाद उन्हें बन्द-कीट कहा जाता है। इस समय कोठरियां पूर्ण रूप से बन्द कर दी जाती हैं।
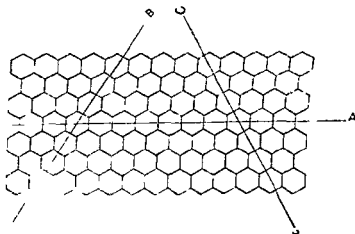
चित्र—४६ कोठरियों के निर्माण में मौनों की दक्षता

कोठी या कोठरी—प्रत्येक मौन अपनी शैशवावस्था एक कोठी या कोठरी के भीतर बिताती है। ये कोठरियां भी तीन प्रकार की होती हैं। पहली कोठरी वह होती है *जिसमें मां-मौन अपनी शैशवावस्था बिताती है।* इसे मां-मौन कोठी कहा जाता है। यह अंगूठाकार, गोल, थैलीनुमा छत्ते से प्रायः लटकी हुई

होती हैं और मौनागृहों में तब ही दिखाई देती हैं जब कि मां-मौन बन रही हो। उसके जन्म लेते ही अधिकांश यह नष्ट कर दी जाती हैं क्योंकि यह और दूसरे कुछ भी काम नहीं आसकती है। दूसरे और तीसरे प्रकार की कोठरियां समस्त छत्ते में बिखरी रहती हैं। वास्तव में इन्हीं से मिलकर एक पूर्णछत्ता बनता है।
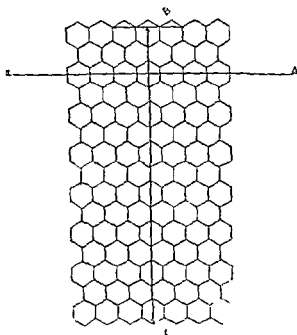
चित्र—४७ कोठरियों के निर्माण में मौनों की दक्षता

ये कोठरिया भीतर को गहरी षटभुज होती हैं और सही नाप की बनी होती हैं। (चित्र ४६, ४७)

इनके कोणों में तक अन्तर निकालना असम्भव होता है। इनमें कुछ कोठरियां नाप में बड़ी होती हैं और कुछ छोटी। बड़ी कोठरियों में नर-मौन परवरिस पाते हैं। इसलिये इन्हें नर-कोठरी कहा जाता है और छोटी मे कर्मठ-मौन परवरिस पाती हैं। इसलिये इन्हें कर्मठ-कोठरी कहते हैं। ये

कोठरियां जब तक कार्य के योग्य रहती हैं, नष्ट नहीं की जाती है। क्योंकि मधु व पराग के संग्रह करने के लिये भी यही कोठरियां काम में आती हैं। नर कोठरियां अधिकांश छत्ते के नीचे व ऊपर के भाग में बनायी जाती हैं। बन्द अवस्था में इनको बन्द कोठरी और खुली अवस्था में खुली या मुक्त-कोठरी कहा जाता है। वैसे ही पराग या मधु भर दिये जाने पर उन्हें पराग-कोठरी व मधु-कोठरी कह कर पुकारते हैं।

मधु भर दिये जाने पर या मौना की शैशवावस्था समाप्त हो जाने पर इन कोठरियों को पूर्णतः बन्द कर दिया जाता है। नया मौनपाल प्रायः इस समय इन्हें पहचानने में कठिनाई अनुभव करता है। लेकिन थोड़े से अभ्यास के बाद ही यह सरल हो जाता है। नर-कोठरियां प्रायः बड़ी व ऊपर उठी हुई होती हैं। कर्मठ-कोठरियां छोटी व सतह से कुछ उठी होती हैं। मधु की कोठरियां समतल बन्द की जाती हैं। रंग में भी इनमें अन्तर आ जाता है। मधु-कोठरियों का रंग प्रायः हल्का सफेद होता है जब कि कर्मठ व नर कोठरियों का रंग पीलापन लिये होता है।

चित्र—४८ शिशुपालन का घेरा

मां मौन का अन्डे देना—मां-मौन दो प्रकार के अन्डे देती है। यह बात अन्यत्र बता दी गई है। प्रायः यह कोठरी को देखकर ही अन्डे देती है। बड़ी कोठरी में हमेशा नर का व छोटी में अंडे का अंडा दिया जाता है। अंडा कोठरी के तले में अधिकांश कोठरी के

दीवार के समानान्तर ही दिया जाता है। शीत-काल या बरसात के बाद जब मौसम में गर्मी आने लगती है तब मौनों का घेरा भी खुलने लगता है। इसी समय मा-मौन भी अंडे देने की गति बढ़ाने लगती है। ज्यों ज्यों मौना मंडल फैलता जाता है, त्यों त्यों उसके अंडे देने का क्षेत्र भी विस्तृत होता जाता है। मौना मंडल के ही अनुसार अंडे भी अर्द्ध-चन्द्राकार वृत्त में दिये जाते हैं। जब मौसम गरम हो जाता है तब मौना-मंडल खुल जाता है। तब मा मौन भी सारे छत्ते में अंडे देती है। (चित्र ४८)

मौन की शैशवावस्था (चित्र ४६) अंडे से लेकर पूर्ण-मौन बनकर बाहर निकलने तक मौन के जीवन में कई बदलाव होते हैं। जो बड़े रोचक भी होते हैं। मा मौन के अंडे देने के कुछ ही समय बाद से अंडे में गति प्रारम्भ हो जाती है। इसके अंडे ने बाहर से भी अन्य अंडों की भाँति ही छिलका कठोर होता है। तीन दिन के बाद जब कि कीट जन्म लेने को ही होता है, अंडे का छिलका अधिक पारदर्शक बन जाता है। उस काल माइक्रस्कोप की सहायता से कीट देखा भी जा सकता है। जब कीट जन्म लेने को ही होता है, अंडे की स्थिति में बदलाव होने
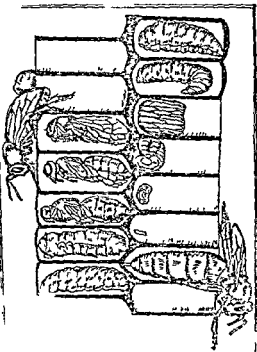
चित्र—४९ कीट की अंडे से मौन बनने तक की कुछ अवस्थायें।

लगता है। सेवक मौनें जो समय समय पर कोठरी में सिर डाल कर देखभाल करती हैं, कीट के खाने के लिये भोजन की बूंद इस चाल रख देती हैं। जब यह बूंद बढ़ कर अंडे पर लगती है तब अंडा फूट जाता है। और कीट बाहर निकल आता है। शीघ्र ही वह अंग्रेजी अक्षर 'C' 'सी' के आकार का बन जाता है।

कोठरी में सेवक मौनें समय समय पर खाने को रख देती हैं। कीट कोठरी के तले पर वृत्ताकार घूमते रहता है और खाना प्राप्त करते जाता है। कीटावस्था में कुछ दिनों तक सभी मौनों को मधु-अवलेह ही दिया जाता है। कीट के बढ़ने के साथ ही साथ इसके भोजन की मात्रा में भी वृद्धि होती जाती है। यहां तक कि कीट के चारों ओर भोजन भर दिया जाता है। सेवक मौनें भोजन को सूखने से बचाने के लिये समय समय पर उसमें नया भोजन रख देती हैं। वृत्ताकार घूमने से कीट भी भोजन को मिलाकर न सूखने देने में सहायक होता है।

चित्र—५० कीट की तीनों अवस्थायें
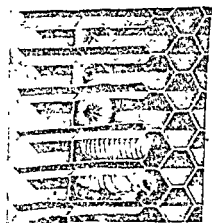
कोठरी के तले में कीट इसी प्रकार यहां तक बढ़ते जाता है कि वह पूरे तले के घेरे को ढक लेता है। उसके बाद उसकी स्थिति में फिर अन्तर आ जाता है। वह कोठरी की लम्बाई की ओर को बढ़ने लग जाता है। बढ़ते बढ़ते जब वह कोठरी को पूर्ण रूप से ढककर मुंह को बाहर की ओर कर लेता है तो फिर गतिहीन होकर शान्त हो जाता है। और तब तक शान्त ही रहता है जब तक कि वह मौन बन कर बाहर निकलने योग्य नहीं हो जाता। (चित्र ५०)

कीट व कोष कीटावस्था में मौन अनेक बार अपने चमड़े को बदलती है। कोटरी मे बन्द किये जाने पर कीट पर आकृति बनने लगती है। मुह, आखें, पाव एक एक करके बन कर रह एव सफेद रग भी पूर्ण-मौन दिखाई देने लगती है। फिर रग मे भी बदलाव आने लगता है और पूर्ण-मौन बनकर कोठरी का ढकन काट कर वह बाहर निकल आती है।

शिशु-पालन की परीक्षा—मौनगृह के भीतर शिशु पालन को देखकर मौनपाल मौनागृह की पूर्ण स्थिति का अनुभव कर सकता है। नये अंडों व कीटों को देखकर मा मौन के होने का निश्चय कर सकता है। अडे व बच्चों को देखकर मा-मौन की कार्यक्षमता व अवस्था का पूर्ण अनुभव हो सकता है। सख्या में थोड़े, बिखरी हुई अवस्था मे या नर शिशुओं की अधिकता, मा-मौन की वृद्धावस्था के स्पष्ट प्रमाण होते हैं।

शिशुओं के जन्म का मौनों की मृत्यु से सम्बन्ध—अमृत-स्राव के काल में मृत्यु से जन्म अधिक रहता है। जब कि अमृत स्राव के बाद जन्म सख्या बराबर घटने लगती है। यह भी कारण होता है कि अमृत-स्राव के पूर्व मौनागृह शक्तिशाली हो जाते है और उसके बाद शक्तिहीन।

शिशु-पालन के लिये गर्मी की आवश्यकता—गर्मी का शिशु पालन के लिये अत्यन्त महत्व है। शिशु पालन के लिये मौनागृह के भीतर का तापमान ६५° से कम नहीं होना चाहिये।

शिशु-पालन में मधु व पराग की उपयोगिता—मधु व पराग के न होने से शिशु पालन भी रुक जाता है। पाश्चात्य मौन पालों ने अपने अनुसन्धानों से पता लगाया है कि इन दोनों पदार्थों का शिशु-पालन के लिये विशेष महत्व है। उनका कहना है कि 'लैंगस्ट्राथ' नाप के एक चौखट के शिशुओं की परवरिश के लिये ४ पौन्ड तक मधु लग जाता है। शिशु-पालनकाल में मौनें दैनिक १½, २ पौन्ड तक शहद इस हेतु प्रयुक्त करती हैं। एक साधारण मौनावश साल में १०० पौन्ड से २०० पोन्ड तक शहद शिशु पालन पर व्यय करता है।

पराग की मधु से भी अधिक उपयोगिता शिशु पालन के लिये मानी गई है। ऐसे मौनावंश जिनको केवल मधु का ही भोजन दिया गया, शिशु पालन में वृद्धि करते नहीं पाये गए। कीट का भोजन पराग से ही तैयार होता है। और कुमार मौनों को भी भोजन में पराग विशेष रूप से दिया जाता है। मधु अवलेह मौनें पराग से तैयार कर पाती हैं। अनुमान है कि प्रत्येक पौंड मौन पैदा करने के लिए १ पौंड तक पराग खर्च हो जाता है।

मधुपाल और शिशु पालन यह बात तो हर कोई जान सकता है कि जिस कार्य में जितने व्यक्ति अधिक लगाये जायेंगे उसका उत्पादन भी उसी प्रकार बढ़ जायगा। मौनवंशों पर भी यह नियम लागू हो सकता है। लेकिन कुछ परिवर्तन के साथ यहां हम कहते हैं सही समय में मौनावंश की शक्ति का पराकाष्ठा पर पहुंच जाना ही अधिक मधु उत्पादन के लिये उपयोगी होता है। मधु उत्पादन का सम्बन्ध केवल मौनागृह की भीतरी अवस्थाओं से ही नहीं होता बल्कि बाहरी संसार से भी होता है। इसीलिये भीतरी अवस्था की साम्यता जब तक बाहरी अवस्था से नहीं हो जाती तब तक मौनपाल अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकता है। मौनें मधु के लिये पुष्पों से अमृत लेती हैं। पुष्प हमेशा एक ही मात्रा में नहीं फूलते हैं। इनका समय व मौसम होता है। इसी फूलों के खिलने के ही काल को हम अमृतस्राव काल कहते हैं। इसलिये मौनपाल को अपने स्थान के होने वाले अमृतस्रावों का सही ज्ञान रखना चाहिये और उन कालों का सम्बन्ध अपने मौनागृहों में होने वाले शिशु पालन से जोड़ना चाहिये, यानी जब बाहर अमृतस्राव अपनी पराकाष्ठा पर हो, उस समय मौनपाल के पास मौनगृहों में भी युवा-मौनों की संख्या अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच जानी चाहिए। जैसा कि युवा-मौनें ही मधु-संग्रह का कार्य करती हैं। बच्चों मौनों की मात्रा में वृद्धि, मधु-संग्रह में वृद्धि नहीं कर सकती है। वे तो इसके विपरीत सञ्चित मधु को ही कम करती हैं। अनेकों बार अमृतस्रावों पर देखा जाता है कि एक मौनावंश जिसमें कि मौनों की मात्रा कम थी अधिक मधु उत्पादन कर देता है और जिसमें मौनों की मात्रा अधिक दिखाई देती है कुछ भी मधु-संग्रह नहीं कर पाता है। इसका कारण युवा व

बची-मौनों का कम या अधिक होना ही होता है। इसलिये यही समय में शिशु पालन की वृद्धि करवाना मौनपाल के लिए अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। मौनों को समग्रही-मौन बनने के लिए ६ सप्ताह तक का समय आवश्यक होता है। अमृतश्राव आरम्भ होने के ६ सप्ताह पूर्व पैदा हुआ शिशु-ही अमृतश्राव से लाभ उठा सकता है। इसलिए मौनपाल के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह लगभग दो माह पूर्व से आने वाले मधुश्राव के लिए मौनावंश के शिशुपालन को बढाने की चेष्टा करे। इस काल उसे निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है।

(१) अगर मा मौन वृद्ध हो गई हो या उसके अंडे देने की गति म शिथिलता आ गई हो तो अन्यत्र से दूसरी गर्भित मा-मौन ला कर प्रवेश करवा दें।

(२) अगर अमृत का अभाव हो, मौनागृह म मधु का भंडार भी न हो तो चीनी का शरबत बनाकर खिलाना प्रारम्भ कर दें। मा-मौन के अन्डे देने की गति बाहर से आने वाले भोजन पर निर्भर करती है। अगर भोजन बराबर मिलता रहा तो उसे खाद्याभाव की चिन्ता नहीं रहती और वह अच्छे अमृतश्राव का अनुभव करके अपने अंडे देने की गति को तीव्र कर देती है।

(३) केवल शरबत ही देना शिशुपालन के लिये आवश्यक नहीं होता। शिशुओं का प्रधान आहार पराग होता है। यदि पराग की कमी होगी तब भी शिशुपालन ठीक प्रकार नहीं चल सकेगा। इसलिये पराग पूर्तिकारक भोजन देना भी इस काल के लिये अति आवश्यक हो जाता है। इसके लिये विदेशी मौनपाल तो अनेकों वस्तुयें मिलाते हैं। जैसे दूध में अण्डा मिला कर खिलाया जाता है। वहाँ अनेकों पराग पूर्तिकारक बनाये भोजन मिल जाते हैं। लेकिन हम यहाँ में ओगल यानी कोट् के आटे की रोटी बनाकर दे सकते हैं।

(४) मा-मौन को अन्डे देने के लिये स्थानाभाव नहीं होने देना चाहिये। अगर छत्तों की कमी हो तो आवश्यकतानुसार नये छत्ते दे दिये जाने चाहिये।

अध्याय १०

मां-मौन-हीन मौनावंश और कर्त्तव्य-च्युत कर्मठ

मा-मौन मौनावंश की प्राण होती है। उनके वंश का अस्तित्व इसी पर निर्भर करता है। जैसा कि एकमात्र मा-मौन ही सारे मौनागृह में अन्डे देने का काम करती है। वह भी एक दिन में सैकड़ों अन्डे तक दे देती है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि मौनावंश का कुछ दिन भी मा-मौन हीन रह जाना कितना अनिष्टकारक, मौनों के लिये हो सकता है। वास्तव में उनकी समृद्धि में यह एक बहुत बड़ी बाधा हो जाती है। माँ-मौन हीन मौनावंश हम उसी मौनावंश को कहते हैं, जो किसी कारण से भी अपनी मा-मौन को गवाँ चुका हो।

मौनागृह अनेकों कारणों से मा-मौन हीन हो जाता है। या तो मौनें बहुत समझदार होती हैं। वे अपने लाभ या हानि को समझती हैं। लेकिन बहुत बार परिस्थिति वश उनको अपनी हानि देखते हुए भी लाचार रह जाना पड़ता है। मा मौन या तो किसी कारण से स्वयं ही मर जाती है या गर्भाधान के समय बाहर किसी जीव द्वारा नष्ट कर दी जाती है। इसके अलावा बहुत बार हमारी लापरवाही से मौनावंश बदलते व निरीक्षण करते समय भी मां-मौन मर जाती है।

मा-मौन-हीन मौनावंश की पहिचान—अगर मौनपाल चतुर होगा तो उसे मौनों की कार्य विधि व गुञ्जन में मा मौन हीन वंश को पहिचानने में देर नहीं लगेगी। मा-मौन विहीन होने पर मौनें अधिकांश कुछ काल तक बड़ी परेशान हो जाती हैं। वे चारों ओर बिखर कर एक विचित्र प्रकार का दुःख पूर्ण गुंजन करते हुए उसकी तलाश करने लगती है। प्रत्येक छिद्र या बरतन या कोई और वस्तु जो भी उनको मिलती है वे उसी में ढूंढने का प्रयत्न सा करती हुई दिखाई देती हैं। यहां तक कि अनेकों बार लेखक ने देखा कि वे गुन गुन करते हुए लेखक के कान या नाक तक पहुंच आई।

इसके अलावा भी अगर मौनपाल की दृष्टि पैनी हो और उसको मौनागृहों के द्वारों पर दृष्टि डालने की आदत हो तो वह बाहर भीतर आने जाने वाली मौनों की गति विधि से भी मौनावंश के मां-मौन-हीन होने का पता लगा सकता है। ऐसी अवस्था में उनकी कार्य की गति में शिथिलता सी आ जाती है। वे सीधे दूर की उडान कम भरती हैं। पास ही तक उड उड कर लौट आती हैं।

अगर इनमें से कोई भी चिन्ह दृष्टिगोचर हों या किसी अन्य कारण से मौनपाल को मौनावंश के मा-मौन-विहीन होने का सन्देह हो जावे तो उसे शीघ्र ही मौनागृह खोलकर इस बात की पुष्टि कर लेनी चाहिये। इस निरीक्षण में अगर मा-मौन के ताजे अंडे न दिखाई देवें तो मा-मौन की खोजने का प्रयास करना चाहिये। क्योंकि बहुत बार अमृतस्राव के बन्द हो जाने पर भी मा-मौन अंडे देना रोक देती है। अंडे न मिलने पर एक दम मौनावंश के मा-मौन-हीन होने का निर्णय न कर लिया जावे। इस बात का निर्णय तो तभी करें जब एक दो और तीन बार देखने पर भी मां-मौन को न पा सकें।

मां-मौन-विहीन मौनावंश का उपचार—जब मौनपाल भली प्रकार जाच कर लेने के बाद निश्चित रूप से इस निर्णय पर पहुँच जावे कि मौनावंश माँ मौन-हीन हो चुका है तो फिर नवीन मा-मौन के प्रवेश कराने का प्रबन्ध करे। यो तो मौनें हम से अधिक अपने काम व आवश्यकता को जानती हैं। मां-मौन के खो जाने का या नष्ट हो जाने का ज्ञान होते ही, अगर साधन उपलब्ध हो तो वे नई माँ-मौन की बनाने का प्रयास करने लगेंगी। जैसा कि पीछे बतलाया जा चुका है। मा-मौन स्वयं पैदा नहीं होती, बल्कि पैदा की जाती है। विभिन्न अवस्थाओं में आवश्यकतानुसार मौनें किसी भी कमेठ के अंडे से मा-मौन को जन्म दिला सकती हैं। इसलिये मा-मौन-हीन मौनावंश का उपचार करने में या मौनावंश को नवीन मा-मौन की प्राप्ति करवाने में उसको यही देखना आवश्यक होता है कि मौनागृह में ताजे अंडो से व प्रत्येक अवस्था के मौनो से पूर्ण कोई छत्ता विद्यमान है या नहीं है। अगर नहीं है तो अन्यत्र से लाकर उन्हें ऐसा छत्ता दे देवें। ताकि मौनें नई मां-मौन बना सकें। इस समय भोजन शरबत के रूप में लगातार देना आवश्यक होता है। अगर कहीं से

दूसरी मां-मीन या बच्चे मा-मीन-कोटी प्राप्त हो सके तो उसे देना अधिक लाभदायक हो सकता है। क्योंकि इनसे मा-मीन शीघ्र प्राप्त हो सकेगी।

कर्तव्य-च्युत कर्मठ—मां मीन-हीन मीनावश से जो हानियाँ या निष्ट हो सकते हैं अब उसे बतलाना आवश्यक है। अगर मीनपाल लापरवाह हो तथा उचित रूप से उचित काल में मीनावशा का निरीक्षण न करता हो तो उसको ही ऐसी दशा में हानि की सम्भावना हो सकती है। जब कोई भी मीनावश किसी भी कारणवश मा मीन हीन हो जावे और उसको नई मा-मीन बनाने के लिये साधन उपलब्ध न हो सकें अर्थात उचित अवस्था का कर्मठ मीन का अण्डा न मिल सके, तो मीनें निराश हो जाती हैं और शायद अपने वश की रक्षा के लिये किसी भी उपाय को प्रयोग म लाने से नहीं हिचकती हैं। ऐसी अवस्था म कर्मठ-मीनों मे से अनेकों मीनें अडे देने का कार्य प्रारम्भ कर देती हैं। इनहा कमठ-मीनों को कर्तव्य च्युत कर्मठ कहा जाता है।

कर्तव्य च्युत-कर्मठ जब प्रकट हो जाते हैं तो फिर उस मीनावश का अस्तित्व ही समाप्त हो जाने की सम्भावना हो जाती है। क्योंकि जो कर्मठ-मीनें अडे देना प्रारम्भ कर देती हैं वे फिर स्वय मा मीन का स्थान ले लेती हैं। वे इतनी खतरनाक हो जाती है कि फिर साधन उपलब्ध होने पर भी माँ-मीन बनाने की चेष्टा नहीं करतीं और अगर माँ मीन कोटी दी जावे तो उसे यथाशीघ्र नष्ट कर देती हैं। यदि नई मा मीन दी जाय तो उसे तत्काल मृत्यु के धाम पहुंचा देती हैं। ऐसा एक छत्र साम्राज्य फिर उनको पसन्द हो जाता है। लेकिन दुर्भाग्य यह होता है कि वे मीनें जो अडे देती हैं वे केवल नर-मीन के ही होते हैं। जो मीनावश की समृद्धि के लिये किसी प्रकार भी योग्य नहीं होते। कर्मठ के अडे देने की शक्ति इनमें नहीं होती है। इसलिये एक समय ऐसा आ जाता है जब कि मीनागृह नर-मीनों से भर जाता है। और कर्मठ-मीनें धीरे धीरे नष्ट हो जाती हैं क्योंकि उनका उत्पादन बन्द हो जाता है।

इनके प्रकट होने में भी कुछ समय लगता है। लेखक ने अपने इस पर्वतीय प्रदेश की कुमाऊनी मीन में देखा है कि अधिकाश मीनें ६, ७ दिन तक मां-मीन विहीन रह जाती हैं और नवीन मा मीन बनाने के हेतु साधनों की प्राप्ति

की बाट देखती हैं, लेकिन इस काल जब वे मा-मौन पाने में असमर्थ रह जाती हैं तो ७ वें या ८ वें दिन से उस मौनावंश में अवश्य कर्तव्य-च्युत कर्मठ प्रकट हो जाते हैं। बस यहीं से उस सम्पन्न वंश का दुर्भाग्य प्रारम्भ हो जाता है।

कर्त्तव्य-च्युत कर्मठ. का पहिचान—कर्तव्य च्युत कर्मठों की आदमी को कोई पहिचान नहीं हो सकती है, जब तक कि वह स्वयं ही किसी को अन्डे देते हुए न देख लेवे। क्योंकि वे भी अपने साथी अन्य कमठों की भाति ही प्रत्येक प्रकार से होती हैं। हां इस बात को मौनपाल अवश्य जान सकता है कि कर्तव्य-च्युत-कर्मठ पैदा हो चुके हैं या नहीं। यह पहिचान सरल है। अगर मौनपाल को छत्तों में मा मौन के अन्डों को देखने का अवसर मिला हो और उसे उनकी पहचान भली प्रकार हो तो उनसे कर्तव्य च्युत-कर्मठों के अन्डो की विभिन्नता को देखकर वह उनकी उपस्थिति का ज्ञान पा सकता है।

सबसे बड़ी पहिचान इनकी यही होती है कि इनके अन्डे क्रमशः किसी सिलसिले से दिये नहीं होते हैं। वे एक एक कोठरी में २, ३ से लेकर दर्जन-दर्जन तक एक साथ देखे गये हैं। दूसरा जैसा कि कर्मठ का पेट मॉ-मौन के बराबर लम्बा नहीं होता है, वे अधिकांश कोठी के ठीक तले पर अन्डे नहीं दे पाती हैं। उनके अन्डे कोठरी की दीवार के सहारे दिये होते हैं। जब कि मा-मौन के अन्डे हमेशा कोठरी के तले में, प्रत्येक कोठरी में एक-एक ही दिया होता है। इसमें उससे चूक नहीं हो सकती है।

अगर कर्तव्य-च्युत-कर्मठों को प्रकट हुए अधिक काल हो चुका हो, और अन्डे कीटावस्था को प्राप्त हो चुके हों तो उनकी पहिचान और भी सरल हो जाती है। प्रत्येक कोठी में, इस काल एक साथ अनेकों कीट पलते हुए मौनपाल को दिखाई देंगे।

इन सबके अलावा यदि मौनपाल का ज्ञान सूक्ष्म हो, अनुभव अधिक हो तो उनकी गतिविधि से भी इस बात का पता चल सकता है। इस काल यदि मौनागृह खोला जावे तो मौनें सुस्त दिखाई देती हैं। काटने को भी अधिक प्रयत्नशील नहीं रहतीं। उनका रंग भी कुछ काला व चमकीला सा हो जाता है।

अन्तिम बातें—ये अब कुछ अन्तिम बातें ध्यान देने की हैं। अगर कोई मौनावंश मां-मौन विहीन हो चुका हो और आपने उचित अवस्था में उन्हें मां-मौन बनाने के हेतु कर्म-मौन के अण्डों से पूर्ण छत्ता भी दे दिया हो। इसके बाद भी लगातार आपको उन्हें तब तक निरीक्षण करते रहना चाहिये, जब तक कि मां-मौन प्रकट होकर अन्डे देना प्रारम्भ न कर दे। बहुत बार ऐसी लापरवाही से भी मौनपालों को हानि उठानी पड़ जाती है। वे समझते हैं कि अब तो मौनों को मां-मौन बनाने की सामग्री दे दी गई है। अब वे स्वयं मां-मौन बना लेंगी। लेकिन उनको यह देखकर आश्चर्य होता है जब कि वे नवीन मां-मौन के दर्शनार्थ मौनगृह को खोलते हैं और बदले में अनेकों कर्त्तव्यच्युतों को मां-मौन का कार्यभार संभाले हुए पाते हैं। क्योंकि बहुत बार परिस्थिति-वश मौनें माँ-मौन को दिये हुए छत्ते से नहीं बना पाती हैं। उन्हें पुनः दूसरा छत्ता दिया जाना चाहिये। और जब तक नवीन मां-मौन कोठरी रसकर पूर्ण रूप से बन्द नहीं कर दी जाती, तब तक दैनिक निरीक्षण करते रहना चाहिये। और देखते जाना चाहिये कि कर्त्तव्यच्युत तो प्रकट नहीं हो रहे हैं। मां-मौन बनाने का प्रयास किया जा रहा है या नहीं। इसकी पहिचान सरल है। अगर मौनें मा-मौन बनाने लगी होंगी तो छत्ते के निचले भाग में अनेकों कोठरियों पर कार्य प्रारम्भ हो चुका होगा। बहुत बार निचले भाग में अन्डे न मिलने पर, वे, मध्य में भी इस काम को करने लगती हैं।

अनेकों बार लेखक ने देखा कि एक ओर मां-मौन बनाने के प्रयास होने लगे और दूसरी ओर कुछ कर्त्तव्यच्युतों के अन्डे भी छिटके हुए दृष्टिगोचर होने लगे। इस समय मौनपाल को घबराना नहीं चाहिये। शीघ्रता भी नहीं करनी चाहिये। कुछ काल बाट देखनी चाहिये। अगर मां-मौन-कोठरियां सही रूप से बनी होंगी तो ज्यों ज्यों मां-मौन-कोठरियों पर कार्य बढ़ता जायगा। कर्त्तव्य-च्युत-कर्मठ लापता होते जायेंगे। क्योंकि उस समय उनकी संख्या बहुत ही कम हो ती है। और वे नष्ट कर दी जाती हैं। बहुत बार मौनपाल देखता है कि मां-मौन-कोठरियां बनने लगी हैं। वह निश्चिन्त होकर निरीक्षण करने में लापरवाही कर देता है। उसे पुनः निराशा होना पड़ता है। नवीन मां-मौन के

अध्याय ११

वकछूट (प्रथम भाग)

मौना का संसार अनेकों विचित्रताओं से भरा है। कहने के लिये तो वह एक छोटा सा कीट ही होता है। लेकिन इसका प्रत्येक काम बड़ी समझदारी से समयानुकूल तथा आवश्यकतानुसार ही होता है।

बसन्त के प्रारम्भ में प्रत्येक वर्ष, प्रत्येक स्थान में आबहवा के अनुसार कुछ आगे पीछे मौनावंशों से विभाजित होकर मौनों के समूह उड़कर अन्यत्र नये घर बसाने को निकल पड़ते हैं। मौनावंश की शक्ति के अनुसार ये विभाजन एक ही मौनावंश से एक या कई तक हो पड़ते हैं। इन्हीं पुराने घर से अलग होकर नये घर की ढूंढ में निकल जाने वाले विभाजनों को हम वकछूट के नाम से पुकारते हैं। (चित्र ५१, ५२, ५३)

वास्तव में प्राकृतिक प्रेरणा से अपनी जाति-वृद्धि के लिये ही राजीनामे से मौनें ऐसा करती हैं। वकछूट हम उसी काल तक मौनों के समूह को कहते हैं, जब तक कि पुराने घर से अलग होकर वह नये घर में बस नहीं जाता है। नये घर में बस जाने या बसा दिये जाने पर हम उसे मौनावंश के नाम से सम्बोधन करने लगते हैं।

वकछूट या तो भिनभिनाता हुआ खुले आसमान में उड़ता हुआ पाया जाता है या सुनसान घर से बाहर बिलकुल खुले में किसी वस्तु के सहारे अक्सर पेड़ की डाल आदि के सहारे झुंडाकार बैठा दिखाई देता है। इसी झुंडाकार बैठी हुई दशा में हम इसे मौना-मंडल कह कर पुकारते हैं।

प्रत्येक वकछूट के साथ एक मां-मौन व कुछ मौनों का समूह विद्यमान रहता है। इसके अलावा मौनों का एक अच्छा भाग तथा एक मां-मौन पुराने घर में भी रह जाते हैं। पुराना घर कभी भी वकछूट के समय रिक्त करके मौनें नहीं छोड़ जाती हैं।

कारण—बच्छूट क्या होता है? इसके बारे में मीनपाल अभी तक निश्चित मत नहीं हो सके हैं। वास्तव में उनके जीवन की यह एक प्राकृतिक आवश्यकता है जो अपने वंश की वृद्धि या उसके अस्तित्व को बनाये रखने के लिये परमात्मा ने उनके लिये बनाई है। जैसा कि मौनों का एक वंश केवल एक ही मां-मौन को आश्रय देता है। एक मात्र मां-मौन ही उनमें वृद्धि का कारण होती है। अगर यह बच्छूट करने की स्वाभाविक प्रेरणा उनमें परमात्मा द्वारा नहीं होती तो शायद सृष्टि से कभी ही इस नन्हे से जीव का अस्तित्व मिट गया होता। यह भूत-काल की वस्तु बन गई होती। हां, कुछ बातें अवश्य होती हैं जिनका बच्छूट के होने या न होने में प्रभाव अवश्य पड़ता है। उन कारणों या उन बातों को प्रकट में न आने देकर हम बकछूट को होने से अवश्य रोक सकते हैं। अब वे बातें क्या हैं उनको नीचे लिखा जा रहा है।

चित्र—५१ बच्छूट

बच्छूट होने में सहायक परिस्थितियां—नीचे लिखी परिस्थितियों का मौनगृह के अन्दर उपस्थित हो जाना अधिकांश मौनों को बच्छूट करने की प्रेरणा देता है। जहां वे परिस्थितियां उत्पन्न नहीं होने पातीं, वहां अक्सर देखा गया है कि बच्छूट रुक जाता है या नहीं होने पाता है। यही कारण है कि पुरानी विधि से मौनें रखने वाले कहते हैं कि बकछूट हर तीसरे वर्ष होते हैं, क्योंकि १ वर्ष मौनावंश में उन परिस्थितियों को बनने में लग जाता है।

स्थान पर पर्तब्यच्युत-कर्मटों का ही पुन र्स्थान करना पड़ता है। क्योंकि उचित अवस्था का कर्मट मौन का अन्डा या कीट न मिलने के कारण अनेकों बार मौनें रिक्त कोठरियों पर भी माँ मौन-कोठरियाँ बनाना आरम्भ कर देती हैं। इन्हें वे बन्द नहीं करतीं हैं। उसमे पूर्व ही स्वय नष्ट कर देती हैं।

इनके अलावा भी अनेकों बार मा मौन बन चुकने पर भी मौनपाल के निरीक्षण में लापरवाही हानि का कारण बन सकती है। अनेकों बार मा मौन गर्भाधान-संस्कार को बाहर निकलने पर लौट कर नहीं आने पाती है। या तो उसे चिड़िया आदि खा देता है या आँधी पानी में वह नष्ट हो पड़ती है। इसीलिये जब तक मौनपाल को निश्चय न हो जाय कि माँ मौन ने बन कर कर्मठ के अन्डे देना प्रारम्भ कर दिया है, तब तक बराबर निरीक्षण करता जावे। लापरवाही न करे। और आवश्यकतानुसार उपचार करता जावे। माँ मौन-कोठी के बन्द होने तक दैनिक निरीक्षण, फिर कमट के अन्डे देना प्रारम्भ करने तक हर तीसरे दिन का निरीक्षण अत्यन्त आवश्यक होता है।

मां-मौन प्रविष्ट कराना—मौनें अपनी व पराई मा मौन को यथाशीघ्र पहचान लेती हैं। वे दूसरे वंश का मा-मौन को किसी अवस्था में भी स्वीकार नहीं करतीं हैं। इसीलिये अगर किसी दूसरे स्थान से या दूसरे वंश से प्राप्त की हुई माँ मौन को प्रविष्ट करना हो तो उसे विधिवत ही करना चाहिये। अन्यथा मौनें उसे अवश्य मार डालेंगी। यों तो इसका विस्तृत विवरण अन्यत्र अलग अध्याय में दिया जायगा। यहां पर इतना ही जान लेना उपयुक्त होगा कि मौनें मा-मौन की सुगन्ध व व्यवहार से उसके अपने व पराये होने की पहिचान कर लेतीं हैं। इसलिये व्यवहार की विभिन्नता व सुगन्ध की विभिन्नता को पहले मिटा देना ही किसी माँ-मौन के नये वंश में प्रविष्ट कराने के लिए उपयुक्त होता है। इसके लिये मां-मौन को एक दम नये वंश में कभी भी नहीं छोड़ना चाहिये। उसे इस प्रकार से मिलाना चाहिये कि उसकी सुगन्ध व व्यवहार में भिन्नता व विभिन्नता न रहने पावे। यानी कुछ काल तक मा-मौन को मौनों के बीच इस विधि से रख दिया जावे कि उनकी सुगन्ध तो आपस में मिलती रहे, लेकिन वे आपस में एक दम न मिल सकें। इसके लिये अभिका त प्रवरक

पिंजड़ा का प्रयोग किया जाता है। हम इसको खाली सलाई के डिब्बे से सरलता पूर्वक कर सकते हैं। सलाई के डिब्बे में ब्लेड या चाकू से ऐसे लम्बे छेद कर देने चाहिये कि उनमें मा-मौन या मौनें बाहर भीतर न आ जा सकें। इस डिब्बे में मा-मौन को बन्द कर देना चाहिये। डिब्बे के बाहर से शहद आदि पोत देना चाहिये। इस डिब्बे को मौनागृह के भीतर मौनयुक्त चौखटों के ऊपर रख देना चाहिये। इसमें मौन व मा मौन तो एक दूसरे से नहीं मिल पायेंगी, परन्तु उनकी सुगन्ध अवश्य मिल जावेगी। १२-१४ घण्टे इस प्रकार रखने में उनकी सुगन्ध का अन्तर मिट जावेगा और तब मा-मौन डिब्बे से निकाल कर मौनों के बीच छोड़ दी जासकती है। मा-मौन के मौनों में छोड़न के लिये रात्रि का समय उपयुक्त रहता है। इस समय मा-मौन के मारे जाने की सम्भावना बिलकुल भी नहीं रहती है। रात को डिब्बे से निकाली गई मा-मौन प्रात काल मौनों के बीच प्रसन्नतापूर्वक काम करती देखी जाती।

मा मौन कोठियों को देना—किसी भी वश में अगर मा-मौन कोठिया बन रही हों तो चाकू या ब्लेड से, कोठरी को बिना हानि पहुंचाये, हम काट कर किसी भी वश में मिला सकते हैं। इसके लिये ध्यान रखना होता है कि काटते समय कोठी में कहा से भी छेद न बनने पावे। कोठी न तो दबने ही पावे न अधिक हिलने डुल पावे। इससे कोठी के भीतर के कीट के मरने की सम्भावना रहती है। यह कोठी छत्ते से अलग किये जाने के बाद अधिक काल तक बाहर भी न रहनी चाहिये। काटने के बाद ही इसे दूसरे वश में प्रविष्ट कर देना चाहिये। अधिक काल तक मौनावश से बाहर रहने पर भी तापमान की कमी से इसके कीट के मरने की सम्भावना रहती है। क्योंकि मौनावश के भीतर का तापमान अत्यधिक ऊँचा रहता है।

कोठी को प्रवेश कराने के लिये उसे किसी प्रकार की किसी छत्ते या दो चौखटों के मध्य अड़ाकर रख देना चाहिये। मौनें उसकी सँभाल अपने आप कर लेंगी। सबसे अच्छी विधि दो चौखटा के बीच कोठी को अड़ा कर रख देने की ही होती है। इसमें कोठरी को हमेशा उसकी पूर्वावस्था के अनुसार ही रखना चाहिये। उल्टा तिरछा नहीं। बाकी इसका विस्तृत वर्णन भी अन्यत्र दिया गया है।

शिशु-गृह में स्थानाभाव का होना—वसन्त ऋतु के आरम्भ में जब मा-मीन की अण्डे देने की शक्ति अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची रहती है, उस समय मौनगृह का शिशु-कक्ष अण्डों से व शिशु-मौनों से भर जाता है। मां मौन को अण्डे देने का स्थानाभाव मालूम पड़ने लगता है। तथा नवजात मौनों को पराग व अमृत को संचित करने को स्थान नहीं मिल पाता है। इस समय वे वकछूट करके स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करती हैं।

मां-मौन का वृद्धाकार—जब मा-मौन बूढ़ी हो जाती है। मौनें जब जानने लगती हैं कि यह मा-मौन जाति की उन्नति सेवा के योग्य अब नहीं रह गई है, तो मौनें उसके उद्धार के निमित्त नई मौं-मौन बनाने का प्रयास करने लगती हैं। इस काल में अनेकों मा मौन-कोठरियां बना डालती हैं। इन कोठरियों को देखकर बीच में ही उन्हें वकछूट करने का ध्यान हो जाता है। और वे वकछूट कर बैठती हैं। यह अवस्था भी अधिकांश वसन्त ऋतु में ही आपडती है। अन्य कालों में वृद्धाकार में यह बात कम होती है।

चित्र—४४ वकछूट

वकछूट का समय व काल—वकछूट हमेशा वसन्त के आरम्भ में, स्थान के तापक्रम के अनुसार आगे व पीछे होते हैं। देश में जनवरी, फरवरी में यह समय हो जाता है। और पर्वतीय प्रदेशों में फरवरी, मार्च इसका समय होता है। जाने गरम स्थानों में आगे व शीत प्रदेशों में कुछ पीछे यह समय

आता है । लेकिन मौसम इसका हमेशा बसन्त ऋतु ही रहता है। इस काल को मौनपाल बक्छूट काल कह कर पुकारते हैं।

इसका समय दिन में १० बजे से २३ बजे तक का होता है, जब कि धूप खिली रहती है। मौसम में गरमी रहती है।

बक्छूट होने के लक्षण—बक्छूट एक दिन में नहीं हो जाता। इसके लिये अनेक दिन पहले से तैयारियां शुरू हो जाती हैं। अगर मौनपाल निश्चय चतुर हो और मौनवंशों का समयानुसार निरीक्षण करता हो तो मौनों के इस काल के व्यवहार से जान सकता है कि मौनें बक्छूट की तैयारी करने लगी हैं। इस समय वह उसे रोकने के लिये, अगर चाहे तो अनेक उपाय कर सकता है।

चित्र—५३ बक्छूट

अगर बक्छूट का मौसम हो और मौनें बक्छूट की तैयारी कर रही हों तो मौना गृह में निम्न लक्षण दृष्टि गोचर होने लगते हैं।

सर्व प्रथम तो अनेक मां-मौनों की कोठियां बननी प्रारम्भ हो जायेंगी। उनके कार्य की गति में शिथिलता आ जायेगी। सबही मौनों का भी बड़ा भाग घर पर ही ठहर जायगा। अगर बक्छूट शीघ्र ही होने वाला हो और मौनपाल मौनागृह खोल कर देख बैठे, तो उसे अनेक मौनें शिशु-कक्ष की दीवारों पर सुस्त बैठी दिखाई देंगी। साथ में भी वे कुछ बड़ी सी दिखाई देंगी, क्योंकि मार्ग के लिए शहद खाकर व बक्छूट की गरज में बैठी

रहती हैं। इस काल कभी कभी मौनें प्रवनाग्र-पट पर भी झूलने लगती हैं।
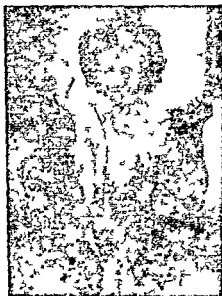
प्रधान-बकछूट—एक मौनावंश से उसकी शक्ति अनुसार कभी तो केवल एक ही बकछूट होता है और कभी कभी कुछ कुछ समय के अन्तर से अनेकों बकछूट हो पड़ते हैं। ५, ६ बकछूट तक एक ही मौनावंश से हो जाना साधारण सी बात होती है। इनमें जो बकछूट सबसे पहले निकलता है उसे प्रधान बकछूट के नाम से पुकारा जाता है। इसमें अधिकांश गर्भित मा-मौन सम्मिलित रहती है लेकिन अगर किसी कारणवश पुरानी मा-मौन मार डाली गई हो या खोगई हो तो नई मा-मौन भी प्रधान बकछूट का नेतृत्व कर सकती है।

पश्चात-बकछूट—प्रधान बकछूट के बाद जितने भी बकछूट किसी भी मौनावंश से निकलते हैं, वे सब पश्चात-बकछूट के नाम से सम्बोधित किये जाते हैं। इनमें हमेशा कुंआरी मा-मौनें ही सम्मिलित रहती हैं। पश्चात बकछूट प्रधान बकछूट से अधिकांश छोटे होते हैं।

बकछूट में मौनों का विभाजन—यह बात अभी तक अनिश्चित ही है कि बकछूट के लिये मौनों का विभाजन किस प्रकार होता है। अधिकांश प्रधान बकछूट के साथ पुरानी युवा मौनें व पुरानी ही माँ-मौन जाती हैं। कुछ पुरानी युवा-मौनें घर में भी ठहर जाती हैं। कभी कभी अगर मौसम सुहावना व गरम हो तो प्रधान बकछूट के साथ छोटी मौनें भी कुछ संख्या में निकल आती हैं। अच्छे मौसम में बकछूट के साथ मौनों की संख्या भी अधिक रहती है जब कि बुरे मौसम में बहुत ही कम। लेकिन कुछ मौनपालों का यह मत है कि प्रधान बकछूट में कुमारावस्था की ही मौनें अधिक होती हैं।

बकछूट का पथ-प्रदर्शन—अब प्रश्न उठता है कि बकछूट का नेतृत्व या पथ-प्रदर्शन कौन करता है? मा-मौन या युवा-मौनें। जैसा कि मौनावंश में मा-मौन का स्थान प्रधान रहता है। लोग कहते हैं कि माँ-मौन ही बकछूट का नेतृत्व करती है। लेकिन यह विचार बिलकुल अशुद्ध है। कभी कभी माँ-मौन अवश्य घर से आगे निकलकर नेतृत्व सँभालती है। लेकिन अनेकों बार मौनें आगे निकल पड़ती हैं और मा मौन पीछे। यहां तक कि अनेकों बार

देखा गया है कि मौनें तो बकछूट के लिये बाहर निकल पड़ी हैं, लेकिन मा-मौन भीतर ही रह गई है। मौनों के अनेकों प्रयासों से भी जब माँ मौन नहीं निकलती तो सभी उड़ती हुई मौनों को लौट आने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

बकछूट से पूर्व का काम—मौनों के प्रत्येक कार्य्य में बुद्धिमत्ता पूर्ण रूप से भरी रहती है। जब ये बकछूट की सोचती हैं तो साथ ही साथ यह भी ध्यान में रखती हैं कि घर में मा मौन का क्या होगा ? बिना मा-मौन के घर का विनाश हो जायगा। तथा अगर बाहर कुछ काल तक नया घर नहीं मिल सकेगा तो खाने का क्या होगा ? इसलिये बकछूट करने से पूर्व वे घर के लिये नई मा-मौन बनाना प्रारम्भ कर देती हैं और जब नई मा मौन जन्म लेने को तैयार ही होती है तो वे उसके कुछ पूर्व ही पुराना मा-मौन को साथ लेकर बकछूट कर जाती हैं। इसके अलावा बकछूट करने से पूर्व प्रत्येक मौन घर से कुछ दिन के लिये शहद खाकर भी पेट में सञ्चित कर ले चलती है।

बकछूट का निकलना—बकछूट के लिये जैसा कि अभी बतला दिया गया है कि कभी माँ मौन प्रथम निकलती है तो कभी अन्य मौनें। जब बकछूट निकलता है तो वातावरण में एक अजीब हलचल व सजीवता भी आ जाती है। मौनें एक विचित्र प्रकार की भिनभिन की ध्वनि करती हुई बड़े वेग से बाहर को निकलने लगती हैं। कुछ काल तक वे सकीर्ण परिधि में मौनागृह के पास घूमते दिखाई देती हैं। ज्यों ज्यों मौनें बढ़ती जाती हैं, परिधि भी बढ़ती जाती है। शायद उस समय की भिनभिन की ध्वनि से वे अन्य मौनों को निकलने के लिये आह्वान करती हों। जब सब मौनें मय माँ-मौन के निकल आती हैं तो वे फिर अन्यत्र को चल देती हैं।

बकछूट अधिकाश पास में ही किसी उचित स्थान पर बैठ जाता है लेकिन कभी कभी वह दूर भी निकल पड़ता है। बैठते समय सर्व प्रथम कभी माँ मौन बैठती है और कभी अन्य मौनें बैठती हैं। बैठ कर ये एक पूर्ण मडलाकार गोला बना देती हैं। जब मडल पूर्ण हो जाता है तो माँ मौन एक बार बाहर निकलकर मडल का परीक्षण सा करती दिखाई देती है। इस काल

यह सरलता से पकड़ी जा सकती है। थोड़ी देर बाद वह फिर भीतर घुसकर बन्द हो जाती है और पुनः बाहर नहीं आती है।

खोजी मौनें—प्रत्येक बच्छूट के साथ कुछ खोजी मौनें भी होती हैं। जिनका काम नये घर की खोज करना होता है। बहुत बार तो ये मौनें बच्छूट होने से पहले ही नये घर को खोज लेती हैं। ऐसी अवस्था में बच्छूट कहीं पर भी नहीं ठहरता बल्कि सीधे नये घर की ओर चल देता है। लेकिन अधिकांश ये घर को बाद में ही खोजती हैं।

जब मौनें बच्छूट के बाद मौनामण्डल बनाकर बैठ जाती हैं तो वे खोजी मौनें जो संख्या में सौ दो सौ तक भी हो जाती हैं, नये घर की ढूंढ में निकल पड़ती हैं। यदि कोई बाधा उपस्थित न हो तो इनके लौटने तक बच्छूट अपने स्थान पर ही ठहरा रहता है। खोजी मौनें घर खोजकर जब लौटती हैं तो वे फिर सबको साथ लेकर नये घर की ओर चल पड़ती हैं। इस घर खोजने के काम में कुछ घंटा से लेकर दो, तीन दिन तक लग जाते हैं।

बच्छूट का आपस में मिलजाना—बहुत बार जब एक मौनागृह से बच्छूट बाहर निकलता है, तो उसकी गूंजने की ध्वनि सुनकर अन्य दूसरे घरों की मौनें भी जो बच्छूट की तैयारी कर रही हों, उसी काल बाहर निकल पड़ती हैं। और आकाश में उड़ते उड़ते आसानी से ऐसे एक हो जाती हैं कि फिर उनका अलग अलग होना कठिन हो जाता है। ऐसी माँ मौनें नये घर में पहुंच कर जीवन-मरण का निपटारा कर लेती हैं। बच्छूटों में अनेकों बार तीन, चार तक माँ-मौनें भी पाई गई हैं।

नये घर में बच्छूट का काम—नये घर में पहुंचते ही मौनें छत्ते बनाना प्रारम्भ कर देती हैं। सर्व प्रथम कर्मठ-मौनों के छत्ते बनाये जाते हैं। ज्यों ही छत्ते का ढाँचा मात्र भी तैयार हो जाता है माँ-मौन अंडे देना प्रारम्भ कर देती है। सग्रही मौनें पराग व अमृत लाना प्रारम्भ कर देती हैं। छत्ता पूर्ण होते जाता है। मौनें उसकी बाट नहीं देखती हैं। सब काम गतिपूर्वक होने लगता है। इसमें बड़ी व्यवस्था रहती है। न तो स्थानाभाव ही मालूम होता है और न कार्य में बाधा ही प्रतीत होती है। लेकिन पश्चात बच्छूटों

हैं जिनमें माँ-मीन कुमारी ही होती है अण्डे देने का कार्य उसके गर्भाधान के बाद ही प्रारम्भ होता है।

जब छत्तों का निर्माण माँ-मीन की अण्डे देने की गति से तीव्रतर हो जाता है, तब मोमें बड़े नाप की कोठरियाँ मधु-संग्रहार्थ भी बनाने लगती हैं। अगर माँ-मीन वृद्ध हो चुकी हो तो उसको बदलने की भावना से नर-मीनों की कोठरियाँ भी बनाने लग जाती हैं।

अध्याय ११
वकछूट (द्वितीय भाग)

वकछूट को विठाना—यदि वकछूट उड़ता हुआ आकाश में चला जा रहा हो तो प्रश्न उठता है कि उसे किस प्रकार बिठाया जाय। पहले समय में लोग वकछूट को बिठाने के लिये कनिस्तर आदि को बजाते हुए उसका पीछा करते थे और मिट्टी धूल उड़ाते जाते थे। परन्तु यह कोई ऐसी विधि नहीं है कि जिससे सदा वकछूट को बिठाने में सफलता ही मिल सके। कदाचित धूल से परों के भारी हो जाने या कनिस्तर की ध्वनि से डर जाने के कारण वकछूट कभी कभी बैठ जाता हो। परन्तु वर्तमान मौनपाल पिचकारी, गिलास या हाथ से वकछूट के ऊपर पानी की बौछार डालना अत्यन्त प्रभावशाली मानता है। एक तो इससे मौनों के पर भीग जाते हैं, जिस कारण वे उड़ने में असमर्थ हो जाती हैं। दूसरा उनको वर्षा का बोध होने लगता है और वे बैठने लगती हैं। यदि मौनपाल ध्यान रखे तो इस समय मा-मौन को सरलता पूर्वक पकड़ सकता है।

वकछूट को पकड़ना—वकछूट जब बैठ गया हो या बिठा दिया गया हो तो उसे पकड़ना भी बड़ी चतुरता का काम है। (चित्र ५४) यह प्रत्येक के वश की बात नहीं होती। इसके लिये समय, स्थान व उपलब्ध साधनों के अनुसार भिन्न भिन्न विधियां काम में लाई जाती हैं। कोई एक विधि सर्वत्र व सदा प्रयोग में नहीं लाई जा सकती है। यह मौनपाल की बुद्धिमता पर ही निर्भर होता है कि वह किस समय किस विधि का प्रयोग करे। इन विधियों में से कुछ का वर्णन मौनपालों के लाभार्थ संक्षेप में नीचे दिया जाता है।

मां-मौन पकड़ने की विधि

जब कभी वकछूट मौनपाल के सामने ही बैठ रहा हो तब मौनपाल उनके बैठने के स्थान को ध्यान पूर्वक देखते रहने से माँ मौन को बैठते समय पकड़ सकता है। या जब वकछूट पूर्ण रूप से बैठ चुका हो तब भी मौनामंडल को

ध्यान पूर्वक देखने से उसे पकड़ा जा सकता है। मां मीन को पकड़ना बड़ी सावधानी व चतुरता का काम होता है। यदि मीनपाल इसमें थोड़ी सी भी
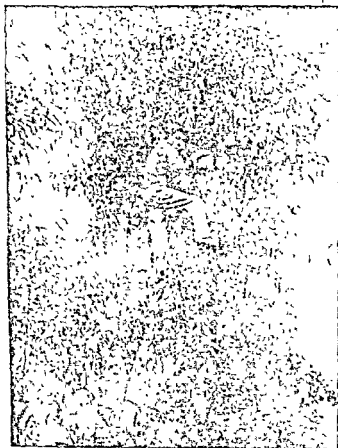
चित्र—५४ वकच्छूद पकड़ना

असावधानी कर दे तो उसे बड़ी हानि उठानी पड़ सकती है। मा-मीन का हाथ से निकल जाना वकच्छूद को फिर भाग जाने के लिये विवश कर सकता है। या

इसके खो जाने का रहता है। इसलिये उसके देखभाल की आवश्यकता रहती है। ऐसी मा-मौन को टोकरी में रखना हितकर होता है। उसमें खोने का डर नहीं रहता। मौनें उसका पता लगाते ही सब टोकरी में जमा हो जाती हैं और सरलता से घर लाई जा सकती हैं। परन्तु यह काम तभी करना चाहिये जब पूर्ण-विश्वास हो कि मा-मौन कुंवारी नहीं है।

टहनी काटने की विधि

यदि मधुछत्ता किसी ऐसी टहनी पर बैठा हो जो पतली हो और मौनपाल की पहुंच के भीतर हो तो उस टहनी को सावधानी से बिना झटका दिये काटा जा सकता है। इसको काटने के लिये तीक्ष्ण चाकू, छोटी आरी या मालिया की पेड़ों को छांटने की कैंची काम में ला सकते हैं। थोड़े से भी झटके से मौनों के भाग जाने की सम्भावना रहती है। इस क्रिया को करने से पूर्व मौनों को पूर्ण रूप से शान्ति पूर्वक बैठने दिया जाना चाहिये। टहनी को पकड़ कर मधुछत्ते को घर लाने में भी विशेष सावधानी व स्थिरता की आवश्यकता रहती है। थोड़े से झटके में भी मौनें पृथ्वी पर गिर सकती हैं।
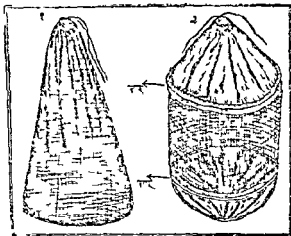
चित्र—४६ मधुछत्ता पकड़ने की थैलियां
१ बिना तार लगा थैली २ दो तार के पहिये वाला थैली

थैली में पकड़ने की विधि

इस विधि में दो महीन जालीदार थैलियों की आवश्यकता होगी

तो उसमें झाड़ लिया जा सकता है। परन्तु झाड़ने के पश्चात टोकरी को धीरे धीरे उलटा कर लेना चाहिये, ताकि मौनें उसके तले पर मंडलाकार लटक सकें।

१. टोकरी को ऊपर से लगाना—इस विधि को उस समय प्रयोग में लाना चाहिये जब कि मौना-मंडल मौनपाल की पहुँच के अन्दर हो और टोकरी को उसके ऊपर सरलतापूर्वक ऐसे लगाने की व्यवस्था हो सके कि मौनें यदि नीचे से हटाई जावें, तो शीघ्र उसी के भीतर को सरकें। इसके लिये छोटी टोकरी की आवश्यकता रहती है। एक दो इन्च गहरी व एक फुट चौड़ी टोकरी इसके लिये संतोषजनक काम दे सकती है। किसी कंडी आदि का ढक्कन उपयुक्त होता है।

सर्व प्रथम टोकरी को मौनामंडल के ऊपर इस प्रकार रखा जावे कि टोकरी का किनारा मौनामंडल को छूता रहे और जिस स्थान पर मौनें बैठी हों उस पर टोकरी दृढ़ता से चिपकी रहे। फिर मौनों को नीचे से सावधानी पूर्वक हल्के हाथों से धीरे धीरे इस भांति हटाना प्रारम्भ करें कि मौनें ऊपर को टोकरी के अन्दर को सरकने लगें। लेकिन ध्यान रहे कि मौनें ऊपर को टोकरी के बाहर को न बढ़ें। इस क्रिया में थोड़ी देर अवश्य लगती है परन्तु मौनें सरलतापूर्वक पकड़ी जा सकती हैं। जब मौनों का अधिकांश भाग टोकरी पर लग जावे तो उसे थोड़ा थोड़ा इस भांति से हटाना प्रारम्भ करें कि मौनें उसके भीतर को आती रहें। मा-मौन के उसमें आते ही अन्य मौनें भी आसानी से आ जावेंगी। इस प्रकार जब सब मौनें टोकरी पर मंडल बना लेवें तो वे टोकरी सहित घर लाई जा सकती हैं। यदि बहुत दूर जाना हो तो टोकरी समेत थैली में बंद करके भी उन्हें ले जा सकते हैं।

टोकरी में झाड़ने की विधि—इसके लिये चौड़ी, बड़ी व गहरी टोकरी की आवश्यकता रहती है। यदि इसमें एक शिशु-पूर्ण-छत्ता रख दिया जावे तो उत्तम होता है। टोकरी को मौनामंडल के नीचे लगा कर मौनों को अधिक से अधिक उसमें झाड़ देना चाहिये और फिर उसे पकड़ कर मौनामंडल के पास इस भांति धर लेना चाहिये कि टोकरी का मोहरा मौनामंडल की ओर रहे। कुछ ही काल में मौनें टोकरी के एक किनारे पर या अधिकांश शिशुपूर्ण छत्ते के ऊपर मौना मंडल बना कर एकत्रित हो जावेंगी।

इस क्रिया को हम ऊँचे स्थानों के लिये भी काम में ला सकते हैं जो कि पहुँच से बाहर हों। इसके लिये पहिले टोकरी एक लम्बे बाँस पर दृढ़ता से बांध देनी चाहिये। फिर उसमें शिशु-पूर्ण-छत्ता डालकर (यदि उसके गिरने की सम्भावना हो तो छत्ते को भी टोकरी में बांध दिया जाय) उसे बांस के सहारे उठाकर मौनामंडल के नीचे लगा देना चाहिये और सहारे से मौना को उसमें गिराने का प्रयत्न करना चाहिये। इस प्रकार मौनें थोड़े समय में छत्ते पर आ जावेंगी। जब मौनें टोकरी में आजावें तो बांस सावधानी से धीरे धीरे नीचे ले लिया जावे। कहीं ऐसा न हो कि बाँस या टोकरी एक दम गिर पड़े। जब टोकरी एक दम नीचे आ जावे तो उसे बांस से छुड़ा कर घर ला सकते हैं।

पट्टे की रीति

यह क्रिया तब प्रयोग में आ सकती है जब कि मौनें किसी समतल वस्तु के सहारे लटक कर बैठी हों। इसके लिये एक दृढ़ पट्टे की आवश्यकता होती है। मौनपाल पट्टे को लेकर मौना मण्डल की जड़ में करने का प्रयत्न धीरे से करे। ज्यों ज्यों पट्टा आगे को सरकता जावेगा मौनें पट्टे पर आती जावेंगी। कुछ ही काल में सारा मौनामडल पट्टे पर लटक जावेगा। फिर उसे वैसे ही घर लाया जा सकता है।

शिशु-पूर्ण चौखट की रीति

इसके लिये मौनपाल को किसी मौनागृह से एक ताजा अण्डे बच्चे पूर्ण चौखट ले लेना चाहिये और उसे पकड़ कर मौनामडल पर इस प्रकार चिपका कर रख लेना चाहिये कि मौनें अशान्त न होने पावें। थोड़े समय में ही सम्पूर्ण मौनें चौखट पर आजावेंगी।

सीधे मौनागृह की विधियां

ये विधियाँ तभी प्रयोग में आ सकती हैं जब कि मौनामडल अत्यन्त ऊँचाई पर स्थित न हो। इसको चतुर मौनपाल ही कर सकता है। ये निम्न दो प्रकार से प्रयोग में आ सकती हैं।

१. जब मौनागृह मौनामंडल के नीचे नहीं रखा जा सके—सर्व प्रथम एक मौनागृह बुनियादी-छत्तों से पूर्ण तैयार कर लेवें। यदि सम्भव हो तो उसमें एक चौखट शिशुपूर्ण छत्ते का भी रख लेवें। फिर मौनागृह का प्रवेश द्वार कागज या कपड़े से बिल्कुल बन्द करके, भीतर से तीन चौखट निकाल कर शेष चौखटों को इस प्रकार रखें कि आधे चौखट एक ओर हो जावें और आधे दूसरी ओर। फिर एक तौलिये से या किसी अन्य वस्त्र से उसे ढक लिया जावे। इसके बाद मौनागृह को उठाकर मौनामंडल के पास ही किसी स्थान पर दृढ़तापूर्वक रख कर निम्न भांति क्रिया करनी चाहिये।

मौनामंडल के नीचे से हाथ लगाकर थोड़ी थोड़ी मौनें हाथ में ले कर, कपड़ा उठा कर, चौखटों के मध्य बनाये गये रिक्त स्थान में हाथ डाल कर इस प्रकार झटका देवें कि मौनें नीचे गिर पड़ें और हाथ तले पर न टकरावे। हाथ टकराने से मौनों के मरने का भय रहता है। फिर मौनागृह को कपड़े से उसी प्रकार ढक देवें। ध्यान रहे कि मौनें बाहर न निकलने पावें। इस क्रिया को कई बार करें। इस समय मौनागृह में बन्द मौनें एक परेशानी की ध्वनि करने लगेंगी। इस प्रकार जब मौनों का अधिकांश भाग भीतर बंद कर लिया जावे तो मौन-पाल एक किनारे से वस्त्र हटा कर देख लेवें। यदि उसमें मां-मौन चली गई होगी तो मौनें शान्त होंगी और वे बाहर को नहीं निकलेंगी। ऐसा प्रकट होने पर वस्त्र को कुछ काल हटा हुआ ही रखना चाहिये। यदि मां-मौन वास्तव में भीतर पहुंच गई होगी तो बाहर की अन्य मौनें भी भीतर को जाने लगेंगी। ऐसा होने पर बाहर मौनामंडल की अन्य मौनों को भी घास या पत्ती की कूची से हटा देवें ताकि वे उड़ जावें और मौनागृह के अन्दर बैठ जावें। जब सब मौनें भीतर चली जावें तो चौखटों को मिला देना चाहिये और उनके अन्त में प ला लगा देना चाहिये। तब मौनागृह को बंद करके घर लाया जा सकता है। घर आकर मौनागृह का कपड़ा हटाकर ढकना लगा दिया जावे और प्रवेश-द्वार म खोल दिया जावे।

यदि माँ-मौन भीतर न गई होगी तो कपड़ा हटाते ही वे सब एक विचित्र प्रकार का गुंजन करते हुए वेग से बाहर को निकलने लगेंगी। ऐसी स्थिति

में कपड़ा शीघ्रता से फिर डाल देना चाहिये। कुछ काल ठहर कर उपरोक्त क्रिया द्वारा फिर मौनों को भीतर डालें और फिर देख कर माँ-मौन के अन्दर पहुँचने का पता लगा लेवें। जब तक माँ-मौन अन्दर न पहुच जावे, मौनागृह को कपड़े से ढका ही रहने देवें। ऐसी स्थिति में मौना-मडल पर भी दृष्टि रखें उसम मौनों के कम हो जाने से कभी कभी माँ-मौन सामने ही दिखाई पड़ जाती है। यदि वह दिखाई पड़ जावे तो उसे पकड़ कर मौनागृह में डाल देवें। बस फिर तो अन्य मौनें सरलता से पकड़ी जा सकती हैं।

कभी कभी इस क्रिया के करने में मौनें भाग जाती हैं। यदि वे कहीं पास ही बैठें तो इसी भाँति फिर पकड़ी जा सकती हैं। अन्यथा मौनपाल को केवल पकड़ी गई मौनों से ही सन्तोष करना पडता है। कम होने पर वे किसी भी मौनावश से मिलाई जा सकती हैं। यदि अधिक हो तो उनको मा मौन बनाने के हेतु उचित अवस्था के कर्मठ-मौन के अडे बच्चों से पूर्ण छत्ता देकर, मा-मौन बनवा कर मौनावश तैयार किया जा सकता है।

यह विधि कुछ कठिन व सन्देहास्पद अवश्य है। परन्तु चतुर मौनपाल इसे अपना सकता है। दिन में इस क्रिया द्वारा मौनों के भाग जाने का भय अवश्य रहता है, परन्तु सूर्यास्त के समय यह अति सुरक्षित हो सकती है।

२ *जब मौनागृह मौनामडल के ठीक नीचे रखा जा सके*—यह विधि उस समय प्रयोग मे आ सकती है जब कि मौना मडल धरती के पास हो और उसके नीचे मौनागृह सरलता से रखा जा सके—पहिले मौनागृह को मौनामडल के नीचे इस प्रकार रखा जावे कि उसका अधिकाश भाग चौखटों के मध्य बनाये गये रिक्त स्थान से मौनागृह के भीतर को लटक जावे। मौनागृह के भीतर रखा गया अन्डे-बच्चा वाला चौखट यदि मौनामडल के सम्मुख हो तो उपयुक्त रहता है। सम्भव है कि कुछ मौनें स्वयम् ही शिशु पूर्ण छत्ते पर बैठ जावेंगी। अन्यथा मौनामडल को किसी मोटे कागज या हाथ से बिल्कुल जड से काट कर उसमें गिरा दिया जावे और तुरन्त कपड़े से ढक दिया जावे। यदि माँ-मौन उसमें पहुच गई होगी तो मौनें कुछ ही काल में

शान्त हो जावेंगी और कपडा हटाने पर बाहर को नहीं भागेंगी। अन्यथा ऊपर वर्णित प्रथम रीति को ही अपनाना उचित होता है।

ऊँचे स्थान में चक्छूट को पकड़ना

अनेकों बार चक्छूट इतनी ऊँचाई पर बैठता है कि किसी प्रकार भी मौनपाल के लिये वहां पहुंचना कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्था में मौनपाल को उन मौना को वहां से भगा कर अन्यत्र बिठाने का प्रयत्न करना चाहिये। फिर उनको किसी भी विधि से पकड लेना चाहिये। मौनपाल इसके लिये एक दृढ़ और लम्बी रस्सी लेकर उसके एक सिरे में पत्थर बाध कर इस प्रकार ऊपर फेंके कि रस्सी का फंदा उस शाख पर बँध जावे जिसमें कि मौनें बैठी हों। फिर रस्सी से उस शाख को तब तक हिलाते रहें जब तक कि मौनें उडकर अन्यत्र न बैठ जावें।

कई बार मौनें किसी मकान या अन्य स्थान पर इस प्रकार बैठ जाती हैं कि मौनपाल किसी प्रकार भी उन तक नहीं पहुंच सकता। ऐसी परिस्थिति में कपड़े का धुआं बनाकर, उसे एक लम्बे बांस के सिरे में बाध कर मौनों के पास तक पहुचाने की व्यवस्था करनी चाहिये। धुएँ से मौनें अवश्य उड जावेंगी। यह रीति सदा सफल नहीं होती। अनेकों बार मौनें उड़कर इतनी दूर निकल जाती हैं कि उनका पता लगाना भी कठिन हो जाता है। परन्तु मौनामडल को बिना प्रयास छोड देने से तो इसकी परीक्षा करना उचित ही है।

इन उपरोक्त विधियों द्वारा मौनपाल चक्छूटों को पकड सकते हैं। इनके अतिरिक्त अनेकों यन्त्रों की विधियां भी होती हैं। परन्तु इन यन्त्रों की प्राप्ति दुर्लभ होने से उनका बयान यहां पर करना वृथा है। इनके अतिरिक्त मौनपाल अपनी सहूलियत के अनुसार कोई भी स्वतन्त्र विधि अपना सकते हैं।

चक्छूटों को मौनागृह में रखना

जब चक्छूट पकड लिये जावें तो प्रश्न उठता है कि उन्हें किस प्रकार मौनागृह में डाला जावे। इसके लिये सर्व प्रथम मौनागृह को तैयार कर लिया जावे। यदि सम्भव हो तो उसमें पुराने छिन्ने छिन्नाये छत्तों वाले चौखट एक

दिये जावें। इसके अतिरिक्त एक छत्ता मधु व अण्डे बच्चा से पूर्ण भी रख देना अत्यन्त उपयोगी होता है। इससे मौनों के अन्यत्र भाग जाने की सम्भावना नहीं रहती है। यदि पकड़ने में मां मौन नष्ट या घायल हो गई हो तो उन्ह नई मां मौन बनाने की भी सुविधा होती है। तत्पश्चात् निम्नलिखित विधियों में से किसी एक के द्वारा मौनों को मौनागृह में डाला जा सकता है।

(१) भीतर से मौनागृह में रखना

पूर्व बतलाये गये विधि अनुसार तैयार किये गये मौनागृह को उसके यथेष्ट स्थान पर अवस्थित कर, उसके शिशुकक्ष के ऊपर बिना भीतरी ढकना लगाये एक दूसरा मधुकक्ष चौखट रहित रख देवें और इसके ऊपर से छत को हटा दें। फिर मौनों को इस मधुकक्ष के भीतर रख देवें। यदि थैली हो तो उसका मोहरा पूर्ण रूप से खोल दिया जावे। टोकरी हो तो उलट कर और टहनी हो तो वैसे ही रख कर छत लगा देवें। कुछ ही काल में मौनें शिशुकक्ष में चली जावेंगी। फिर टोकरी थैली आदि बाहर निकाली जा सकती है। अनेकों बार खाली मधुकक्ष शिशुकक्ष के नीचे रख कर भी यह काम किया जा सकता है। उसमें टोकरी आदि खोल कर रख देने से मौनें ऊपर शिशुकक्ष में चली जावेंगी। क्योंकि मौनों का स्वभाव नीचे से ऊपर को चलने का होता है। फिर मधुकक्ष हटाकर शिशु कक्ष को उचित स्थान पर उचित प्रकार से तलपट पर रख दिया जा सकता है।

(२) बाहर से मौनागृह में रखना।

यह दूसरी विधि है। इसके द्वारा मौनें मौनागृह में यों तो हर समय रखी जा सकती हैं लेकिन अनेकों बार जब वह वस्तु, जिसमें वकछूट पकड़ा गया हो, इतनी बड़ी हो जावे कि मौनागृह के भीतर न आ सके तो इस विधि से मौनों को मौनागृह में रखना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

इस विधि से मौनागृह को पहिले की भांति तैयार करके किसी समतल भूमि पर रख दें। (चित्र ५७)। फिर द्वार दंड हटा कर अलग रख दें ताकि प्रवेश द्वार चौड़ा हो जावे। अब तिपरती लकड़ी या ढकना मौनागृह के आगे अड़ाकर इस प्रकार ढलुवा करके रखा जावे कि उसका एक सिरा पृथ्वी पर टिका रहे और दूसरा अवतारक पट पर। फिर उसमें समाचार पत्र का चौड़ा कागज

दिया दिया जावे। अब मौनें इस समाचार पत्र पर भाड़ दी जावें। मौनें वेग से भीतर को जाने लगेंगी। वास्तव में इस समय मौनें पेट को उठाते हुए ऐसी गति से भीतर को घुसती हैं कि मौनपाल का हृदय हर्षित हो उठता है। इस क्रिया द्वारा मौनपाल माँ-मौन को भी देख सकता है। जब सम्पूर्ण मौनें भीतर चली जावें तो द्वार बंद लगा दिया जावे और मौनागृह उचित स्थान पर रख दिया जावे। यह क्रिया सूर्यास्त के समय ठीक रहती है क्योंकि इस समय मौनों के भागने का डर नहीं रहता। यह कार्य अँधेरा और ठंडा होने पर कदापि न किया जावे। ऐसे समय में मौनों के इधर उधर बिखर जाने की सम्भावना रहती है।

चित्र ५७—मौनों को मौनागृह के बाहर से भाड़ कर मौनागृह में बसाना।

मधुकूट को मौनागृह में रखने का समय—इस क्रिया के लिये सूर्यास्त का समय, जबकि मौसम ठंडा न हो, उपयुक्त रहता है। इस काल मौनों के भागने की सम्भावना भी नहीं रहती है। चतुर मौनपाल किसी समय भी सफलतापूर्वक इस काम को कर सकता है।

मौनागृह को स्थित करना—मौनागृह को समतल सूचक यंत्र से समतल करके उचित स्थान पर रखना चाहिये अन्यथा चौखटों के टेढ़े हो जाने से छत्तों का भी टेढ़ा हो जाना सम्भव है। मौनागृह के आसपास की भूमि भी स्वच्छ कर दी जानी चाहिये।

मौनों को मौनागृह में रखने पर आवश्यक काम—इस समय दो काम विशेष आवश्यक होते हैं। (१) मौनावंश को एक छत्ता, मधु व अन्डे बच्चे पूर्ण अवश्य दिया जावे। (२) एक दो सप्ताह तक शरबत अवश्य पिलाया जावे। अन्यथा मौनों के भागने की सम्भावना रहती है।

मां-मौन के पर काटना—बक्छूट की मां-मौन के पर, जब तक पूर्ण निश्चय न हो जाय कि वह कुंआरी नहीं है, न काटें। जब वह अन्डे देना प्रारम्भ कर देवे और यह निश्चित हो जाय कि मां मौन कर्मठ-मौन के अन्डे देने लगी है तभी पर काटने की क्रिया करनी चाहिये। इसमें शीघ्रता करने से मां-मौन सदा के लिये बेकाम हो सकती है।

बक्छूट प्राप्त करने की सरल विधि—यह विधि उन स्थानों के लिये अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है, जहां पर मौना का अभाव न हो। जहां पुराने ढंग से मौनों को पालने वाला की या जंगली वंश की बहुलता हो। अपने पर्वतीय क्षेत्र के अनेकों भागों में जहां मौनें अधिक पाई जाती हैं, लोग इसे बहुत अपनाते हैं। जंगलों में कब और कहाँ से कोई बक्छूट निकल जावे इस बात का पता रखना कठिन ही नहीं असम्भव भी है। अधिकांश बक्छूट बस्तियों से भी जंगलों की ओर को ही भागते हैं और जंगली वंशों के बक्छूट तो वहां होते ही हैं। इसलिये बक्छूट काल प्रारम्भ होने से पूर्व यदि मौनपाल कुछ बक्से लीप पोत कर या छत्ताधार लगे हुए मौनागृह ऐसे स्थानों में रख दें जहां से मौनें अधिकांश निकलती हैं तो ये बक्से या मौनागृह मौनों को पकड़ने का अच्छा काम करते हैं। बक्छूट आसमान में उड़ता हुआ इन्हें देख लेता है या खोजी मौनें इन्हें ढूंढ लेती हैं और स्वयं ही इन्हें अपने अधिकार में कर लेती हैं। ये बक्से कहीं जंगलों में ऊँचे पेड़ों पर बांध कर या चट्टानों में अड़ा कर या किसी मकान की ऊँची छत पर, जहां धूप खूब रहती हो, रख दिये जावें। मौनपाल को चौथे पांचवें दिन जाकर देखना पड़ता है कि उसके रखे बक्सों में कोई बक्छूट बसा या नहीं। बक्छूट के उनमें बसते ही या बक्छूट काल के समाप्त होते ही, ये बक्से या मौनागृह घर लाये जा सकते हैं। मकानों की दीवालों पर पुराने ढंग के बने जाले भी यह काम आ सकते हैं।

अध्याय १३
वकछूट (तृतीय भाग)

पिछले समय में जब कि मौनपालन के बारे में कोई भी खोज नहीं हो पाई थी तथा लोग मौनों की आदत व उनके व्यवहार से बिलकुल ही अनभिज्ञ थे, वे वकछूट का होना एक सौभाग्य की बात मानते थे, क्योंकि उससे मौनावंशों की वृद्धि होती थी। लेकिन आज का वैज्ञानिक मौनपाल इसको एक अभिशाप के रूप में ही मानता है। यह उसके लिए बड़ी चिन्ता व परीक्षा की वस्तु हो जाती है। उसने आज व्यवहारिक रूप से इस बात को सिद्ध कर लिया है कि वकछूट का होना किसी भी मौनपाल के लिए आर्थिक दृष्टिकोण से लाभदायक नहीं हो सकता।

जिस प्रकार किसी कार्य में सामूहिक रूप से जितने अधिक आदमी लगाये जायेंगे, उत्पादन में उतनी ही अधिक मात्रा में वृद्धि की आशा की जा सकती है। ठीक उसी प्रकार मधुस्राव के प्रारम्भ में जिस वंश में जितनी अधिक कमेरी-मौना की संख्या होगी, उससे उतने ही अधिक मधु के प्राप्त होने की आशा भी की जा सकती है। वकछूट से मधु-संग्रह करने की मौनों की इस संगठित शक्ति का विभाजन हो जाता है। पैतृक मौनावंश इससे ठीक ऐसे समय में शक्तिहीन कर दिया जाता है जब कुछ काल बाद अमृत-स्राव का ही आरम्भ होने वाला होता है और स्वयं आप नये स्थान पर जाकर नये घर को बसाने में लग जाता है। जितना संग्रह कर पाता है, उतना ही व्यय भी कर डालता है। कम से कम उस मौसम में तो मौनपाल उस वकछूट व उसके पैतृक वंश से कोई भी अधिक मधु की आशा नहीं कर सकता है। अगर मौना का उत्पादन या उनके वंश की वृद्धि ही किसी प्रकार लक्ष्य न हो तो मौनपाल को यथासम्भव उन्हें रोकने का प्रयास करना चाहिए। वकछूट से मधु-उत्पादन में रोक तो लगती ही है साथ ही साथ उसकी देखभाल में समय का अपव्यय

तथा उसे नये घर में भगाने के लिए अतिरिक्त सामान के लिए रुपयों का अनावश्यक खर्च भी करना पड़ जाता है। अगर प्रयत्न करके भी वकछूट का होना अवश्यम्भावी ही हो उठता है तो मीनपाल प्रकृति के भरोसे उन्हें छोड़ने के स्थान पर उनसे कृत्रिम-वकछूट करवा कर अपने समय की बरबादी को बचा सकता है। तथा वकछूट के हाथ से निकल पड़ने की शंका से भी निश्चिन्त हो सकता है।

वकछूट को रोकने की विधियां

मौनों के संसार में वकछूट का होना उनकी वंश-परम्परागत वंश-वृद्धि के के लिए एक प्राकृतिक देन है। मौनपालों ने अपने अनुभव व लगातार अनुसन्धानों द्वारा इस पर रोक लगाने की अनेकों विधियां ढूंढ निकाली हैं। यद्यपि यह कहना तो उचित नहीं होगा कि ये विधियां सर्व-समय सफल ही हो सकती हैं। लेकिन अगर समयानुकूल व मौनों की आवश्यकतानुसार इनका सही प्रयोग किया जावे तो कोई कारण नहीं है कि ये अपने प्रयोजन में असफल सिद्ध हों। यद्यपि अनेकों विधियां तो ऐसी ही हैं, जिनमें विशेष प्रकार के यंत्रों के अतिरिक्त विशेष अनुभव व ज्ञान की भी आवश्यकता होती है, लेकिन यहां पर कुछ ऐसी विधियां दी जाती हैं जिन्हें प्रत्येक मौनपाल सरलता पूर्वक अपना सकता है।

मां-मौन द्वारा वकछूटों की रोक

मां-मौन का मौनवंश में एक विशेष स्थान होता है। वे बिना मां-मौन के कहीं भी नहीं जा सकती हैं। इसलिए अनेकों बार मां-मौन को भागने में असमर्थ कर देने से या नई मां-मौन न बनने देने से भी वकछूट रुक जाते हैं। अगर हो भी जायें तो दूर नहीं निकल सकते हैं।

मां-मौन के पर काटना—अगर मां मौन गर्भित हो तो मां-मौन के पर काट देना मौनपाल के लिए बड़ी सहूलियत का काम हो सकता है। पर काट देना वकछूट को होने से रोक तो नहीं सकता लेकिन मां-मौन के उड़ सकने में असमर्थ रहने से अगर कभी वकछूट हो भी जावे तो वह भाग कर दूर नहीं

निकल सकता। अगर मौनपाल वक्छूट होते समय अपने मौनालय में अनुपस्थित भी रह जावे तब भी उसे वक्छूट के गवाने की सम्भावना नहीं रह सकती है। ऐसी अवस्था में मौनें वक्छूट करने का प्रयास करती हैं, लेकिन माँ मौन का साथ देन में असमर्थ रहने से कभी कभी तो लौट आती हैं या कभी कभी पास में ही मौनामण्डल बनाकर बैठने को बाध्य हो जाती हैं।

इसमें एक खतरा अवश्य रहता है। अनेक बार मा-मौन वक्छूट के साथ बाहर निकल आती है, लेकिन उड़ने में असमर्थ रहने से पास में ही कहीं गिर पड़ती हैं। मौनागृह में लौटना तो उसके लिए असम्भव होता ही है। वह बाहर रेंगते ही रह जाती है या दूर निकल जाती है। जहां उसको मौनी-शत्रु नष्ट कर देते हैं या घास फूस में वह इस भाँति खो जाती है कि मौनें उसे खोज नहीं पाती हैं। ऐसी अवस्था में वक्छूट तो लौट आता है लेकिन मौनावंश मा-मौन विहीन हो जाता है। मौनपाल को इसमें विशेष ध्यान देने की आवश्यकता रहती है।

मां मौन कोठियों को नष्ट करना—यों तो मौनों की किसी भी प्रवृति का रोकना बड़ा ही कठिन होता है, लेकिन प्रयास करने से मौनपाल अनेक बार इसमें सफल भी हो जाता है। जैसा कि पहले बता दिया है कि मौनें वक्छूट करने के बहुत समय पहिले ही से इसके लिए तैयारियां करने लगती हैं। वे पुराने मौनावंश के लिए मा-मौन बनाना प्रारम्भ कर देती हैं। मौनपाल अगर निरीक्षण के समय सतर्कता व सावधानी से काम लेवे, तो उसे मौनों की इस चेष्टा का ज्ञान हो सकता है। अगर उसकी इच्छा वक्छूट को रोकने की हो तो उसे इन माँ-मौन कोठियों को प्रारम्भ में ही नष्ट कर देना चाहिए। अनेकों बार मौन पाल उन्हें नष्ट कर देता है और मौनें पुन पुन उन्हें बनाने की चेष्टा करती हैं। लेकिन मौनपाल अगर असावधानी न करे और कोठियों को नष्ट करने में देरी न करे, तो वह मौनों को वक्छूट करने के विचार से निवृत्त करने में सफल हो सकता है।

इस समय दो बातें आवश्यक होती हैं। प्रथम तो माँ-मौन कोठियों को माँ-मौन के कीटावस्था में पहुंचने के पूर्व ही नष्ट कर दिया जाना चाहिए।

अगर इसमें देर हो जायगी और मा-मौन वीरावस्था की अन्तिम हालत या चोथ-वीरावस्था की हालत में पहुँच चुकी होगी, तो फिर मौनों को बकछूट करने के विचार को त्यागने के लिए विवश करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इस काल एक ओर तो मा-मौन कोठिया नष्ट की जानी चाहिए और दूसरी ओर मौनागृह से उन सब कारणों को मिटाने की कोशिश करनी चाहिए, जो कि बकछूट करने में सहायक होते हैं।

दूसरी बात जो ध्यान देने की होती है, वह यह है कि क्या मौनें वास्तव में बकछूट की तैयारी कर रही हैं ? बहुत बार मौनें मा-मौन के वृद्ध हो जाने पर उसे बदलने के लिए भी नई मा-मौन बनाने के लिए कोठियों का निर्माण प्रारम्भ कर देती हैं। अगर ऐसी हालत में वे कोठिया नष्ट कर दी जायें, तो मौनपाल को बहुत बड़ी हानि हो सकती है। इस काल मौनों के बरताव से मौनपाल को पूर्ण निश्चय कर लेना चाहिए कि मौनें वास्तव में बकछूट के लिए ही तैयारियां कर रही हैं। तब ही कोठियों को नष्ट करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

मौनों का व्यवहार बकछूट के समय कैसा रहता है। यह तो पहिले ही लिखा जा चुका है। अब थोड़ा यह भी बता देना आवश्यक है कि अगर मौनें वृद्धोद्धार यानी पुरानी मा-मौन के बदलने के लिए यह प्रयत्न करती हों तो इसका अनुमान कैसे हो सकता है। अगर मौनपाल चतुर हो तो यह भी जानना कठिन नहीं है। इसको मौनपाल सर्व प्रथम माँ-मौन के काम व अवस्था से जान सकता है। अगर मा-मौन अधिक अवस्था की हो चुकी हो और नर-मौन के अंडे अधिक दे रही हो तथा कर्मठ के अंडे कम व बिखरी हुई हालत में दे रही हो तो जाना जा सकता है कि मौनें बकछूट की तैयारी में नहीं हैं, बल्कि माँ-मौन को बदलने की चेष्टा कर रही हैं। जो कि मौनपाल के लिए अत्यन्त ही आवश्यक होता है। इसके अलावा अगर मौनें वृद्धोद्धार की ही तैयारियां कर रही होंगी तो वे दो तीन कोठियों से अधिक माँ-मौन-कोठिया नहीं बनायेंगी। जब कि बकछूट के समय ७, ८ से भी अधिक कोठिया मौनों द्वारा बनाई जाती हैं।

मा-मौन को बन्द करना—बहुत से मौनपाल बकछूट काल में मा-मौन को बत्ते पर ही पिंजड़े में बन्द कर देना उपयुक्त मानते हैं। इसके लिए जाली के पिंजड़े बने होते हैं। जिनमें से मा-मौन बाहर नहीं आ सकती है। लेकिन जाली से उसको खाना मिलते ही रहता है। इसमें साथ ही साथ मॉ-मौन-कोठियों का नष्ट किया जाना भी आवश्यक हो जाता है। क्योंकि अगर ऐसा नहीं किया जायगा तो मौनें नई मां-मौन बनाकर भी बकछूट कर सकती हैं। यह क्रिया सरल तो अवश्य है लेकिन इसमें एक बडी हानि हो जाती है। दीर्घ काल तक मा-मौन के अंडे देने की क्रिया में भी इससे रोक लग जाती है, जो मौनपाल के लिए बहुत ही हानिकारक होता है।

कम बकछूट करने वाले वंशों से मौनावंश बनाना—यह भी एक सरल विधि है। मौनपाल को मौनावंश ऐसे वंशों से तैयार करने चाहिए, जिनमें बकछूट करने की प्रवृत्ति कम पाई जाती हो। प्रत्येक वंश की मौनें आचार व व्यवहार में भिन्नता रखती हैं। कुछ वंश तो बकछूट करने के अधिक आदी होते हैं और कुछ कम। मौनपाल को इस बात का ध्यान रखना चाहिए। जिस वंश को कम बकछूट करने वाला पावे, उसी वंश की मा-मौन को अन्य सभी वंशों में प्रविष्ट करा देवे। इससे कुछ काल में मौनें सब उसी मा मौन के वंश के समान आचरण करने वाली ही जायेंगी। क्योंकि मॉ-मौन की सन्तान होने के कारण मौनों में उसके पैतृक-गुणों का आना प्राकृतिक है।

मा-मौन-रोकद्वार—यह मौनागृह पर लगाने का एक यन्त्र होता है। इससे मौनें तो बाहर भीतर सरलता पूर्वक आ जा सकती है, लेकिन मा-मौन बाहर नहीं आ सकती। इसलिए मौनपाल बकछूट काल में मौनागृहों के द्वार पर इस यंत्र को लगाना उपयुक्त मानते हैं। इसमें मौनें बकछूट करने की चेष्टा तो अवश्य करती हैं, लेकिन माँ-मौन के साथ न आ सकने के कारण लौट आने को विवश हो जाती हैं। इसमे मा-मौन के खोने या नष्ट होने की आशंका भी नहीं रहती है। वास्तव मे यह बडी सरल व उपयोगी विधि है।

नई मां-मौन—यह बात हमेशा देखी गई है कि पुरानी मा-मौनें नई मा-मौनों से शीघ्र बकछूट की ओर प्रवृत्त होती हैं। इसलिए मौन-पाल को

हमेशा अपने मौनावंशों में अधिक आयु की मा मौन को न रहने देने का ध्यान रखना चाहिए।

स्थान, हवा व छाया आदि का प्रबन्ध—बक्छूट काल में इन तीनों बातों पर विशेष ध्यान रखना भी मौनों को बक्छूट करने से बहुधा रोक देता है। क्योंकि ये ही बातें विशेषतया होती हैं जिनका बक्छूट पर प्रभाव पड़ता है।

स्थान—बक्छूट काल में शिशुपालन भी अपनी पराकाष्ठा पर रहता है। माँ मौन की अण्ड देने की गति भी इस काल बढ़ी हुई रहती है। इस समय मौन पाल को ध्यान रखना चाहिए कि शिशुकक्ष में पिचपिच न होने पावे। मां मौन को अण्ड देने के लिए स्थानाभाव न मालूम पड़े तथा संग्रही-मौनों के लिये शहद व पराग जमा करने को स्थान की कमी न रहे। इसको मौनपाल अतिरिक्त कक्ष व अतिरिक्त चौखट देकर पूर्ण कर सकता है।

हवा—बक्छूट का काल वसन्त ऋतु का होता है। मौनागृह में हवा का उचित प्रबन्ध न होना तथा भीतर स्थानाभाव का होना, मौनागृह के भीतर

चित्र—५८ छाया का प्रबन्ध

अधिक गरम कर देता है। जिससे मौनों को असुविधा अनुभव होती है और

वे बकछूट करने के लिए बाध्य हो जाती हैं। मौनागृह में हवा का प्रबन्ध द्वार-दंड को हटा कर, शिशु-कक्ष व मधुकक्ष को ½" आगे पीछे करके या तलपट व शिशुकक्ष के मध्य चार कोना में चार छोटे, एक ही नाप के गुटके लगाकर किया जा सकता है। लेकिन ध्यान रहे स्थान इतना अधिक रिक्त न हो जाय कि मौनीशत्रु भीतर प्रवेश कर जावें।

छाया—बकछूट-काल में अगर मौनावंश किसी ऐसे स्थान पर रखा हुआ हो, जहा पर तीक्ष्ण तपन होती हो तो मौनों को छाया की आवश्यकता रहती है (चित्र ५८)। अन्यथा बकछूट करना उनके लिए सम्भव हो सकता है। इसको मौनपाल मौनागृह में किसी प्रकार छाया डालकर कर सकता है। मौनावंश को छायादार स्थान में रखकर उसके ॰ार को सीधे पूरब को न छोड कर भी यह काम किया जा सकता है। मैदानी मार्गों में जहा लू चलती है, जमीन में गड्ढा खोद कर भी मौनागृह रखा जा सकता है (चित्र ५६)।

चित्र—५६ छाया का प्रबन्ध
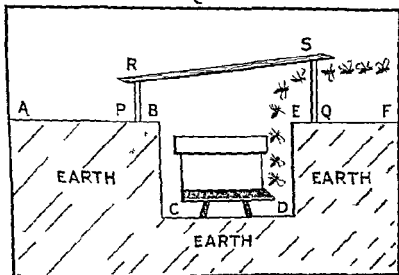
(२) सबसे नीचे एक कक्ष रिक्त खिंचे हुए छत्तों से पूर्ण रखा जावे। उसमें केवल एक मा-मौन छोड़ दी जावे। फिर ऊपर मा-मौन रोक पट लगाकर मा-मौन को ऊपर चढ़ने से रोक दिया जावे। इस प्रकार इसमें एक मां-मौन रह जायगी और सारी सब मधुमक्खी-मौनें आ जायगी।

फिर इसके ऊपर मधुकक्ष रखा जावे, जिसमें मौना-वंश के सभी अंडे-बच्चों से पूर्ण छत्ते रख दिये जावें। अगर नर-मौना की अधिकता हो, तो मधुकक्ष में से उनके आने जाने के लिए एक छिद्र कर दिया जाना चाहिए। अन्यथा मा-मौन-रोक पट से उनका आना कठिन हो जायगा।

(३) सब से नीचे के कक्ष में सम्पूर्ण शिशु पूर्ण बन्द नहीं किये गये छत्ते रखे जावें और मा मौन भी इसी में रहने दी जावे। फिर प्रथम रीतियों की भांति मा मौन-रोक-पट लगाकर दूसरे कक्ष में सम्पूर्ण बन्द किये हुए शिशु-पूर्ण छत्ते रख दिये जावें।

(४) पहिले मौनावंश से सम्पूर्ण अंडे बच्चे वाले अधिक छत्ते हटा कर शक्तिहीन वंश को दे दिये जावें, फिर सब से नीचे के कक्ष में खिंचे हुए रिक्त छत्ते भर कर सब मौनें मय मां-मौन के उसमें झाड़ दी जावें और ऊपर मधुकक्ष में भी रिक्त खिंचे हुए छत्ते लगा दिये जावें। अगर इसमें एक दो अंडे, बच्चे वाले छत्ते भी रख दिये जायँ, तो भी कोई हानि नहीं होती है। इस प्रकार इसके द्वारा शिशु-कक्ष को कुमार मौनों की भीड़ से मुक्त कर दिया जाता है तथा मौनों व मा-मौन को अपने अपने कार्य के लिए स्थानाभाव नहीं रहने दिया जाता है।

(५) विदेशी मौन पाल मौनों को शरबत खिलाने के स्थान पर शहद खिलाना अधिक उपयुक्त मानते हैं। इसके लिए वे कुछ शहद के बन्द छत्तों को मधु-निष्कासन के समय बचा कर रख लेते हैं, और बसन्त में अमृत-स्राव से पूर्व इन शहद पूर्ण छत्तों को मधुकक्ष में लगाकर मौनों को खाने के लिए दे देते हैं। इन्हीं कक्षों को खाद्य-कक्ष कह कर पुकारा जाता है।

अब यह विधि लिखी जाती है, जो उस मौनपाल द्वारा अपनाई जा सकती है, जो अपने मौनालय में खाद्य-कक्ष का प्रयोग करता हो। इसके लिए सर्वप्रथम

नीचे के कक्ष मे एक शिशु पूर्ण छत्ता, मा-मौन व अन्य रिक्त खिंचे हुए छत्ते रख दिये जाते है। फिर मा मौन-रोक-पट लगाकर ऊपर से खाद्य-कक्ष रख दिया जाता है। उसके ऊपर अन्य बचे हुए शिशु-पूर्ण चौखटा को एक अतिरिक्त कक्ष मे लगाकर रख दिया जाता है। इसमे नीचे के कक्ष व ऊपर के कक्ष के दूर पर स्थित होने से सब से ऊपर के कक्ष की मौनों को मा-मौन हीन होने का अनुभव सा होने लगता है और वे नवीन मा मौन-कोठिया बनाने लगती हैं। इस काल मौनपाल को सावधानी की आवश्यकता रहती है। उसे ये कोठिया बनते ही नष्ट कर देनी चाहिए। इस प्रकार ऊपर की मौनें निकल निकल कर नीचे आती जायेंगी।

ये जो रीतियाँ ऊपर लिखी गई हैं। इनमे केवल तीन चार बातो को ध्यान में रखा गया है। -मा-मौन को ऐसे कक्ष मे रख दिया गया है जहा उसे अत्यधिक खुला स्थान अडे देने को मिल जाता है। शिशु-छत्तों को शिशु-कक्ष मे दूर अलग कक्ष मे रख दिया गया है, ताकि शिशु-कक्ष में भीड न होने पावे। तथा कमेरी मौनों के लिए अमृत व पराग के सचयार्थ अत्यधिक स्थान उपलब्ध करा दिया गया है। साथ ही साथ बेकार कुमार मौनों के लिए कार्य की व्यवस्था शिशु-कक्ष को फैलाकर कर दी गई है।

इन बातों को ध्यान में रख कर मौनपाल कोई भी रीति अपनी सुविधानुसार प्रयोग में ला सकता है। लेकिन ध्यान रहे जो रिक्त छत्ते दिये जायँ, वे अधिकाश हमेशा पूर्णरूप से खिंचे हुए हों। तभी अधिक उत्तम होगा। अगर बाहर से अमृत की प्राप्ति बहुतायत से हो रही हो, तब हम कुछ चौखट बुनियादें छत्तों मे पूर्ण भी दे सकते हैं, क्योंकि इस काल मौनों को इन्हें खींचने में देर नहीं लगेगी। इन विधियों के साथ चतुर मौनपाल दो मा मौनों की विधियां भी प्रयोग में ले आते हैं, जो बडी उपयोगी होती है।

इन विधियों के अलावा अनेकों अन्य-विधियां भी बकछूट रोकने की होती हैं या हो सकती हैं। मौनपाल अपने विवेक से उन्हें प्रयोग मे ला सकता है। लेकिन जब वह अपने को किसी प्रकार भी बकछूट रोकने में असमर्थ देखे

शक्तिशाली वंश शक्तिशाली मौनावंश ही बरछूट के लिए अधिक प्रवृत्त होते हैं। अगर मौनपाल चतुर हो तो उन्हीं को बरछूट करने से रोकना भी कभी कभी बड़ा सरल होता है। शक्तिशाली वंश मद्दकक्ष को शीघ्र अपना लेते हैं। इसलिए इनमें अतिरिक्त कक्ष देकर स्थानाभाव की कमी एकदम दूर की जा सकती है।

इसके अलावा मौनें अपनी गतिविधि को छत्ते के अन्दर उतने ही क्षेत्र तक सीमित रखती हैं, जहां तक कि वे उसे सरलता पूर्वक ढक सकती हैं। इसलिए शक्तिहीन मौनावंशों की सब से बड़ी कमी एक यह होती है कि वे मां-मौन के अंडे देने के क्षेत्र को अत्यन्त संकुचित कर देते हैं। उनमें मौनें अक्सर शिशु पूर्ण कोठरियों के बाहर चारों ओर शहद व पराग जमा कर देती हैं। जिससे मा-मौन के अंडे देने का क्षेत्र सीमित हो जाता है।

कुमार मौनों को काम देना—कुमार मौनों का काम छत्ते बनाना, शिशुओं की परवरिश करना ही होता है। अगर उनके पास काम की कमी हो जाती है। वे भी बरछूट की भावना से प्रेरित हो उठती हैं। इसलिए मौनपाल को उनके लिए नये छत्ते खींचने की व्यवस्था शिशु-कक्ष या मद्दकक्ष में करके, उन्हें काम दे देना चाहिए।

मिश्रित-विधियां

एक दिन से तीन दिन तक की शिशु-मौन शिशु-छत्तों को छोड़ कर अलग नहीं होती हैं। वे इस अवस्था से अधिक आयु के मौनों को शिशु पूर्ण कोठरियों से बाहर कर देती हैं। ये बाहर हटाई हुई मौनें तब कोठरियों को चमकाने का काम करने लगती हैं। ज्यों ही मा-मौन उन धोई गई कोठरियों के पास आती है तो वह उनमें अंडे दे देती है। ये शिशु पूर्ण कोठरियों से हटाई गई मौनें तब उन नये मौन शिशुओं को और मां-मौन को खिलाने का काम करने लगती हैं। जब मां-मौन को कोई भी स्वच्छ की गई नई कोठरी अंडे देने को नहीं रह जाती है, तो वह पुनः शिशु पूर्ण छत्तों में लौट आती है। बरछूट काल में इन बेकार कुमार मौनों की संख्या बढ़ जाती है। ज्यों ज्यों मौसम गरम होता है, मौनामंडल फैलने लगता है। साथ ही साथ इस काल मा-मौन के अंडे देने की गति भी इतनी बढ़ जाती है

कि कुछ काल में उसे स्थानाभाव अनुभव होने लगता है। शिशुओं की परवरिश के लिए कुमार मौनों की बहुत बड़ी संख्या प्रकट हो जाती है। जिनमें अधिकांश बेकार रह जाती है। ये बेकार कुमार मौनें तब परेशान भी हो जाती हैं और माँ-मौन का पीछा सा करने लगती हैं। लगातार उसे खाना खिलाती हैं और उसे अडे देने को बाध्य करती हैं। जिससे कुमार मौनों की संख्या में और भी वृद्धि हो जाती है। ज्यों ही मां-मौन किसी माँ मौन कोठी के पास आ पहुँचती है तो वे उसे छेड़ना बन्द कर देती हैं। मानो उससे मा-मौन कोठी में अडे देने को कहती हैं। मा-मौन इन कोठियों में भी अडे दे देती है। ज्यों ही मा मौन कोठियों में कीट प्रकट होने लगते हैं, वे कुमार मौनें उन्हें खूब खिलाने लगती हैं। यही कारण भी होता है कि इस काल की बनी मां मौन उत्तम होती हैं। इस समय कुमार मौनें मा मौन को खिलाना बन्द कर देती हैं। अनेकों बार उसे शहद खाकर ही रहना पड़ता है। इसका फल यह होता है कि वह अडे देना बन्द कर देती है। इससे मौनगृह में बेकार कुमार-मौनों की भीड़ और भी बढ़ जाती है। उधर माँ-मौन-कोठियाँ भी प्रगति पर होती हैं। ज्यों ही मा मौन कोठियाँ तैयार हो जाती हैं, ये बेकार मौनें माँ मौन को लेकर बकछूट कर जाती हैं।

इसलिए अब कुछ विधियां दी जाती हैं। जिनमें एक हम उपर्युक्त कमियों को हटाकर बकछूट रोकने के लिए प्रयास किया गया है। इनमें कोई नई वस्तु नहीं है। बकछूट होने में जिन बातों का अधिक हाथ होता है, मौनों को उन परिस्थितियों से मुक्ति दिला देना ही इनका मूल है। ये विधियां इस प्रकार हैं।

बकछूट काल के प्रारम्भ होने से कुछ समय पूर्व मौनावश निम्न विधि एक प्रकार परिवर्तित कर दिये जाने चाहिये।

(१) सबसे नीचे एक कक्ष लिये हुए रिक्त छत्तों पूर्ण चौखटा वाला रखा जाय। इसमें केवल एक चौखट मय मा-मौन के बिना बन्द किये गये अडे, बच्चों का व एक मधु व पराग पूर्ण छत्ते का होना आवश्यक होता है। इसके ऊपर मां-मौन रोक पट लगाकर दूसरा कक्ष रखा जाना चाहिये। इसमें मौनावंश के अन्य छत्ते मय मौनों के रखे जायें। अगर इसमें स्थान रिक्त रह जाय, तो उसे रिक्त खींचे हुए छत्तों से भर देना चाहिये।

तो स्वयं ही उनका विभाजन करके उन्हें बकछूट की अवस्था प्रदान कर देवे। इसी को कृत्रिम-बकछूट कहा जाता है।

इससे यह मतलब नहीं है कि विभाजन व कृत्रिम-बकछूट में कोई भी अन्तर नहीं होता। कृत्रिम-बकछूट हम उसी विभाजन को कहते हैं जो बकछूट काल में, बकछूट के लिए तैयारी करने वाले मौनावश से बकछूट रोकने के लिए किया जाता है। और विभाजन किसी समय भी मौनपाल द्वारा वश वृद्धि के हेतु किसी भी वश का किया जा सकता है।

अध्याय १४

घरछूट

यह शब्द ही इतना सार्थक है कि अपनी कहानी स्वय ही सुना देता है। घर का अर्थ है निवास स्थान और छूट का अर्थ होता है छूट जाना। मानो अपने रहने के स्थान का छूट जाना या उसका परित्याग कर देना। घर का प्रत्येक जीव के लिये एक विशेष महत्व व आकर्षण होता है। कोई भी प्राणी एकाएक अपने रहने के स्थान का परित्याग करना पसन्द नहीं करता। मनुष्य, जो कि प्राणिमात्र म बुद्धिमान होता है, अगर अपने किराये के घर को भी बदलता है तो उसमे दु ख का अनुभव करता है। यही बात मौनों की भी होती है। वह भी प्रसन्नता से अपने घर को नहा छोडती हैं। कुछ प्राकृतिक बाधायें उनके मार्ग में ऐसी आ पडती हैं कि उनका टपनार उनके लिये कठिन हो जाता है और उन्हें विवश होकर अपने घर का बदलने की तैयारी करनी पड जाती है। इसी को घरछूट के नाम से पुकारा जाता है।

घरछूट म मौनें पुराने घर को ज्यों का त्या बना बनाया छोड जाती है और घर की समस्त मौनें मय मा-मौन के अन्यत्र नये घर की खोज में निकल पडती हैं।

घरछूट होने की परिस्थितियां

जैसा कि ऊपर बतला दिया गया है कि अपने घर को प्रसन्नता पूर्वक छोडना किसी भी जीव के लिये अप्राकृतिक ही होता है। मौनें भी जब अपने घर को छोडने की तैयारी करती हैं तो विवश होकर ही उन्हें ऐसा करना पड़ता है। कुछ प्राकृतिक बाधायें या कठिनाइया उनके मार्ग मे एसी आ पडती है, जो उनके लिये पुराने घर म और अधिक काल ठहरना कठिन कर देती हैं और उनको बाध्य होकर एकाएक पुराने घर को सूना छोड़ कर अन्यत्र भाग जाना पडता है। ये कठिनाइयाँ या बाधायें जिनसे कि मौनें घरछूट करती हैं प्रधानत निम्नलिखित होती हैं।

स्थानाभाव या स्थान की अनुपयुक्तता—*बहुत बार मौनागृह में उपयुक्त स्थान का अभाव हो जाता है। उसमें पानी या सीलन का प्रवेश* होने लग जाता है, जिसमें मौनों को कठिनाई का अनुभव होता है और इसका उपचार कर सकना उनके लिये असम्भव ही होता है। इसीलिये ऐसी परिस्थिति में वे घर छोड़ कर भाग जाने की ठहरा लेती हैं। इसकी रोक *के लिये मौनपाल को मौनागृह में यथोचित, उपयुक्त स्थान की व्यवस्था करनी* चाहिये।

बचाव की कमी—वर्षा, हवा, सर्दी व गर्मी से बचने के लिये भी मौनों की उचित व्यवस्था करना मौनपाल का ही कर्तव्य होता है। इसके लिये व्यवस्था न हो पाने से भी मौनें घरछूट कर जाती हैं। क्योंकि इन पर भी मौनों का अपना वश नहीं चल पाता है। मौनपाल को इन प्राकृतिक प्रकोपों से मौनों की रक्षा करने का उचित प्रबन्ध करना चाहिये।

भोजन की कमी—*प्रत्येक प्राणी का जीवन आधार भोजन ही होता है।* इसका अभाव उसके जीवन को खतरे में डाल देता है। मौनों के संसार में भी अनेका बार अकाल की परिस्थिति आ पड़ती है। उनके पास घर के भीतर *सञ्चित भोजन समाप्त हो जाता है और बाहर से भी प्राप्ति दुर्लभ हो जाती है।* ऐसी परिस्थिति में मौनों के लिये सिवाय घर छोड़ कर ऐसे स्थान पर चले जाने के जहां कि उन्हें खाने के लिये भोजन मिल सके, अन्य उपाय नहीं रह जाता। वे ऐसा ही करके अपना अस्तित्व बचाने की चेष्टा करती हैं और घरछूट कर डालती हैं। ऐसे घरछूट को ही भूखा घरछूट भी कहते हैं। मौनपाल को ऐसे घरछूटों से बचने के लिये मौनागृह में खाने की यथोचित व्यवस्था कर देनी चाहिये।

गर्भार्थ-घरछूट—*अनेकों बार जब कि मौनागृह में नई माँ-मौन बनाई* जाती है तो जिस काल वह गर्भाधान के लिए बाहर निकलती है, मौनें धोखा खा जाती हैं और वे मा-मौन के बाहर निकल जाने को घरछूट का सूचक मान बैठती हैं और सब की सब उसके पीछे हो लेती हैं। इस प्रकार मौनावश घरछूट कर देता है। ऐसे घरछूट को ही—गर्भार्थ घरछूट कहा जाता है। ऐसा

प्राय घरछूट-काल में ही होता है। क्योंकि उन काल मौनों में घरछूट की प्राकृतिक प्रेरणा रहती है।

दुश्मनों की बहुलता—स्थान त्याग करने में किसी भी प्राणी के लिये यह परिस्थिति प्रधान होती है। जिस स्थान में किसी भी प्राणी के शत्रु इतने अधिक व प्रबल हो उठते हैं कि उसके अस्तित्व को ही चुनौती देने लगते हैं और उसके जीवन को खतरे में डाल देते हैं, तो उसे बाध्य होकर अन्यत्र को चले जाना पड़ता है।

मौनों के भी कुछ शत्रु इतने भयंकर व प्रबल होते हैं कि मौनें उनका प्रतिरोध करने में पूर्णरूप से असमर्थ रहती हैं। इनमें मोमी-पतिंगे, बर्रें भिड़े व चीटियां प्रधान हैं।

जब ये मौनी दुश्मन किसी भी मौनावंश को अपने आक्रमण का शिकार बनाने लगते हैं और मौनपाल लापरवाही से इस ओर ध्यान नहीं दे पाता है तो मौनें एकाएक घर छोड़ कर भाग जाती हैं।

बहुत बार इनका आक्रमण इतना भयकर होता है कि मौनें बड़ी संख्या में अन्डे, बच्चे व बड़ी मात्रा में संचित मधु तक घर में छोड़कर भाग खड़ी होती हैं, जैसा कि अधिकाश नहीं होता है। मौनें भागने से पूर्व प्रत्येक कीट को मौन बनने देती हैं तथा प्रत्येक बूंद मधु को खाने की चेष्टा करती हैं। बर्रों के आक्रमण में अक्सर मौना को ऐसा कर पाने का अवसर नहीं मिलता है।

ऐसे घरछूटों का बचाव मौनपाल के बचाव के प्रबन्ध पर ही निर्भर रहता है।

घरछूट होने के इस प्रकार ये मुख्य कारण होते है। इनके अलावा भी अन्य दूसरी कोई भी कठिनाई मौना को घरछूट करने के लिये बाध्य कर सकती है। मौनपाल को घरछूटों से छुटकारा पाने के लिये ध्यान रखना चाहिये कि मौनों को कोई भी असुविधा या कष्ट न होने पावे।

घरछूट की तैयारी

किसी प्रबल शत्रु के एकाएक आक्रमण तथा मा-मौन के गर्भार्थ-काल में घरछूट करने के अतिरिक्त अन्य परिस्थितियों में मौनें एकदम घरछूट नहीं कर

डालती हैं। वे कुछ काल पूर्व से उसकी तैयारी करने लग जाती हैं। उनमें अपनी जाति से विशेष प्रेम होता है। इसीलिये जब वे घरछूट करने की ठान लेती हैं, तो प्रायः प्रत्येक कीट को मौन बनकर उड़ने योग्य होने देती हैं। मा-मौन नये अन्डे देना बन्द कर देती है। संचित मधु खाया जाने लगता है। मौन-पाल अगर दक्ष हो, निरीक्षण में सावधानी व समय का ध्यान रखता हो, तो घरछूट होने की सूचना मौनों के व्यवहार से पा सकता है और उसकी रोक करने की व्यवस्था उसके कारणों को जानकर कर सकता है।

घरछूट का मौसम व काल

बकछूट की भाँति घरछूट का कोई भी निश्चित मौसम नहीं होता। किसी भी मौसम में मौनों को जब कठिनाइयों का अनुभव होता है तो किसी अच्छे दिन जब कि धूप खिली हो, प्रातः १० बजे से २३, ३ बजे के बीच वे घरछूट कर डालती हैं।

बकछूट व घरछूट

बकछूट हमेशा बसन्त के प्रारम्भ में ही, जिसे कि बकछूट काल के नाम से सम्बोधन करते हैं, होता है और इसमें मौनावंश एक या अधिक भागों में विभाजित होकर निकलता है। कभी भी पितृवंश को रिक्त छोड़ कर मौनें नहीं भागती हैं। घरछूट में ये बातें नहीं होतीं। घरछूट किसी भी मौसम में हो सकता है। तथा इसमें सभी मौनें पितृ-वंश को सूना छोड़कर घरछूट के साथ चल देती हैं।

अन्य बातें घरछूट में भी बकछूट की ही भाँति होती हैं। उड़ती या बैठी दशा में घरछूट व बकछूट का अन्तर जानना बड़ा असम्भव होता है। इसीलिये ऐसी दशा में देखे गये प्रत्येक मौनों के समूह को लोग बकछूट के नाम से ही सम्बोधन करते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं होना चाहिये। केवल बसन्त के प्रारम्भ में जब कि बकछूट काल होता है, हम इन्हें बकछूट कह सकते हैं। अन्य कालों में ये घरछूट ही होते हैं।

चतुर मौनपाल नगे हाथों से सफलता पूवक मोनों में काम कर सकता है
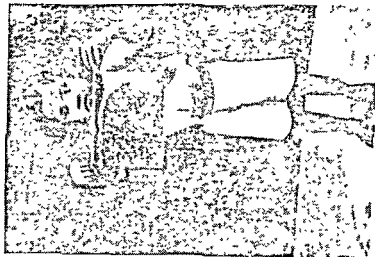
घरछूट को ठिकाना पकडना व मौनागृह में डालना—ये सब व्रत घरछूट के लिये भी वही करनी होती हैं, जो कि रूसछूट के लिये की जाती हैं। इसमें कोई विशेष अन्तर नहीं होता है।

घरछूट कैसे रोके जा सकते हैं

यह प्रश्न प्रत्येक मौनपाल के ध्यान देने का होता है। कितने परिश्रम व कोशिशों से एक मौनावश बसाया जाता है। अगर वह ही घर छोड कर भाग जावे, तो वास्तव मे मौनपाल को बड़ा दुःख होता है। लेकिन इसका उत्तरदायित्व मौनों पर उतना नहीं होता जितना कि मौनपाल पर होता है। अगर मौनपाल यथा समय पर मौनागृहों का निरीक्षण करता हो और समयानुसार मौनों की आवश्यकताओं को पूर्ण करते जाता हो, तो घरछूट की अवस्था आ ही नहीं सकती है। इसलिये घरछूट से मुक्ति पाने के लिये मौना की आदतों को समझना व उनके अनुसार उनकी आवश्यकताओं को पूर्ण करते जाना ही एक मात्र साधन है। इसके अतिरिक्त भी एक बात और होती है। कोई भी मौनावश शक्तिहीन न रखा जावे। शक्तिहीन वश ही दुश्मनों व बिमारियों के शिकार होते हैं और वे ही अधिकाश घरछूट के लिये भी प्रवृत्त हो उठते हैं। ठीक शक्तिशाली मनुष्य की ही भाँति शक्तिशाली मौनावश भी प्रत्येक आपत्ति का सफलता पूर्वक प्रतिरोध करने की सामर्थ्य रखता है। उनसे डर कर वह घर छोड कर भागने की कभी भी नहीं सोच सकता है।

अध्याय १५
मौनों की लूट और लड़ाई

लूट

यह शब्द ही इतना सार्थक है कि अपने अर्थ को स्वयं ही प्रकट कर देता है। इसके माने होते हैं कि पराये सञ्चित धन को बलपूर्वक छीन लेना। मौनों का धन रुपया पैसा तो नहीं होता है। इनकी जो सम्पत्ति होती है वह मधु के रूप मे ही सञ्चित रहती है। इसलिये लूट का अर्थ यहाँ पर किसी घर की मौनों द्वारा दूसरे घर की मौनों के सञ्चित मधु को बलपूर्वक छीन लेने से है। जो मौनें इस क्रिया में भाग लेने लगती हैं, उन्हें लुटेरी-मौनें कह कर पुकारा जाता है। अगर मौनपाल अधिक काल तक इस ओर से लापरवाही कर देवे तो इस क्रिया में भाग लेने वाला की सख्या लगातार बढ़ती रहती है और जो मौनें इस प्रकार से मधु को प्राप्त करने मे सफल हो जाती हैं, उनकी उनकी इस आदत से छुटकारा पाना कठिन ही नहीं असम्भव भी हो जाता है। इसीलिये ज्योंही मौनालय के किसी भी घर में लूट होने लगे, उसका उपचार तत्काल कर दिया जाना चाहिये।

लूट का समय

यों तो लूट कभी भी हो सकती है, लेकिन अधिकांश यह उन दिनो होती है, जब कि मौनों को खाने की कमी हो जाती है। उनके पास भीतर भी सञ्चित मधु समाप्त हो चुकता है और बाहर से भी उसकी प्राप्ति सम्भव नहीं हो पाती है। ऐसे समय में मौनें खाने की तलाश में इधर-उधर घूमती रहती हैं। सौभाग्य से अगर उनको कहीं इसका पता लग पडता है तो वे इस ओर पिल पडती हैं और प्राणों को भी दाव पर लगा देती हैं। यह काल अक्सर प्रधान अमृत श्रावों के समाप्त हो जाने पर आता है।

लूट का कारण

लूट का प्रधान कारण मौनपाल की लापरवाही व अज्ञानता ही होता है।

मौनपाल की लापरवाही से अगर कहीं मधु या कोई अन्य मीठा पदार्थ मौनालय में किसी मौनागृह के आसपास बिखरा रह जाय, तो मौनें यथा शीघ्र उसे ढूंढ निकालती हैं और एक दो करके उसको लेने के लिये आने लगती है। सौभाग्य से अगर उस स्थान के पास में कोई मौनावंश शक्तिहीन अवस्था में हो और उसके भीतर मधु हो, तो मौनें उसके भीतर भी घुस जाने का प्रयास करती हैं। अगर द्वार पर पक्का प्रतिरोध न मिले, जैसा कि अधिकांश होता है, उनको इसका अनुभव होते ही अपने पर भरोसा सा हो पडता है और वे एक दो करके सभी उस वंश पर उसमें संचित मधु को छीनने के लिये पिल पडती हैं। बस यहीं पर लड़ाई का भी आरम्भ हो जाता है, जो बडो भयानक व विनाशक हो पडती हैं और लूट भी प्रारम्भ हो जाती है।

लूट का प्रारम्भ व वृद्धि—ज्यों ही एक वंश में लूट प्रारम्भ होती है तो मौनें न मालूम हर्षोन्मत्त होकर या न मालूम विजय के प्रोत्साहन से एक ऐसे गुंजन से मौनालय को गुंजा देती हैं कि क्षण भर में ही मौनालय में विचित्र दृश्य उपस्थित हो पडता है। विचित्र गुंजन से वातावरण गूंज उठता है। मौनों की कार्य गति में शीघ्रता आ जाती है। बाहर एक बडी संख्या में उड़ती हुई मौनें दिखाई देने लगती हैं। इनकी देखा देखी अन्य दूसरे घरों की मौनें भी बाहर निकल पडती हैं और स्वयं भी बहती हुई गंगा में हाथ धोने के निमित्त रणक्षेत्र में उतर पडती हैं। देखते ही देखते मौनालय के सभी गृहों की मौनें इसमें सम्मिलित हो पडती हैं और सारे मौनागृहों के सम्मुख लड़ाई का विभीषक दृश्य उपस्थित हो उठता है। सब कार्य छोडकर वे एक दूसरे से शहद छीनने की होड करने लगती हैं। सिर पर कफन बांधकर प्रत्येक मौन रणक्षेत्र में उतर पड़ती है और अनेकों की संख्या में वीर गति को प्राप्त होने लगती हैं। अगर मौनपाल इस काल अनुपस्थित रह जावे, इनकी लूट व लड़ाई रोकने की व्यवस्था न कर सके, तो यह लड़ाई बढ़ते-बढ़ते इतनी भयंकर हो जाती है कि सारी मौनागृहों की मौनों का ढेर लग जाता है और सच्चे वीर की भांति जब तक एक भी योद्धा जीवित रहता है, वह युद्ध को जारी रखता है। यानी सबही मौनों की बड़ी संख्या नष्ट हो जाती है।

लड़ाई

लड़ाई तो मौनों की हमेशा उस समय हो जाती है जब कि वे एक घर की दूसरे घर की मौनों के गगन में किसी प्रकार से आ पड़ती हैं। लेकिन लूट के समय जो लड़ाई होती है, वह बड़ी ही विचित्र होती है।

लूटने वाली मौनें भीतर घुसने के घात में लगती हैं और लूटे जाने वाले मौनावंश की मौनें कमर कस कर द्वार पर रक्षा के लिये तत्पर हो पड़ती हैं। कबड्डी के खेल की भांति एक दूसरे को छकाने की प्रतियोगिता सी लग पड़ती है। लूटने वाली मौन बड़े दांव से भीतर घुसने की चेष्टा करती हैं, लेकिन द्वार रक्षक भी ऐसे चुस्त रहते हैं कि उसके भीतर गर्दन डालते ही वहीं पर धर दबाते हैं। कभी तो एक पर एक ही जूझी रहती है। कभी एक पर तीन-तीन तक दिखाई देती हैं। अब दोनों में मल्ल-युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। डंक लगाने के दाव-पेच चलने लगते हैं। इस काल ये एक दूसरे को इतनी होशियारी से पकड़ लेती हैं कि एक का डंक दूसरे के सिर पर लगा रहता है। जब वे दूसरे को कस लेती हैं तो शायद छुड़ाने की चेष्टा में वे पत्ते की भांति नाच उठती हैं। अगर पृथ्वी नीचे स्वच्छ व समतल हो तो वे उस पर इतनी तीव्र गति से बिजली के पत्ते की भांति नाचने लगती हैं कि वे दिखाई तक नहीं देतीं। जब उनमें से एक मर पड़ती है या किसी कारण से छूट पड़ती है, तभी उनका गोलाई में घूमना बन्द होता है। अगर वे बिना एक दूसरे को हानि पहुंचाये छूट पड़ें, तो यथाशीघ्र उड़कर भाग जाती हैं। अगर एक मर जावे तो दूसरी उसको पकड़ कर दूर फेंक आती है। वास्तव में पूरा कुरुक्षेत्र उस दम हो उठता है। अगर मौनों का विनाश इसमें न हो, तो देखने वाले के लिये एक बड़ा कौतूहल इसमें भरा रहता है।

लुटेरी मौनें और उनके घर की पहिचान— इस लूट और लड़ाई को रोकने के लिये, प्रथम इस बात का पता लगाना आवश्यक होता है कि किस घर की मौनें लुटेरी हैं और किस घर की लूटी जाने वाली। जब लड़ाई सारे मौनालय में फैल जावे तो इसे जानना बड़ा ही कठिन हो जाता है। लेकिन फिर भी कुछ बातें हैं, जिनसे इसका पता लग सकता है।

सर्व प्रथम अगर मौनपाल अपने कार्य में दक्ष होगा, तो उसे निश्चित ही होगा, उसके मौनालय में कौन-कौन से मौनवंश शक्ति हीन हैं और कौन से शक्तिशाली। अगर इस बात का मौनपाल को ज्ञान हो तो उसके लिये कोई भी कठिनाई लुटेरी व लूटी जाने वाली मौनों के घरों का पता लगाने में नहीं होगी, क्योंकि हमेशा शक्तिशाली वंश ही लूटने वाले होंगे और शक्तिहीन लूटे जाने वाले।

अब आप शक्तिहीन घरों के द्वार पर दृष्टि डालिये। अगर किसी से लूट हो रही होगी तो मौनें बड़ी संख्या में बाहर अवतारक पट पर इकट्ठी दृष्टिगोचर होंगी और वहां पर लड़ाई, आपसी दाव पेच चल रहे होंगे। अगर लूट उसमें नहीं हो रही होगी तो उसके पास वातावरण शान्त होगा।

इस काल लुटेरी मौनों को भी पहिचानना सरल होता है। क्योंकि लुटेरी मौनें एकाएक भीतर नहीं घुस सकती हैं। जैसा कि प्रत्येक मौन बाहर से आने पर प्रथम प्रयास में ही भीतर चली जाती है। लुटेरी मौन अनेक दाव-पेच के बाद भीतर घुसने में समर्थ रहती है। वह कभी ऊपर और कभी नीचे, कभी एक ओर से कभी दूसरी ओर से भीतर घुसने की चेष्टा करती है। द्वार पर इतना पक्का पहरा रहता है कि वह पकड़ ली जाती है और पीछा तो उसका अवश्य ही किया जाता है। इस प्रकार अगर वह भीतर घुसने में समर्थ भी हो पड़ती है, तो जब भीतर से शहद का बोझ लेकर वह लौटती है, वह सरलता से पहिचानी जा सकती है। क्यों कि वह इतनी अधिकता से पेट को शहद से भर कर बाहर निकलती है कि एकाएक उड़ नहीं सकती। जैसा कि अकसर भीतर से बाहर को जाने वाली मौनें एक दम उड़ान ले लेती हैं। वह कम से कम इस भांति प्रथम प्रयास में ही लम्बी उड़ान नहीं भर पाती है। इस समय अगर मौनपाल की दृष्टि पैनी हो, तो वह उस पर दृष्टि डाल कर मालूम कर सकता है कि वह किस घर से आ रही है। अगर इस प्रकार पहिचानने में न आ सके, तो मौनपाल को लूटे जाने वाले मौनवंश की बाहर भीतर जाने वाली मौनों पर कोई तेज रंग छिड़क देना चाहिये, फिर प्रत्येक

शक्तिशाली मौनों के वंश के द्वारों पर दृष्टि रखनी प्रारम्भ कर देनी चाहिये। जिस घर में रंगीन मौन जाते दिखाई देवें, समझ लेवें लुटेरी मौनें वहीं की हैं।

उपचार

कहावत है, उपचार से बचाव अच्छा होता है। अगर मौनपाल उचित ध्यान देवे तो इस प्रकार की लूट और लड़ाई के दृष्य उसके देखने में नहीं आ सकते हैं। बचाव के लिये ये बातें मुख्य रूप से ध्यान देने की होती हैं। प्रथम तो भूलकर भी मौनालय में बाहर शहद या कोई अन्य मीठा पदार्थ खुला न पड़ा रहने देवें। दूसरा मौनालय में कोई भी शक्तिहीन मौनावंश न रहने देवें। अमृत-श्राव के बाद का भोजन हमेशा रात्रि को खिलावें।

लेकिन ये बातें तो तब की हैं, जब तक कि लूट का प्रारम्भ न हुआ हो, हमें तो सोचना यह है कि अगर बचाव करते-करते किसी भी असावधानी से कभी लूट हो ही पड़े, तो क्या किया जावे। इसके लिये अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है। लेकिन यहां पर हम उन कुछ खास-खास विधियों को लिखेंगे जो अति आवश्यक हैं, या जिनके लिये किसी विशेष प्रकार के यंत्रों की आवश्यकता नहीं होती।

सर्व प्रथम पता लगावें कि कौन घर लूटा जा रहा है और कौन लूटा जाने वाला है। जब इसका पता लग जावे तो लूटे जाने वाले घर के मौनागृह के द्वार को इतना सकरा कर देवें कि एक बार में एक दो मौन से अधिक उसमें से न जा सकें। ठीक उसके बाहर अवतारक पट पर कुछ दूब या दूसरी लम्बी रेशे वाली घास इस प्रकार बिखेर कर डाल देवें कि मौनें बाहर भीतर तो आ जा सकें लेकिन एक दम नहीं। इससे लूटने वाली मौनों को तो कठिनाई होगी और लूटी जाने वाली मौनों को अपनी रक्षा करने में उचित सहायता।

अब लूटने वाले मौनागृह को खोलें उसमें एक दो शहद के छत्तों को इस भांति काट देवें कि उनमें का शहद नीचे टपकने लगे। इस प्रकार जब लुटेरी मौनों को घर ही बिगड़ा मिलेगा तो वे प्रथम उसे संभालने की चेष्टा करेंगी और इस चेष्टा में लूट का ध्यान भूल जावेंगी।

अगर इससे लूट में कमी न आसके, तो लेखक का जो अपना अनुभव है, उसका प्रयोग करें। एक पानी भरा बर्तन लेवें, अगर पिचकारी होतो ठीक है, नहीं तो हाथ से ही लूटे जाने वाले व लूटने वाले दोनों मौनागृहों के बाहर पानी की ऐसी बौछार करें कि मौनें भीग जावें। बाहर उडने वाली मौनों पर भी इसका प्रयोग करें और उस काल तक बौछार करते जावें जब तक कि वातावरण शान्त न हो जावे। इससे वातावरण अवश्य शान्त हो जावेगा। इससे प्रथम तो मौना को बारिस का बोध हो पड़ता है। वे एक दम घर में बन्द होने की चेष्टा करने लगती हैं। दूसरा उनके पर इस भांति भीग जाते हैं कि वे आसानी से उड नहीं पाती हैं। ज्यों ही लूट करने की चेष्टा करती हैं तो पकड ली जाती हैं। इससे उनको हतोत्साहित हो जाना पडता है।

चित्र ६०—लूट रोकने की जाली
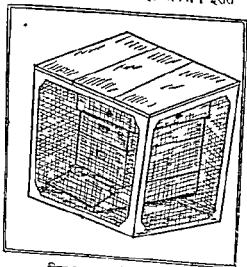
इसके अलावा एक जाली की विधि है। जिसका उपयोग मौनपाल उपयुक्त बताते हैं। इसके लिये एक जाली का बना ढक्ना होता है। (चित्र ६०) यह ढक्ना इतना बड़ा होता है कि इसमें मौनागृह ढका जा सके। अगर यह जाली बनी हो या उपलब्ध हो सके, तो इससे मौनागृह को ढक देना चाहिये। इससे भीतर गई लुटेरी मौनें अब कैद हो जावेंगी और बाहर निकलने में असमर्थ हो जावेंगी। फिर थोड़ी थोड़ी देर ठहर कर जाली को एक ओर से ऊपर उठा लेना चाहिये ताकि जाली के बाहर से भनभनाने वाली लुटेरी मौनें भीतर घुस सकें और फिर उसे नीचे छोड़ देना चाहिये। इस प्रकार कुछ बार करने से सभी लुटेरी मौनें कैद हो जावेंगी और शाम होने पर वे जाली के ऊपरी कोने में मुण्ड बना कर

जमा हो जावेंगी। जब शाम हो जावे तो इस जाली को मौनागृह से अलग हटा देना चाहिये। अगर लुटेरी कैदी मौनें बहुत कम हों तो नष्ट कर दी जानी चाहिये, अगर अधिक हों तो कहीं दूर दूसरे सहायक मौनालय की मौनों से मिला दी जानी चाहिये या शिशुपूर्ण छत्ते देकर स्वतन्त्र मौनावंश बना दिया जाना चाहिये। इस विधि का एक मात्र प्रयोजन लुटेरी मौनों को कैद करके नष्ट कर देने का है। इसलिये जिस काल जाली उठाई जावे, उस समय ध्यान रक्खा जावे कि जाली के भीतर कैद हुई लुटेरी मौनें बाहर न निकल आवें।

अगर ये सभी विधियाँ असफल सिद्ध हों तो अन्तिम विधि है कि लुटे जाने वाले मौनावंश का द्वार बन्द करके उसे कहीं बन्द कमरे में रख दिया जावे या अन्यत्र पहुंचा दिया जावे। इससे कुछ ही काल में फिर शान्ति हो जावेगी। अगर लूट भयकर रूप धारण कर चुकी हो तो लूटने वाले वंश को भी हम इसी प्रकार उठाकर बन्द कर सकते हैं या दूर ले जाकर रख सकते हैं। जब शान्ति हो जावे तो पुनः वापिस ला सकते हैं।

लूट की आदत

लूट की आदत का पड़ जाना भयकर होता है। जिस प्रकार अगर मनुष्य को लूट के माल पर मौज उडाने का स्वाद एक बार लग जावे तो फिर बड़ी बड़ी यातनायें पाने पर भी उसके लिये उसे छोड़ देना कठिन ही हो जाता है। उसी प्रकार अगर मौनों को भी लूट करने का अधिक समय मिल चुका हो तो उनके लिये भी एकाएक इसको भुला देना कठिन हो जाता है। समय पाते ही वे पुन. इस काम पर जुट पडती हैं। अगर लुटेरी मौनो की सख्या कम हो तो कोई बात नहीं लेकिन अगर उनकी सख्या बहुत अधिक हो, तो हमेशा उन्हें कैद करके पकडने की ही चेष्टा करनी चाहिये। पकड़ कर या तो वे नष्ट कर दी जावें या अन्यत्र दूर ले जाकर रखदी जावें। उसी मौनालय में रखे जाने पर उनसे फिर लूट के आरम्भ होने का भय बना रहता है।

अध्याय १६

मौनों का भोजन

प्रत्येक जीव का प्राण आधार खाना ही होता है। उसकी समस्त जीवन लीलायें इसी खाने को लेकर प्रारम्भ होती हैं। यदि खाना न हो, तो जीवन भी न हो। इसी कारण विचार होता है कि मौन, जो मधु-सदृश देव दुर्लभ पदार्थ के सञ्चय में ही अपना सारा जीवन-काल लगा देती है, खाती क्या होगी? वास्तव में मौन जो मधु सञ्चय करती है, अपने खाने के लिये ही करती है। जो बचा कर रखती है वह हमारे आपके खाने के लिये नहीं, बल्कि बुरे समय में अपने ही लिये वह उसका सग्रह करती है। मौन का भोजन शुद्ध मधु व पराग ही होता है। मधु से भी पराग की उपयोगिता उनकी समृद्धि के लिये अधिक है।

अब प्रश्न होता है यदि मधु और पराग ही उनका भोजन है और वे जो मधु सञ्चय करती हैं सब अपने ही खाने के लिये करती हैं तो फिर मौनपाल को उनके पालने से क्या लाभ? परन्तु बात ऐसी नहीं होती है। यों तो मौनें इतनी आलसी व परावलम्बी नहीं होता कि वे अपने भोजन के लिये हमारी ओर ताकें। अगर हम उनके प्रबन्ध के बीच न आ जावें तो वे अपना सभी प्रबन्ध कुशलता से कर सकती हैं। विपत्ति काल के लिये उनके द्वारा सञ्चित मधु को अपने प्रयोजनार्थ हम निकाल कर जब उनके प्रबन्धमें बाधा डाल देते हैं, तो हमारा कर्तव्य भी हो जाता है कि हम कठिन समय में उनकी सहायता भी करें अन्यथा अपने ही स्वार्थ को देख कर हम उनके जीवन को खतरे में डाल देंगे और भविष्य में उनसे कुछ भी नहीं पा सकेंगे।

पूर्तिकारक भोजन—मौनपालों ने इसी समस्या को लेकर बड़ी खोजें की हैं। बड़े अनुभव के पश्चात कुछ वस्तुओं को खोज निकाला है जिनसे

प्रयोग से हम अमृत और पराग की कमी को दूर कर सकते हैं। यदि मौनों को प्राकृतिक मधु व पराग देना सम्भव न हो सके, तो उनके जीवन-रक्षार्थ हम जिन वस्तुओं का प्रयोग कर सकते हैं उन्हीं को पूर्तिकारक भोजन कहते हैं। मधु के स्थान पर जो दिया जावे उसे मधु-पूर्तिकारक भोजन व पराग के स्थान पर जो दिया जावे उसे पराग-पूर्तिकारक भोजन कहते हैं।

मधु-पूर्ति-कारक—मधु के बदले में हम रौदार चीनी को समयानुसार भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रयोग में ला सकते हैं।

पराग-पूर्ति-कारक—पराग के बदले मौनपालों ने अनेकों वस्तुओं को खोज निकाला है। परन्तु वे अधिकांश हमारे देश में उपलब्ध नहीं हैं। हम इस समय मधु के साथ ओगल की रोटी बनाकर, जिसे फाफर या कुट्टू भी कहते हैं, प्रयोग में ला सकते हैं।

भोजन की आवश्यकता—मौनें किसी की सहायता की आश्रित नहीं होतीं। वे कर्मठ की ही भांति अपनी सभी विपदाओं को ठेल सकती हैं। परन्तु अपने स्वार्थ के लिये हमें उनकी सहायता करना आवश्यक हो जाता है। हम उनसे मधु ले लेते हैं और उनसे अधिक की फिर आशा करते हैं। इसीलिये समय समय पर उनकी कठिनाइयों को सरल कर देने से उनकी हम रक्षा भी करते हैं, तथा उन्हें मधु-संचय के लिये शक्ति व योग्यता भी प्रदान करते हैं।

आज का वैज्ञानिक मौनपाल मौनों को दो कारणों से भोजन देना उपयुक्त समझता है। पहिला भूख से उनकी रक्षा करने के लिये। दूसरा उनकी वंश वृद्धि के लिये।

भूख से बचाने के लिये भोजन देने की हमें आवश्यकता उस समय होती है जबकि मौनागृह के भीतर भोजन समाप्त हो चुका हो, तथा बाहर से भी उसकी प्राप्ति कम हो रही हो। इसकी आवश्यकता मधु-निष्कासन के पश्चात, वर्षा व जाड़े की ऋतु में प्रधान रूप से होती है।

प्रधान अमृत-आवों के डेढ़, दो मास पूर्व से मौनों को वंश-वृद्धि के लिये खिलाना आवश्यक हो जाता है। मौनों का जीवन बड़ा सुव्यवस्थित होता है। मनुष्य के जीवन में अनेकों मूर्खतायें मिल सकती हैं। परन्तु इनके जीवन के

प्रत्येक क्षेत्र में बुद्धिमता, दूरदर्शिता आदि पूर्ण रूप से भरी हुई पाई जाती हैं। भोजन के होते हुए कोई भी वहा भूखा नहीं मर सकता। काम के होते हुए कोई आलस्य का जीवन वहाँ बिताते हुए नहीं पाया जाता। ढोंग, छल-प्रपन्च को उनके संसार में स्थान नहीं। इन सबमें उनका विवेक काम नहीं करता है, तो क्या करता है ?

वे सन्तान इसलिये पैदा नहीं करतीं कि वे भूखी मरें। मा-मौन की अडे देने की गति भोजन की मात्रा पर या प्राप्ति की आशा पर निर्भर करती है। बसन्त के आरम्भ से वह अडे देने की गति में वृद्धि करने लगती है। बाहर से पराग व अमृत की वृद्धि के साथ ही साथ वह उस गति को मई व जून में अपनी पराकाष्ठा पर पहुचा देती है। उसके बाद बरसात का आगमन होता है। बाहर से आने वाले पराग व अमृत की मात्रा में कमी होने लगती है। साथ ही साथ उसके अडे देने की क्रिया भी शिथिल पड़ जाती है। फिर बरसात के समाप्त होने पर अगस्त अन्त से उसमें वृद्धि होने लगती है और सितम्बर, अक्तोबर तक वह उसे पुनः अपनी पराकाष्ठा पर पहुचा देती है। इसके पश्चात जाड़ों के आरम्भ होते ही उसमें फिर शिथिलता आ जाती है।

इसीलिये मा मौन की अडे देने की गति में तीव्रता लाने के लिये आवश्यक रहता है कि प्रधान अमृत-स्रावों से पूर्व उनको भोजन दिया जावे। लगातार शरबत व अत्यधिक पराग पर ही मा-मौन की अडे देने की गति निर्भर करती है। मा-मौन इस काल जितने भी अधिक अडे दे सकेगी, आने वाले अमृत-स्राव से मौनपाल को उतना ही अधिक लाभ होगा।

इस काल मौनों की वृद्धि के लिये जो भोजन दिया जावे वह लगातार दिया जावे, चाहे उसकी मात्रा कम हो परन्तु उसका सिलसिला नहीं टूटना चाहिये। वह इस प्रकार दिया जाना चाहिये कि लगातार एक ही परिमाण से मौनों को मिलता रहे।

मधु पूर्ति-कारक भोजन

मधु की पूर्ति के लिये चीनी का शरबत बना कर देना उपयुक्त रहता है। इसके लिये मदा रौशर चीनी का ही प्रयोग किया जाना चाहिये।

शरबत बनाना—शरबत इम ठडे व गरम दोनों प्रकार के पानी में घोल कर बना सकते हैं। गरम पानी म चीनी शीघ्र घुल जाती है। इस कारण यदि गरम पानी का ही प्रयोग किया जाये तो उचित होगा। पानी गुनगुना होना चाहिये, ताकि मौनें उसे ले सकें। शीतल जल का प्रयोग केवल ग्रीष्म-काल में ही हो सकता है। मैदानी भागों में जहां गरमी अधिक पड़ती है इसका सदा प्रयोग कर सकते हैं।

यदि शरबत थोड़ी मात्रा मे बनाना हो तो उसे किसी भी प्रकार तैयार कर सकते हैं। यदि उसे अधिक मात्रा में तयार करना हो, तब किसी प्रकार की मथनी का प्रयोग करना उपयुक्त होता है। अन्यथा चीनी के घुलने में देर लग जाती है। चीनी का पूर्ण रूप से घुल जाना ही ठीक रहता है।

शरबत के प्रकार—शरबत तो केवल एक ही प्रकार का होता है। पानी मे चीनी डाल कर ही इसे तैयार किया जाता है। परन्तु समय व अवस्थानुसार इसमे पानी व चीनी के अनुपात म अन्तर हो जाता है। कभी तो इसे गाढा बनाकर प्रयोग में लाया जाता है, कभी पतला। अधिकाश शरबत समयानुसार निम्न प्रकार बनाना चाहिये।

ग्रीष्म काल—इस समय में पतला शरबत ठीक रहता है। दो भाग पानी में एक भाग चीनी मिलाकर बनाया गया शरबत अच्छा होता है। लगातार भोजन के लिये भी इसी अनुपात से बनाया गया शरबत प्रयोग में लाया जा सकता है।

बरसात—बरसात मे कुछ गाढ़ शरबत की आवश्यकता होती है। शीत प्रदेशों में ठडे पानी के स्थान पर गरम पानी में घोलकर इसे बनाना उचित होता है। इस काल एक भाग पानी में एक भाग चीनी मिलाकर इसे तैयार करना उपयुक्त रहता है।

पतझड—पतझड़ काल में जब कि जाड़ों के लिये मौनों को तैयार करना हो तब और भी अधिक गाढे शरबत की आवश्यकता रहती है। इस ऋतु के प्रथम भाग में दो भाग चीनी व एक भाग पानी तथा अन्तिम भाग में ढाई

भाग चीनी व एक भाग पानी मिला कर बनाया गया शरबत दिया जाता है। शीत-प्रदेशों में गुनगुने जल में ही इसे तैयार करना चाहिये।

जाड़ा—जाड़ों में शरबत के स्थान पर मिश्री का प्रयोग किया जाता है। इसका वर्णन शीत-कालीन बक्सर में विस्तारपूर्वक दिया गया है।

शरबत देने के ढंग

मौनों को शरबत के रूप में भोजन देने के दो प्रकार होते हैं। पहिला बाह्य भोजन, दूसरा आन्तरिक भोजन।

बाह्य भोजन या खुला-भोजन—इस प्रकार का भोजन खुले स्थान पर बाहर मैदान में रखकर दिया जाता है। इसी कारण इसको बाह्य-भोजन कहते हैं। यह ढंग उपयुक्त नहीं है। इसमें लूट व लड़ाई की सम्भावना रहती है। क्योंकि इसमें सभी मौनावंशों की मौनें भोजन लेने के लिये एकत्रित हो जाती हैं। परन्तु इसका उपयोग भी अधिकांश मौनों की लूट को रोकने के लिये ही होता है। जब मौनें किसी मौनावंश को लूटने में संलग्न रहती हैं तो उनके ध्यान को उस ओर से हटाने के लिये उन्हें इस प्रकार का भोजन देना अनेकों बार उपयुक्त सिद्ध होता है। परन्तु इसका उपयोग मौनपाल को बड़ी सावधानी व चतुरता से करना चाहिये।

इसमें शरबत बहुत पतला बनाया जाता है। किसी भी चौड़े बर्तन में, चिलमची, टब, परात आदि में रखकर इसे खिलाया जा सकता है। इन बर्तनों में एक दो इंच तक शरबत भर कर कहीं पर रख दिया जावे। शरबत में बड़ी व मोटी, न गलने वाली घास, पत्ती या कपड़ा डाल देना उपयुक्त रहता है। इससे मौनें डूबने नहीं पाती हैं और इनमें बैठ कर शरबत सरलतापूर्वक खा लेती हैं।

इसमें पहिले शरबत कुछ गाढ़ा बनाया जाता है ताकि मौनें आकर्षित हो जावें। जब मौनें आने लगें तब उसे पतला कर देना चाहिये। यहां तक कि ८-९ भाग पानी व एक भाग चीनी का घोल बनाना उपयुक्त माना जाता है।

नवीन मौनपाल को इसे उपयोग में नहीं लाना चाहिये। परन्तु चतुर मौनपाल लूट, लड़ाई आदि के रोकने के लिये या मधु निष्कासन के समय मौनों का ध्यान मधु की ओर से रोकने के लिये या निरीक्षण करते समय मौनों को किसी वंश को लूट से बचाने के लिये इस प्रकार के खुले भोजन का सफल प्रयोग कर सकता है।

आन्तरिक-भोजन या बन्द भोजन मौनों को शरबत देने की यह दूसरी विधि है। इसमें मौनपाल मौनागृहों के अन्दर भोजन का बर्तन रखकर भोजन खिलाता है। इसी कारण इसका नाम आन्तरिक या बन्द भोजन है।

मौनपाल अधिकांश इसी प्रकार से मौनों को भोजन खिलाते हैं। यह विधि उपयुक्त व लाभदायक भी है। इसमें भोजन मौनागृहों के भीतर रखा जाता है। इससे मौनों में लूट व लड़ाई की सम्भावना नहीं रहती। तथा बिल्कुल समीप में ही बर्तन के रहने से व शरबत के गाढ़ा अधिक होने से उन्हें शरबत को दौड़कर लाने में, उसे पुन गाढ़ा करने में अपनी शक्ति कम व्यय करनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त इसमें बाहर की अन्य दूसरी मौनें भी शरबत नहीं खा सकती हैं और न शक्तिशाली वंशों को शक्तिहीन वंशों का भाग खाने का ही अवसर मिलता है।

इस प्रकार शरबत देने की अनेकों विधियां व अनेकों यन्त्र बन चुके हैं। प्रवेश द्वार से, चौखटों के मध्य से या चौखटों के ऊपर से शरबत देने की अनेकों विधियों का आविष्कार हो चुका है। परन्तु हमको न तो वे यन्त्र ही प्राप्त हैं और न हम उन पर पैसा ही व्यय कर सकते हैं। इस कारण यहां पर दो तीन ऐसी विधियां बतलाई गई हैं, जिन्हें हम सरलतापूर्वक काम में ला सकते हैं तथा इनसे पूरा प्रयोजन भी सिद्ध कर सकते हैं।

कांच की शीशी व प्याली की विधि—इस विधि में एक चौड़े मुंह वाली कांच की शीशी या चीनी मिट्टी आदि की तश्तरी की आवश्यकता होती है। शीशी इस प्रकार की होनी आवश्यक होती है कि यदि उसे तश्तरी के ऊपर उलट कर रखा जाये तो वह रुक सके तथा वह तश्तरी पर पूर्णरूप बैठ जाये।

शरबत बनाकर शीशी में भर दिया जाता है। फिर तश्तरी का ऊपर से ढक्कन लगा कर, एक हाथ से शीशी को और दूसरे हाथ मे तश्तरी को पकड़ कर इस प्रकार उलट दिया जावे कि तश्तरी नीचे व शीशी ऊपर से उलटी हो जावे तथा शरबत बाहर न छलकने पावे। इन दोनों बरतनों को इसी दशा में मौनागृह के भीतर चौखटों के ऊपर रख दिया जाता है। शीशी के अन्दर से शरबत प्याली में धीरे धीरे निकलते रहता है और मौनें प्याली मे से खाती रहती हैं।

इसमें एक बात विशेष ध्यान देने योग्य यह होती है कि शरबत उतनी ही मात्रा में बाहर निकल कर तश्तरी में आना चाहिये जितना कि मौनें खा सकें। अन्यथा शरबत के मौनागृह में बिखर जाने की सम्भावना रहती है।

टिन के डिब्बे की विधि—इसके लिये एक टिन के डिब्बे की आवश्यकता होती है। उसके तले पर महीन छिद्र बना दिया जाता है ताकि उस छिद्र से उतना ही शरबत निकले जितना कि मौनें सरलतापूर्वक खा सकें। इस डिब्बे में शरबत भर दिया जाता है और ढक्कन लगा कर मौनागृह के भीतर सीधा चौखटों के ऊपर या छिपरती ढक्कने के निर्वासक छिद्र के ऊपर इस भांति रख दिया जाता है कि डिब्बे के छिद्र से शरबत नीचे को निकलता रहे और मौनें खाती जावें। ठंडी ऋतु में शरबत को ठंड से बचाने के लिये डिब्बे को गरम कपड़े से लपेट कर भी रखा जा सकता है।

इस विधि में एक दो बातें ध्यान धरने की होती हैं। (१) अनेक बार मौनपाल शरबत देकर अन्यत्र चले जाते हैं और डिब्बे पर छिद्र के अधिक चौड़ा हो जाने से शरबत सब नीचे बिखर कर प्रवेश द्वार से बाहर निकल आता है और उसके लौटने तक मौनें लूट में संलग्न रहती हैं। इस कारण छिद्र का सही नाप का होना अत्यन्त आवश्यक होता है। छिद्र न तो इतना छोटा ही हो कि बिल्कुल बन्द हो जाय और न इतना बड़ा कि शरबत गिर पड़े। (२) इन डिब्बों में शरबत अधिक न रखा जावे। इनमें जंक लगने की सम्भावना रहती है, जिससे शरबत खराब हो जाता है। लगातार भोजन के लिये इसी को प्रयोग में लाया जाता है।

खुली तश्तरी की विधि—इसके लिये चीनी मिट्टी या टीन की थोड़ी गहरी तश्तरी की आवश्यकता होती है। शरबत तश्तरी में रख दिया जाता है और मौनों को डूबने से बचाने के लिये उसमें कपड़ा डाल दिया जाता है। फिर तश्तरी को मौनगृह में चौखटों के ऊपर रख दिया जाता है। मौनें ऊपर आकर कपड़े के सहारे शरबत खा लेती हैं।

यह विधि बड़ी अच्छी है। परन्तु इसमें भी दो बातें विशेष ध्यान देने योग्य होती हैं। (१) मौनों को डूबने से बचाने के लिये इतना कपड़ा डाल देना चाहिये कि कपड़ा शरबत के सदा ऊपर व कहीं नीचे आ जावे। बिल्कुल नीचे डूबा हुआ कपड़ा कुछ भी काम नहीं आ सकता। (२) कपड़े का कोई भी भाग तश्तरी के बाहर न लटका रहे। ऐसा हो जाने से सब शरबत कपड़े द्वारा शीघ्र ही नीचे बिखर जायगा।

बोतल की विधि—यदि मौनालय में मौनगृह पास पास हों और अधिक हों तो अन्य प्रकार से शरबत देने से लूट व लड़ाई की सम्भावना रहती है। ऐसे मौनालयों में शरबत बोतलों में भर कर देना उपयुक्त होता है। बोतल में शरबत भर कर कपड़े की डाट इस प्रकार लगाई जाती है कि बोतल को दुलका कर रखने से न तो शरबत ही एकाएक अधिक आने पावे और न आना बिल्कुल बंद ही हो जावे। बोतल को मौनगृह के भीतर तिरछा रखा जाता है। मौनें डाट पर लगे कपड़ों से शरबत खा लेती हैं।

शरबत देने में सावधानियाँ—शरबत देने में मौनपाल को कुछ बातों से अवश्य सावधान रहना चाहिये, जिनका यहाँ पर थोड़ा वर्णन कर देना उचित ही है।

(१) मौनपाल को समयानुसार ही चीनी और पानी की मात्रा शरबत बनाने में प्रयोग में लानी चाहिये। शीत प्रदेशों में, केवल एक ग्रीष्म ऋतु के अतिरिक्त सदैव गरम जल का प्रयोग करना चाहिये। जाड़ों में मिश्री ही का प्रयोग होना चाहिये।

(२) जब लगातार भोजन, शरबत के रूप में, मा-मौन को अंडे देने के लिये प्रवृत्त करने के वास्ते दिया जा रहा हो, तो ध्यान रहे कि शरबत का क्रम टूटने

न पावे। चौबीसो घंटे बराबर वह मौना को मिलता ही रहे, अन्यथा लाभ होने के बदले हानि ही होने की सम्भावना अधिक हो जाती है।

(३) इसके अतिरिक्त जब बाहर मधुश्राव समाप्त हो चुका हो, किसी माना में भी पुष्पामृत प्राप्त नहीं हो रहा हो तो उस काल भी शरबत लगातार मौनों के पास पहुंचना आवश्यक होता है। अन्यथा क्रम के टूटते ही, मौनें बाहर निकल कर इधर उधर शरबत की ढूंढ करने लगती हैं। सहसा खाने के बन्द हो जाने से उनको आश्चर्य व क्रोध होना हो उठते हैं। वे लूट करने को प्रवृत्त हो पडती है। ऐसी अवस्था को रोकने के लिये ही मौनपाल रात्रि को या जब बाहर वारिश धीरे धीरे पड रही हो, उस समय शरबत देना उपयुक्त समझते हैं ताकि मौनें बाहर निकल कर लूट न करें।

(४) अत्यन्त शीत में शरबत देना उचित नहीं होता है। शीत में मौनें भीतर बन्द हो जाती हैं। इस काल यदि उन्हें शरबत लगातार भोजन के रूप में दिया जाता है तो वे कभी सहसा बाहर निकल पड़ती हैं और ठंड में मर जाती हैं। उन्हें शरबत मिल जाने से कदाचित मधुश्राव का सा बोध हो पडता हो।

खाद्य-कक्ष

पश्चिमी देशों के बड़े बड़े मौनपाल अब इस बात को अधिकाश मानने लग गये हैं कि मौनों को शरबत के रूप में चीनी खिलाना मूर्खता है। उनका कहना है कि शरबत को गाढा करने में, उसे ले जाने में, मौनों की शारीरिक शक्ति का ह्रास होता है। मौनपाल का अनावश्यक यत्नों पर व्यय होता है। शरबत बनाने व उसे खिलाने में समय नष्ट होता है। इस पर भी कहा नहीं जा सकता कि मौनों को ठीक समय पर आवश्यकतानुसार शरबत की प्राप्ति हो ही जाती होगी। साथ ही साथ लूट व लडाई का भय ऊपर से लगा ही रहता है।

इन सभी कमियों को दूर करने के लिये उन्होंने मौनों को शुद्ध मधु खिलाना प्रारम्भ कर दिया है। मधु-श्राव के पश्चात् मधु निष्कासन के समय मौनावंश की आवश्यकतानुसार वे खाद्य कक्ष में मधुपूर्ण छत्ते अनिष्कासित हो

छोड़ देते हैं। इन्हीं मधुपूर्ण छत्तों से भरे हुए गद्दकों को ही वे खाद्य-कक्ष के नाम से पुकारते हैं।

ये कक्ष मौनावंशों के ऊपर समयानुसार अनेकों प्रकार से दे दिये जाते हैं। मौनें आवश्यकतानुसार इनमें से भोजन लेती रहती हैं। वास्तव में इनसे मौनपाल को बड़ी सुगमता व बड़ा लाभ होता है। परन्तु हमारे लिये अभी उन विधियों को जानने की आवश्यकता नहीं है। हमें शरबत से ही काम चलाना चाहिये। जब हमारे देश में भी मधु का उत्पादन बढ़ जायगा तब हम भी इसका प्रयोग करने लगेंगे। यदि कोई इनका प्रयोग करना ही चाहें तो वह शिशु-कक्ष के ऊपर खाद्य-कक्ष, खाने की कमी के काल में रखकर कर सकते हैं। इससे दोहरा काम निकल जावेगा। मौनें मधु को खाती जावेंगी और मां मौन को यदि आवश्यकता हो तो खाली कोठरियां में, अंडे देने को भी स्थान मिल जावेगा। शिशु-पालन के समाप्त होते ही, खाद्य-कक्ष के शिशु निकलते जावेंगे और मौनों को मधु एकत्रित करने को स्थान मिल जावेगा। परन्तु हमारे लिये अभी तक ये सब बातें अन्वेषण करने की ही हैं।

पराग-पूर्ति-कारक भोजन

अभी तक यह बतलाया गया है कि मौनों को मधु के स्थान पर क्या दिया जा सकता है। मधु के अतिरिक्त पराग, मौनों के भोजन का दूसरा प्रधान अंग है। शिशु पालन के लिये इसकी विशेष आवश्यकता होती है। शिशु व कुमार मौनों की जीवन-वृद्धि इसी पर निर्भर करती है। केवल मधु या शरबत के मिलने से मौनागृह में शिशु-पालन में वृद्धि नहीं होती। इसके लिये उन्हें पराग मिलना आवश्यक होता है। मौनें पराग खाकर ही मधु अवलेह बना पाती हैं, जो कीटावस्था में कुछ दिन तक प्रत्येक मौन को देना आवश्यक होता है।

विदेशी मौनपाल पराग के बदले अनेकों पदार्थ देते हैं। परन्तु हमारे लिये वे अभी तक उपलब्ध नहीं हैं। मधु के साथ श्रोगल की रोटी खिलाना हमारे लिये उपयुक्त हो सकता है। चैत्री व कार्तिकी मधुश्राव के पूर्व शिशु-

पालन के लिये इसे खिलाना आवश्यक है। मधु में ओगल के आटे को मिला कर रोटी बना ली जानी चाहिये फिर उसे मौनागृह में चौगटा के ऊपर वैसे ही रख दिया जावे। मौनें स्वयं उसे नीचे या ऊपर से खा लेंगी। रोटी को अधिक गीला नहीं होना चाहिये।

अध्याय १७
मौनावंशों को मिलाना

मौनावंशों को मिलाने से हमारा अभिप्राय है कि एक या एक से अधिक मौनावंशों को मिलाकर एक बना देना।

यह क्या होता है? इसकी क्यों आवश्यकता होती है? आज के वैज्ञानिक मौनपाल ने इस बात को अपने अन्वेषण द्वारा सिद्ध कर दिया है कि *मधु का उत्पादन मौनागृहों की संख्या पर नहीं, बल्कि मौनागृह में मौनों की संख्या पर निर्भर करता है।* बहुत से शक्तिहीन मौनावंश रखने से थोड़े से शक्तिशाली मौनावंश रखना लाभदायक होता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर दक्षिणी अफ्रिका के एक वृद्ध मौनपाल ने एक मौनावंश से एक साल में एक टन शहद का उत्पादन करके दुनिया के मौनपालों को आश्चर्य में डाल दिया है और वैज्ञानिक मौनपालों को इस नवीन मार्ग की ओर बढ़ने के लिए उत्साहित किया है कि मौनावंशों की संख्या पर ध्यान देने से उनकी सफलता मौनावंशों की शक्ति पर ध्यान देने में अधिक निर्भर करती है। इसीलिए कभी कभी मौनपालों के जीवन में मौनावंशों को मिलाने का भी अवसर आ जाता है।

यह अवसर निम्न स्थितियों में आ सकता है —

(१) यदि मौनपाल अमृतस्राव के प्रारम्भ में अपनी शक्ति भर कोशिश करने पर भी मौनावंश को समृद्ध बनाने में असमर्थ रहता है तो वह अमृतस्राव का पूर्ण उपयोग करने के लिए दो शक्तिहीन मौनावंशों को मिलाकर एक शक्तिशाली मौनावंश बना लेता है या उस शक्तिहीन को किसी शक्तिशाली मौनावंश से मिला देता है या अन्यत्र से मौनें लाकर उस शक्तिहीन मौनावंश में *मिलाकर उसे शक्तिशाली कर देता है।*

(२) ठीक इसी भांति जब शीतकाल का आगमन होता है तो मौनों को

क्या आप ऐसा नहीं कर सकते हैं ?
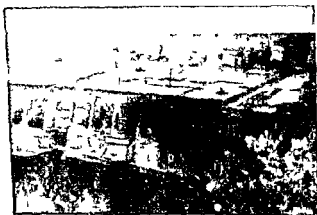
श्री इन्द्रलाल वर्मा जी, सहायक अध्यापक रानीखेत इन्टर कॉलेज द्वारा रखे गये मौनागृह

श्री शिवचरण पांडे जी, सहायक अध्यापक
रानीखेत इन्टर कॉलेज द्वारा रखे गये मौनागृह

क्या आप भी इस प्रकार घर के आगे पीछे कुछ सौन्दर्य नहीं रख सकते हैं ?

श्री देवीलाल साह जी, सहायक अध्यापक राजकीय [illegible]
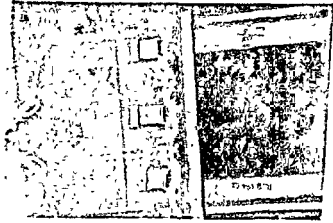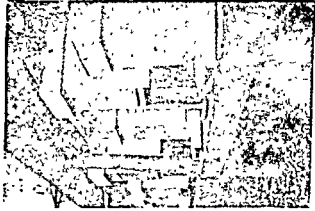
शीत से बचाने के लिए अनेकों उपाय करने पडते हैं। उन्हें घास फूस से बांधकर रखना पडता है ताकि बाहर की ठंडक का प्रभाव मौनागृह के भीतर न पड़ सके, जैसा कि शीतकालीन बचाव वाले पाठ में स्पष्ट रूप से बतलाया गया है। इसीलिए चतुर मौनपाल अनेकों शक्तिहीन मौनवंशों का शीतकालीन बचाव करने के स्थान पर उन्हें मिलाकर थोड़े से शक्तिशाली मौनावंशा में बदल देते हैं। इससे शीतकालीन बचाव पर होने वाले आर्थिक बोझ में तो कमी आ ही जाती है साथ ही साथ मौनों को भी शीत से लडने के लिए शक्ति मिल जाती है।

(३) कभी कभी मां मौन हीन या किसी अन्य कारण से दुर्बल और नष्ट होने वाले मौनावंशा को भी मिलाने की आवश्यकता पड जाती है।

लेकिन ऐसा करने के मार्ग में कुछ सबसे बडी बाधायें होती हैं। जिनको दूर किये बिना मौनपाल दो भिन्न भिन्न वंशों की मौनों को एक में नहीं परिवर्तन कर सकता है। वह बाधायें इस प्रकार हैं (१) मौनों को पराये वंश की मौनों को पहिचानने की पूरी शक्ति होती है। (२) व अपने घर की स्थिति की सही जानकारी रखती हैं।

मौनें अपने घर को सही रूप से पहिचानती हैं। अगर दो मौनागृह पास पास रक्खे जावें तो कदापि एक घर की मौन दूसरे घर में जाने की भूल नहीं करेगी। कदाचित अगर यह भूल कभी हो भी पडे तो नये घर की मौनें उसे द्वार पर ही पकड लेंगी और घायल करके दूर फेंक आवेंगी।

इसीलिए दो भिन्न भिन्न वंश की मौनों को आपस में मिलाने के लिए मौनपाल को इन बाधाओं को दूर करने का ध्यान रखना चाहिये, अन्यथा सिवाय हानि के कुछ भी हाथ नहीं आवेगा।

ये बाधायें निम्न प्रकार से दूर की जा सकती हैं —

१ घर की स्थिति के बारे में भुलावा देना—मौनें अपने घर के चारों ओर की २, २½ मील की गोलाई तक की स्थिति से पूर्ण रूप से परिचित होती हैं। वे इतनी ही परिधि के अन्दर अमृत व पराग के संग्रहार्थ जाती हैं। इसीलिए इतनी ही दूरी तक की भूमि से वह जानकार भी रहती हैं।

इतनी दूरी के अन्दर अगर हम किसी भी काले या मौनागृह की किसी संग्रही मौन को पकड़ कर कहीं पर भी छोड़ आवें, तो वह अवश्य बिना धोखा खाये अपने घर लौट आवेगी। इसीलिए अगर हम किसी भी दो भिन्न भिन्न घर की मौनों को आपस में एक करना चाहें तो हमारे लिए आवश्यक हो जाता है कि हम उनके लिए ऐसी स्थिति पैदा कर देवें कि वह अपने पुराने स्थान को पूर्णरूप से भूल जावें।

यह काम उन मौनावंशों में तो कोई कठिन नहीं होता जो आपस में २ या २ से अधिक मीलों का अन्तर अपने बीच में रखते हैं। ऐसी स्थिति में हम उनमें से किसी एक को भी दूसरे के पास तक ले जाकर मिला सकते हैं। लेकिन जो मौनावंश आपस में २ मील से कम दूरी रखते हों, उनके लिये यह क्रिया सम्भव नहीं। उनके लिये हमें निम्न प्रकार कार्य करना होगा।

अगर मौनावंश कुछ ही गजों की दूरी बीच में रखते हों और करीब करीब एक ही तल पर अवस्थित हों तो उनमें से एक को या दोनों को रोजाना २ या ३ फीट तक खिसका कर एक दूसरे के बिल्कुल पास रख सकते हैं और फिर मिलाने की क्रिया द्वारा उन्हें मिला सकते हैं। क्योंकि मौनें इतनी दूरी तक के स्थान परिवर्तन को यथा शीघ्र पहचान लेती हैं।

अब सवाल होता है उन मौनावंशों का जो आपस में लगभग २ मील का अन्तर भी नहीं रखते हों। तथा थोड़ा थोड़ा हटा कर भी नहीं लाये जा सकते हों। ऐसी स्थिति में हमें मिलाये जाने वाले मौनावंश को एक दो सप्ताह तक २ या २½ मील की दूरी वाले ऐसे नये स्थान में रख देना चाहिये जो उस मौनागृह के स्थान से भी २, २½ मील की दूरी रखता हो, जिसमें कि मौनें मिलाई जाने वाली हों। जब मौनें अपने पुराने निवासस्थान को भूल जावें तो उन्हें उस मौनागृह के पास उठा लावें, जिसमें कि हमने मौनों को मिलाना है।

बकछूटों के लिये यह नियम लागू नहीं होता। उसे हम कहीं पर भी, किसी भी मौनावंश से मिला सकते हैं। अगर मौनालय में किसी मौनागृह से बकछूट निकल जावे, हम उसे पकड़ कर उसके पुराने घर के पास ही नये घर में

इतनी दूरी के अन्तर अगर हम किसी भी जाले या मीनागृह की किसी सफ़ेदी मीन को पकड़ कर वहाँ पर भी छोड़ आयें, तो वह अवश्य बिना धोखा खाये अपने घर लौट आवेगी। इसीलिए अगर हम किसी भी दो भिन्न भिन्न घर की मीनों को आपस में एक करना चाहें तो हमारे लिए आवश्यक हो जाता है कि हम उनके लिए ऐसी स्थिति पैदा कर देवें कि वह अपने पुराने स्थान को पूर्णरूप से भूल जायें।

यह काम उन मीनावशों में तो कोई कठिन नहीं होता जो आपस में २ या ३ से अधिक मीलों का अन्तर अपने बीच में रखते हैं। ऐसी स्थिति में हम उनमें से किसी एक को भी दूसरे के पास तक ले जाकर मिला सकते हैं। लेकिन जो मीनावश आपस में २ मील से कम दूरी रखते हों, उनके लिये यह क्रिया सम्भव नहीं। उनके लिये हमें निम्न प्रकार कार्य करना होगा।

अगर मीनावश कुछ ही गजों की दूरी बीच में रखते हों और करीब करीब एक ही तल पर अवस्थित हों तो उनमें से एक को या दोनों को रोजाना २ या ३ फीट तक खिसका कर एक दूसरे के बिल्कुल पास रख सकते हैं और फिर मिलाने की क्रिया द्वारा उन्हें मिला सकते हैं। क्योंकि मीनें इतनी दूरी तक के स्थान परिवर्तन को यथा शीघ्र पहचान लेती हैं।

अब सवाल होता है उन मीनावशों का जो आपस में लगभग २ मील का अन्तर भी नहीं रखते हों। तथा थोड़ा थोड़ा हटा कर भी नहीं लाये जा सकते हों। ऐसी स्थिति में हम मिलाने जाने वाले मीनावश को एक दो सप्ताह तक २ या २½ मील की दूरी वाले ऐसे नये स्थान में रख देना चाहिये जो उस मीनागृह के स्थान से भी २, २½ मील की दूरी रखता हो, जिसमें कि मीनें मिलाई जाने वाली हों। जब मीनें अपने पुराने निवासस्थान को भूल जायें तो उन्हें उस मीनागृह के पास उठा लावें, जिसमें कि हमने मीनों को मिलाना है।

बरछूटों के लिये यह नियम लागू नहीं होता। उसे हम कहीं पर भी, किसी भी मीनावश से मिला सकते हैं। अगर मीनालय में किसी मीनागृह से बरछूट निकल जावे, हम उसे पकड़ कर उसके पुराने घर के पास ही नये घर में

रख देवें या किसी दूसरे वश से मिला देवें तो उसकी मौनें काम करने लग जावेंगी।

२ पहिचान के बारे मे भुलावा देना—हम पहिले ही कह चुके हैं कि मौनें अपने व पराये घर की मौना को अच्छी तरह से पहिचानती हैं। माँ-मौन की पहिचान भी उनको बहुत होती है। वे नई मा-मौन को एकाएक स्वीकार नहीं कर लेती हैं, जैसा कि अन्यत्र विस्तारपूर्वक लिखा गया है। लेकिन नर मौन, बच्ची व कुमार मौना के लिये यह सिद्धान्त लागू नहीं होता। वे किसी भी घर मे बिना बाधा के जा सकती हैं। इसीलिये अगर हम दो भिन्न भिन्न मौनावशों को मिलाना चाहे तो हमारे लिये अति आवश्यक हो जाता है कि हम ऐसी स्थिति उपस्थित कर देवें कि वे अपने पराये की पहिचान न कर पावें। इसलिये एक बात ध्यान करने की होती है। वह यह होती है कि मौनें एक दूसरे को पहिचान सुगन्ध व व्यवहार से करती हैं। प्रत्येक वश की मौनों की सुगन्ध व व्यवहार भिन्न होता है। इसीलिये किसी भी क्रिया को अपनाने के लिए ध्यान रखना चाहिए कि उसमें ऐसी व्यवस्था हो कि उनकी सुगन्ध मिल सके और व्यवहार मे विरोध प्रकट न होने पावे। इसके लिये मौनपाल अनेकों विधिया प्रयोग म लाते हैं। धुवे से, सुगन्ध से, जाली से या कागज स इनको आपस मे मिलाने का काम किया जाता है। लेकिन नये मौनपाल को हमेशा—अन्तिम कागज की विधि से ही मिलाने का काम करना चाहिये। यह विधि कभी भी असफल नहा हो सकती है। अब हम यहा पर प्रत्येक विधि के बारे मे कुछ लिखेंगे।

१ धुवे की विधि—यह विधि अक्सर तब प्रयोग में लानी चाहिये जब कि दो मिलाये जाने वाले वशा म एक शक्तिशाली और दूसरा शक्तिहीन हो या कोई बक्छूट अपने पहिले के मौनावश से मिलाना हो। या एक ही घर से निकले हुए दो बक्छूटा को आपस में मिलाना हो।

इसके लिये सर्वप्रथम धुवाकर जला लेना चाहिये और जब वह बहुत धुवा देने लग जावे तब मिलाने का काम किया जाना चाहिये। अगर किसी बक्छूट को पुराने वश से मिलाना हो तो पहिले पुराने घर में खूब धुवा दे डालना

चाहिये फिर उसी सहेलियां हो गये बकूट को बाहर प्रवेश द्वार से या ऊपर सतहों से मिलाने की चेष्टा करनी चाहिये। प्रवेश द्वार से मिलाने की चेष्टा हमेशा सन्ध्याकाल हो चुकने पर ही करनी चाहिये जब कि मौना के भागने का डर नहीं रहता। जब नई मौनें पुराने वंश के साथ रख दी जावें तब इन मौनों को खोलते ही धुवां देना प्रारम्भ कर दिया जावे और तब तक रुक रुक कर देते जावें कि मौनें आपस में मिल जावें। इसमें मौनपाल को बीच बीच में देखने की आवश्यकता होती है कि मौनें लड़ तो नहीं रही हैं। अगर लड़ती हुई पाई जावें तो धुवां और अधिक किया जावे। इस प्रकार कुछ ही काल में मौनें मिल जावेंगी।

इस क्रिया से हानि होने की अवश्य सम्भावना रहती है लेकिन बकूटों में यह प्रयुक्त हो सकती है। बकूट तो अनेक बार देखा गया है, उड़ते उड़ते एक घर में भी घुस जाते हैं जहाँ पहिले से ही मौनें हो और अपने आप मिल जाते हैं।

इस क्रिया में दो बातें होती हैं। पहिला धुंवे की सुगन्ध से मौनों को अपनी सुगन्ध पहिचाननी कठिन हो जाती है। दूसरा उनको खतरे का अनुभव होने लग जाता है, उनका ध्यान लड़ने के स्थान पर शहद खाने आदि की ओर बट जाता है और प्रत्येक मौन के व्यवहार में खतरे की भावना से समानता आ जाती है।

(२) तीव्र गन्ध की विधि—बहुत मौनपाल धुंवे के स्थान पर ऐसे द्रव का प्रयोग करते हैं जो तीव्र गन्ध वाला हो। इसमें भी मौनों को अपनी गन्ध को जानना कठिन हो जाता है, व आपस में मिल जाती हैं। यह विधि भी उपर्युक्त हालतों में ही प्रयुक्त की जा सकती है, लेकिन प्रथम से यह अधिक खतरनाक है। चतुर मौन पाल ही इसे सफलता पूर्वक अपना सकता है। इसके लिए प्रथम एक वंश की मौनों को सुगन्धित कर देना चाहिए और इतना सुगन्धित कर देना चाहिए कि अन्य कोई भी सुगन्ध न आ सके, फिर प्रवेश द्वार या ऊपर से दूसरे वंश को छोड़ते हो सुगन्धित कर डाला जावे। इस प्रकार भी

मौनें मिल जावेंगी। अगर बीच में लड़ने आदि की सम्भावना दिखाई देवे तो धुंवे का भी प्रयोग कर लिया जावे। यह विधि भी बकछूटा को मिलाने में ही काम दे सकती है।

(३) जाली की विधि—इसके लिए एक पतली जाली की आवश्यकता रहती है। अगर जाली एक दो सूत के अन्तर से दोहरी बनी हो तो उत्तम होता है। इसके लिए पहिले एक मौनावंश को एक घर में रख दिया जावे फिर ऊपर से जाली वाला चौखट रख दिया जावे। और दूसरे मौनावंश को इसके ऊपर नया सहकक्ष लगा कर रख दिया जावे तार की जाली से मौनों की गन्ध आपस में मिल सकेगी और मौनें लड भी नहीं सकेंगी। इस समय ऊपर के सहकक्ष में एक दो शिशु पूर्ण छत्ते भी रख दिये जावें तो अच्छा होगा क्योंकि ऊपर की मौना को काम भी मिल जावेगा और जाली हटाते समय वे एक दम नीचे को बढ़ने की चेष्टा भी नहीं करेंगी। जब करीब २४ घंटे इस प्रकार हो जावें तो फिर जाली हटा दी जावे और मा मौन रोक पट उसके स्थान पर लगा दिया जावे। अगर लड़ने का डर हो तो मा मौन रोक पट के ऊपर एक खाली सहकक्ष रख कर फिर दूसरा मौनों वाला सहकक्ष रख दिया जावे। अब मौनें ऊपर नीचे आने जाने लगेंगी। इस प्रकार वे कुछ ही काल में मिल जावेंगी। लेकिन इनको समय समय पर देखते रहने की आवश्यकता रहती है कि कहीं लड़ने न लगें। अगर लड़ती हुई पाई जावें तो धुंवे का प्रयोग भी कर सकते हैं। यह विधि भी सीखने वालों के लिए भय की है। इसमें जाली को अगर रात्रि के समय हटाया जावे तो उत्तम रहता है।

(४) कागज की रीति—यह चौथी विधि है, लेकिन सबसे अति आवश्यक व कभी भी असफल नहीं होने वाली है। प्रत्येक मौन पाल इसे निर्भय होकर अपना सकता है। इसके लिए कोई विशेष सामग्री की आवश्यकता भी नहीं होती है। इसके लिए सर्व प्रथम मौन पाल को एक पतले व मुलायम कागज के एक ऐसे टुकड़े को ले लेना चाहिए जो आसानी से मौनों द्वारा काटा जा सके, जो फटा न हो तथा मौनागृह के घर की ऊपरी सतह को बिल्कुल ढक सके। इसके मध्य में सुई, आलपीन, पेंसिल की नोक या किसी

है। मौनपालन के कुछ प्राकृतिक नियमों का पालन ही इस सबको अपने आप सम्भव कर देता है।

विभाजन का समय

यों तो विभाजन किसी समय भी किया जा सकता है। लेकिन वह लाभ दायक सदा नहीं होता। मौनपाल को तो हमेशा ऐसे समय में ही विभाजन करना चाहिये, जब कि न तो विभाजन के असफल होने की ही शंका हो और न वह अनुपयोगी ही सिद्ध हो। बरसा ऋतु व शीतकाल के अतिरिक्त अन्य सभी मौसमों में चतुर-मौनपाल सफल विभाजन तो कर सकता है लेकिन वह लाभदायक हमेशा नहीं हो पाता। लाभदायक से हमारा अर्थ है—उससे आने वाले अमृतस्राव में मधु की प्राप्ति कर लेना। जैसा कि विभाजन में मौनावंश की शक्ति कम जाती है और शक्तिहीन वंश हमको अतिरिक्त मधु नहीं दे पाते हैं। इसलिये विभाजन हमेशा ऐसे अवसर पर ही किया जाना चाहिये जब कि उसको आने वाले अमृतस्राव तक शक्ति सम्पन्न बनने के लिये पूर्ण अवसर मिल सके। प्रधान अमृतस्रावों से ५, ७ सप्ताह पूर्व किये गये विभाजन, अगर उनकी उचित देख भाल हो तो आने वाले अमृतस्रावों से हमें मधु दे सकते हैं। हमारे देश में दो प्रधान अमृतस्राव होते हैं। पहिले को चैती अमृतस्राव व दूसरे को कार्तिकी अमृतस्राव कहते हैं। पहिले का समय मई जून व दूसरे का अक्तोबर होता है। स्थिति के अनुसार इनके समयों में कुछ आगे पीछे हो सकता है। मौनपाल को अपने स्थान के अमृतस्रावों का सही ज्ञान रखना चाहिये और उन्हीं के अनुसार इस क्रिया को करना चाहिये। मौनपाल फरवरी में, जून में व सितम्बर में विभाजन कर लेते हैं। लेकिन यह ठीक नहीं। एक वंश से वर्ष में केवल एक ही बार विभाजन करना चाहिये। तभी मौनावंशों की संख्या में वृद्धि के साथ ही साथ मधु की प्राप्ति से भी हमें वंचित नहीं रहना पड़ेगा। विभाजन का उपयुक्त काल मास फरवरी होता है। इस समय बसन्त का प्रारम्भ होता

इससे विभाजित वंश यथाशीघ्र शक्ति भी प्राप्त कर लेते हैं। इस काल पुराने ढंग से मौनें पालने वाले शिशुपूर्ण छत्तों को भी काट कर फेंक देते हैं। हम उन्हें लेकर विभाजित वंशों को दे सकते हैं और उन्हें यथाशीघ्र शक्तिशाली बनने में सहायता पहुंचा सकते हैं।

विभाजन करते समय सोचने की बातें

मौनों को समय, स्थान व अपने पराये की पूरी पहिचान होती है। इसीलिये मौनपाल को विभाजन करते समय हमेशा ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देनी चाहिये कि विभाजन करके बनाये गये वंश की मौनें अपने पुराने स्थान व पुराने साथियों की पहिचान न कर सकें। अन्यथा विभाजन अवश्य असफल हो जावेगा। हम विभाजन करके किसी वंश की मौनों को अलग अलग मौनागृहों में रख कर समझते हैं कि विभाजन हो चुका है। लेकिन कुछ ही घंटों बाद हमें देख कर आश्चर्य होता है कि मौनें फिर मिल कर एक ही में आगई हैं। इसलिये किसी भी वंश को विभाजन करते समय निम्न लिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

(१) विभाजन करने का समय ठीक है या नहीं। जिस काल मौनागृहों में शिशुपूर्ण छत्तों का अभाव हो उस काल कभी भी विभाजन नहीं किया जाना चाहिये।

(२) जिस वंश को विभाजित करना हो, वह हमेशा शक्तिशाली वंश ही होना चाहिये। कम से कम ७, ८ चौखटों में तो मौनें उसमें अवश्य ही रहनी चाहिये। अन्यथा सूद के लोभ में मूल भी गँवाया जा सकता है। वंश-वृद्धि की आशा में बने बनाये वंश से भी हाथ धोने पड़ सकते हैं।

(३) विभाजित करके बनाये गये नये वंश की मौनों को अपने पुराने-वंश के स्थान से अपरिचित रखने के लिये कौन सी विधि अपनाई जावेगी, इस पर विचार करना भी आवश्यक होता है।

(४) नये वंश में मा-मौन को पैदा करवाने के लिये कौन सी विधि अपनाई जावेगी, इस पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिये।

अन्य वस्तु से चाकू से ऐसे छिद्र बना लेवें जिनसे मौनें न निकल सकें और फिर चीनी या शहद के शरबत के कुछ छींटे इसके दोनों ओर दे देवें ताकि मिठास से मौनें इसको चाटने लगें। चाटते चाटते यह फट जावेगा और मौनें मिल जावेंगी। अब एक वंश की मौनों को निचले कक्ष में रखकर उसके ऊपर इस कागज को इस प्रकार बिछा कर रख देवें कि कहीं से भी मौनों का निकलने का मार्ग न रहे। इसके ऊपर से दूसरा कक्ष रख कर उसमें दूसरे वंश की मौनें रख देवें। फिर ढक्कन लगाकर उन्हें वैसे ही छोड़ दें। २४ घंटे के बाद अगर मौनपाल खोल कर देखेगा तो उसे पता चलेगा कि कागज फाड़ दिया गया है और मौनें मिल चुकी हैं।

कभी कभी इतने से कम काल में भी मौनें मिल जाती हैं। इसका पता मौनपाल प्रवेश द्वार पर दृष्टि रख कर कर सकता है। जब कागज का बारीक बुरादा मौनों द्वारा बाहर लाया जाने लगे तब अगर मौनागृह खोलकर देखा जावे तो मौनें मिली हुई दशा में काम करती हुई पाई जावेंगी।

एक विशेष ध्यान देने की बात—इस मिलाने की क्रिया में एक बात का ध्यान रखना आवश्यक होता है। मा मौन मौनावंश की प्राण होती है। उसका अच्छा होना, मौनावंश की समृद्धि के लिए आवश्यक होता है। इसीलिए अगर मौनपाल मिलाये जाने वाले दो वंशों में से किसी एक की मा मौन को श्रेष्ठ मानता है, तो उसकी रक्षा की व्यवस्था इस काल अवश्य की जानी चाहिए। क्योंकि अगर ऐसा न किया जावेगा तो मिलने पर वे आपस में लड़ जावेंगी और कोई भी एक दूसरे को मार देंगी। कौन कह सकता है अच्छी वाली मा मौन ही मार दी जावे। इसलिए इस हानि से बचने के लिए या तो मौनपाल को घटिया वाली मा-मौन को पहिले ही हटा देना चाहिए ताकि उनमें एक ही मा मौन रह जावे या अच्छी मा-मौन को मा-मौन पिंजड़े में, जो इसी प्रयोजनार्थ बने रहते हैं घर में तब तक कैद रखें जब तक की दूसरी मा-मौन न मिल जावे और हटा न दी जावे। इस प्रकार से यह दुर्घटना बच जावेगी।

है। मौनपालन के शुद्ध प्राकृतिक नियमों का पालन ही इन सबको अपने आप सम्भव कर देता है।

विभाजन का समय

या तो विभाजन किसी समय भी किया जा सकता है। लेकिन वह लाभदायक सदा नहीं होता। मौनपाल को तो हमेशा ऐसे समय में ही विभाजन करना चाहिये, जब कि न तो विभाजन के असफल होने की ही शंका हो और न वह अनुपयोगी ही सिद्ध हो। वर्षा ऋतु व शीतकाल के अतिरिक्त अन्य सभी मौसमों में चतुर-मौनपाल सफल विभाजन तो कर सकता है लेकिन वह लाभदायक हमेशा नहीं हो पाता। लाभदायक से हमारा अर्थ है—उससे आने वाले अमृतस्राव में मधु की प्राप्ति कर लेना। जैसा कि विभाजन में मौनावश की शक्ति बट जाती है और शक्तिहीन वंश हमको अतिरिक्त मधु नहीं दे पाते हैं। इसलिये विभाजन हमेशा ऐसे अवसर पर ही किया जाना चाहिये जब कि उसको आने वाले अमृतस्राव तक शक्ति सम्पन्न बनने के लिये पूर्ण अवसर मिल सके। प्रधान अमृतस्रावों से ५, ७ सप्ताह पूर्व किये गये विभाजन, अगर उनकी उचित देख भाल हो तो आने वाले अमृतस्रावों से हमें मधु दे सकते हैं। हमारे देश में दो प्रधान अमृतस्राव होते हैं। पहिले को चैती अमृतस्राव व दूसरे को कार्तिकी अमृतस्राव कहते हैं। पहिले का समय मई जून व दूसरे का अक्तूबर होता है। स्थिति के अनुसार इनके समयों में कुछ आगे-पीछे हो सकता है। मौनपाल को अपने स्थान के अमृतस्रावों का सही ज्ञान रखना चाहिये और उन्हीं के अनुसार इस क्रिया को करना चाहिये। मौनपाल फरवरी में, जून में व सितम्बर में विभाजन कर लेते हैं। लेकिन यह ठीक नहीं। एक वंश से वर्ष में केवल एक ही बार विभाजन करना चाहिये। तभी मौनावंशों की संख्या में वृद्धि के साथ ही साथ मधु की प्राप्ति से भी हमें वंचित नहीं रहना पड़ेगा। विभाजन का उपयुक्त काल माघ फागुन होता है। इस समय बसन्त का प्रारम्भ होता है। इस समय में मौनें प्राकृतिक रूप से भी वंश-वृद्धि की ओर प्रवृत्त रहती हैं। इस समय में मा-मौन के अंडे देने की गति भी तीव्र रहती है तथा बाहर से आने वाले अमृत व पराग की मात्रा में भी कमी नहीं होने पाती है।

इससे विभाजित वंश यथाशीघ्र शक्ति भी प्राप्त कर लेते हैं। इस काल पुराने ढंग से मौनें पालने वाले शिशुपूर्ण छत्तों को भी काट कर फेंक देते हैं। हम उन्हें लेकर विभाजित वंशों को दे सकते हैं और उन्हें यथाशीघ्र शक्तिशाली बनने में सहायता पहुंचा सकते हैं।

विभाजन करते समय सोचने की बातें

मौनों को समय, स्थान व अपने पराये की पूरी पहिचान होती है। इसीलिये मौनपाल को विभाजन करते समय हमेशा ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देनी चाहिये कि विभाजन करके बनाये गये वंश की मौनें अपने पुराने स्थान व पुराने साथियों की पहिचान न कर सकें। अन्यथा विभाजन अवश्य असफल हो जावेगा। हम विभाजन करके किसी वंश की मौनों को अलग अलग मौनगृहों में रख कर समझते हैं कि विभाजन हो चुका है। लेकिन कुछ ही घटों बाद हमें देख कर आश्चर्य होता है कि मौनें फिर मिल कर एक ही में आगई हैं। इसलिये किसी भी वंश को विभाजन करते समय निम्न लिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिये।

(१) विभाजन करने का समय ठीक है या नहीं। जिस काल मौनगृहों में शिशुपूर्ण छत्तों का अभाव हो उस काल कभी भी विभाजन नहीं किया जाना चाहिये।

(२) जिस वंश को विभाजित करना हो, वह हमेशा शक्तिशाली वंश ही होना चाहिये। कम से कम ७, ८ चौखटों में तो मौनें उसमें अवश्य ही रहनी चाहिये। अन्यथा सूद के लोभ में मूल भी गँवाया जा सकता है। वंश-वृद्धि की आशा में बने बनाये वंश से भी हाथ धोने पड सकते हैं।

(३) विभाजित करके बनाये गये नये वंश की मौनो को अपने पुराने वंश के स्थान से अपरिचित रखने के लिये कौन सी विधि अपनाई जावेगी, इस पर विचार करना भी आवश्यक होता है।

(४) नये वंश में मा-मौन को पैदा करवाने के लिये कौन सी विधि अपनाई जावेगी, इस पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिये।

विभाजन करने की विधियां

मौनवंश का विभाजन करने के लिये जो भी विधियां प्रयुक्त की जा सकती हैं, उन्हें हम दो भागों में बांट सकते हैं। पहिले भाग में व विधियाँ आती हैं जो उस मौनवंश को विभाजन करने के लिये अपनाई जा सकती हैं, जो अपने मौनालय में ही हो और जिसका विभाजन करके हमने उसी मौनालय के भीतर रखना हो और दूसरे भाग में वे सब विधियां आ जाती हैं जिन्हें हम बाहर से लाये गये मौनवंश के विभाजन में काम में लाते हैं।

मौनालय स्थित मौनवंश का विभाजन

पहली रीति—यह बहुत ही साधारण विधि है। अगर मौनवंश शक्तिशाली हो तो हम इसका प्रयोग कर सकते हैं। इसके लिये सर्व प्रथम बांटा जाने वाला मौनागृह उठा कर उसी मौनालय के भीतर अधिक से अधिक दूरी पर अपनी सहूलियत के अनुसार नई चौकी पर रख लेना चाहिये। उसके स्थान पर बुनियादी छत्तों से व कम से कम दो शिशुपूर्ण व एक मधु-पूर्ण छत्तों से भरा हुआ नया मौनागृह रख दिया जाना चाहिये। अब मौनों का विभाजन होने लगेगा। पुराने मौनागृह से सयानी युवा मौनें निकल निकल कर अपने पुराने स्थान म आकर, वहां पर रखे गये नये मौनागृह में घुसती जावेंगी। कुछ काल ठहर कर दोनों मौनागृहों को खोल कर अगर देखय तो दोनों में मौनें विद्यमान मिलेंगी। अन्तर इतना ही होवेगा कि नये बनाये गये मौनागृह में सयानी युवा मौनों का समूह बिना मा-मौन के होगा और पुराने मौनागृह में, जिसे हमने नई चौकी पर रख दिया था, नई कुमार मौनें मय मा-मौन के होगी। इस समय ध्यान रखना चाहिये कि पुराने मौनागृह में शिशुपूर्ण छत्ते इतने अधिक तो नहीं रह गये हैं कि मौनें उनकी देख ही नहीं पा रही हैं। इस मौनागृह से अतिरिक्त शिशुपूर्ण चौखटें निकाल कर नये बनाये गये मौनागृह में रख देने चाहिये। अन्यथा शिशुओं के नष्ट होने की सम्भावना रह सकती है। अब अगर हो सके तो मा मौन हीन मौनवंश में कहीं से नई मा मौन लाकर यथाविधि प्रवेश करा दी जावे। अगर ऐसा सम्भव न हो सके तो उसे

मां मौन बनाने के लिये उचित अवस्था के अण्डे बच्चे पूर्ण चौखट अवश्य दे दिया जावे। इसमें देर करने से हानि हो सकती है। इसके बाद उसका तब तक लगातार निरीक्षण करते रहना चाहिये, जब तक कि उसमें नई मां मौन जन्म लेकर, गर्भित होकर, विधि पूर्वक कर्मठ के अण्डे देना प्रारम्भ न कर देवे।

इस प्रकार विभाजन करने के बाद दोनों वंशों को लगातार शरबत देना चाहिये। उनकी गतिविधियों को बराबर देखकर, आवश्यकतानुसार कार्य करते रहने चाहिये। इस भांति करने से कुछ ही काल में दोनों वंश अपनी शक्ति प्राप्त कर लेंगे और सुचारु रूप से काम करने लगेंगे। अब हम हटाये गये पुराने मौनावंश को दो तीन फीट प्रति दिन खिसका कर, अपने मनोवांछित स्थान पर ला सकते हैं।

दूसरी रीति – अगर मौनालय में मौनागृह को उठा कर दूर पर रखने की सहूलियत न हो तो हम इस विधि को अपना सकते हैं। इसके लिये सर्व प्रथम एक नया मौनागृह, जिसके कुछ चौखटों पर बुनियादी छत्ते लगे हों, तैयार कर लिया जाना चाहिये। इस मौनागृह को उठाकर विभाजित किये जाने वाले मौनागृह के ठीक एक बगल में सट कर इस प्रकार रख दिया जाना चाहिये कि पुराने मौनागृह की ऊँचाई व इसकी ऊँचाई में कोई भी अन्तर न हो। फिर दोनों मौनागृहों के ढकन हटा कर अलग रख दिये जाने चाहियें। अब विभाजित किये जाने वाले मौनागृह में जितने भी चौखट हों, उनके आधे चौखट मय मौनों के एक एक करके निकाल कर बगल में रखे गये नये मौनागृह में रख दिये जाने चाहियें। दोनों मौनागृहों के रिक्त स्थान को छत्ताधार-पूर्ण चौखट डाल कर भर दिया जाना उपयुक्त रहता है। इस काल अगर मां मौन भी देखी जा सके तो उत्तम होता है। वह कौन से मौनागृह में चली गई है, इसका पता लग जाने पर, दूसरे मां मौन हीन विभाजन में मां मौन बनाने जाने के लिय उचित अवस्था के अन्डे बच्चे पूर्ण चौखट इसी विभाजन करते समय रख दिया जा सकता है, अन्यथा यह काम बाद को भी हो सकता है। जब चौखटों को दो मौनागृहों में बांटने का काम होचुके, तब पुराने मौनागृह को नये मौनागृह के समानान्तर इतना हटा कर रख दिया जाना चाहिये कि पुराने

स्थान पर कोई भी मौनागृह न रह जावे। यानी दोनों मौनागृहों के बीच केवल वही अन्तर रहे जो कि पुराने मौनागृह का स्थान था। अब दोनों को बन्द कर दिया जाना चाहिये। इस प्रकार मौनावंश का विभाजन हो जावेगा। इस विधि से बहुत ही उत्तम विभाजन होता है। शिशु व कुमार मौनों का विभाजन तो इसमें पहिले ही हो जाता है लेकिन कमेरी युवा मौनें भी बाहर की दो भागों में विभाजित हो जाती हैं। वे बाहर से लौट कर आती हैं और पुराने स्थान को खाली पाकर कुछ दाहिनी ओर के और कुछ बाईं ओर के मौनागृह में घुस जाती हैं। इस क्रिया में मौनागृह पास पास ही होने से अक्सर बार माँ-मौन हीन वाले विभाजन की मौनें परेशान होकर सब दूसरे ही में भी इकट्ठी हो जाती हैं। इसे रोकने के लिये दोनों विभाजनों में शिशुपूर्ण चौखटों का होना आवश्यक होता है। अगर उनमें प्रथमावस्था की मां-मौन कोटियां भी बनी हों, तो और भी अच्छा रहता है। इससे मा-मौन हीन हो जाने पर भी मौनें यथाशीघ्र अपने ही घर में नई मा-मौन बनाने के लिये प्रयत्नशील हो उठती हैं।

अगर विभाजन करते समय माँ मौन को नहीं देखा जा सका हो, तो ज्योंही मौनें अपने अपने मौनागृहों में शान्तिपूर्वक काम करने लग जावें, यह काम कर लेना चाहिये। इसमें देर करना ठीक नहीं होता है। जिस विभाजन में मा मौन न हो उसमें या तो अन्यत्र से मा मौन लाकर यथाविधि प्रविष्ट करा दी जानी चाहिये या उन्हें नई मा मौन बनाने के लिये उचित अवस्था के अण्डे पूर्ण चौखट या अन्यत्र से मा मौन कोटी लाकर दे देनी चाहिए। इसके बाद भी जब तक दोनों का काम सुचारु रूप से न चलने लग जावे, उनका समय समय पर निरीक्षण करके, उनकी आवश्यकताओं को पूर्ण करते रहना चाहिये। किसी भी असहूलियत या कठिनाइ का यथासमय उपचार न होना मौनावंश के अस्तित्व को ही चुनौती दे सकता है। जब विभाजन सफल हो जावे, तब दोनों मौनागृहों को एक दो फीट तक प्रतिदिन हटा कर अपने मनोवांछित स्थान पर ले जाया जा सकता है।

इस विधि में ध्यान रखना चाहिये कि दोनों मौनागृह एक ही किस्म व

श्री यन० एम० घोष (दक्षिण भारत) का मौनालय

मरगोमौन्ट मौनालय ज्योलीकोट के मौनागृह तराई भावर में लाई, सरसों के खेतों के बीच
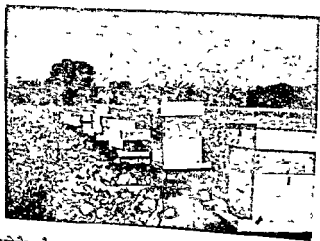
रख के दें। उनको अगर ऊंचाई पर रखा जावे। क्योंकि मौनों को अपने मौनागृह की पूर्ण पहिचान होती है। कुछ दिनों तक अगर दोनों के द्वार-पट भी हटा दिये जावें, तो अच्छा रहता है। इससे प्रवेशमार्ग के दाये बाये होने की भी पहिचान उन्हें नहीं होने पावेगी। लेकिन इसमें लूट व लड़ाई का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है। मौनावशों के शक्तिहीन हो जाने से, प्रवेश मार्ग के चौड़े हो जाने से बाहर की मौनें इनको अपनी लूट का भी निशाना बना सकती हैं।

तीसरी रीति—यह विधि प्रथम रीति से थोड़ी ही भिन्न है। इस रीति में किसी दिन प्रात काल मौनपाल को विभाजित किये जाने वाले मौनावश को खोलकर इस प्रकार विभाजन कर लेना चाहिये कि लगभग $\frac{3}{4}$ मौनें व सब बन्द शिशुपूर्ण चौखटे मय मा मौन के नये मौनागृह में रख दिये जावें और पुराने मौनागृह में $\frac{1}{4}$ भाग मौनों का तथा सब बिना बन्द किये हुए अन्डे बच्चे पूर्ण चौखटे रह जावें। अब नया बनाया गया मौनागृह इस स्थान से दूर चौकी पर रख दिया जावे। इस प्रकार उसकी कुछ युवा संग्रही मौनें अपने पुराने मौना गृह में लौट तो अवश्य ही आवेंगी, लेकिन सब नहीं लौटेंगी। कुछ मौनें मा-मौन के साथ रह जावेंगी। बन्द शिशुपूर्ण चौखटें उसमें होने से वश की सेवा के लिये नई मौनें भी यथासमय उसमें पैदा हो जावेंगी।

पुराने मौनागृह में अगर सम्भव हो सके तो नई मा मौन अन्यत्र से लाकर प्रविष्ट करा दी जावे या उचित अवस्था के अन्डे-बच्चे पूर्ण चौखट देने का ध्यान रखा जावे और तब तक निरीक्षण में लापरवाही न की जावे जब तक कि उसमें नई मा-मौन जन्म कर अन्डे देने का काम न करने लग जावे।

चौथी रीति—यह विधि कुछ जटिल सी है। इसमें अधिक सावधानी व होशियारी की भी आवश्यकता होती है। इसलिये दक्ष मौनपाल को ही इसे प्रयोग में लाना चाहिये। इससे हम एक ही मौनावश को शक्तिअनुसार कई भागों में भी बाट सकते हैं। सर्व प्रथम मौनावश को बहुत शक्तिशाली बनने देना चाहिये। जब मौनावश मौनों से भर जावे, तब उसे विभाजित करने का प्रयत्न करना उपयुक्त रहता है। विभाजन करने के लिये पहिले उसकी माँ मौन को हटा कर उसे मा मौन हीन कर दिया जाना चाहिये। यह मा मौन या तो किसी

मा मौन अभी प्राप्त हो, तो इस काल हम उसे इसमें फिर प्रवेश भी करा सकते हैं।

इसके बाद कम से कम ४ दिन तक मौनागृहों को नहीं खोलना चाहिये। इतने समय में भीतर अनेक बच्चे मौना के साथ साथ नई मा मौनें भी प्रत्येक विभाजन में जन्म ले चुकी होंगी। इस काल प्रथम तो प्रत्येक वश की युवा-मक्खी मौनें घास को काट कर बाहर निकलने का मार्ग स्वयं ही बना चुकी होंगी। अन्यथा हम उसे अब हटा कर मौनों को मार्ग दे सकते हैं। भीतर नई माँ मौन के होने से कुछ संग्रही मौनें तो अवश्य उनमें ही ठहर जायेंगी। अगर कुछ लौट कर अपने पुराने ही मौनागृह में आ भी जायें, तो भी कोई विशेष हानि नहीं होने पाती है। क्योंकि प्रत्येक विभाजन में मा मौन की परवरिश के लिये इस काल अनेक शिशु मौनें पैदा हो जाती हैं। इस प्रकार ये विभाजन, मा-मौन पूर्ण बन जाते हैं। इन्हें शक्तिशाली बनाने का काम मौनपाल का होता है, क्योंकि ये अत्यन्त क्षीणहीन होते हैं। इनको बराबर शरबत आदि देते जाना चाहिये। अत्यन्त शक्तिहीन विभाजन को अन्यत्र से मौना-रहित शिशुपूर्ण चौखट देकर भी शक्तिशाली बनाया जा सकता है।

इस विधि को हमेशा बसन्त ऋतु के फरवरी, मार्च मास में, जब कि मौसम गरम हो, अपनाना ठीक रहता है, अन्यथा ठंड से भी विभाजन असफल हो सकते हैं।

हो जायेंगी, तब उनके विभाजन में यह विधि काम नहीं दे सकेगी। उनके लिये हमें ऊपर वर्णित विधियों में से किसी एक को ही काम में लाना पड़ेगा।

इसके लिये मौनावश को बाहर से मौनालय में लाते ही, उसकी शक्ति अनुसार विभाजन बना लेने चाहिये। प्रत्येक विभाजन में कम से कम दो शिशुपूर्ण चौखट मय मौनों के रख दिये जाने चाहिये। अगर मधु-पूर्ण चौखट उपलब्ध हो सकें तो प्रत्येक में एक-एक मधु-पूर्ण चौखट भी रखना की व्यवस्था करनी चाहिये, अन्यथा शरबत ही लगातार देना ठीक रहता है। इन विभाजनों में एक तो मा-मौन-पूर्ण होगा ही, अन्यों में मा-मौन देने की व्यवस्था करनी होती है। अगर मा मौन या मा-मौन-कोठिया उपलब्ध हो सकें, तो उन्हें यथा विधि प्रवेश करा देना चाहिये। नहीं तो नई माँ-मौन बनाये जाने के लिये उचित अवस्था के अण्डे बच्चे पूर्ण चौखट प्रत्येक मा-मौन हीन विभाजन में रखना नहीं भूलना चाहिये। इतना सब हो चुकने पर प्रत्येक विभाजित मौनागृह को ढक्कन लगा कर उसे अपने मनोवाञ्छित स्थान में नई चौकी पर रख दिया जावे। मौनें अपने नये स्थान को पहिचानने लगेंगी और वहीं पर काम करने लगेंगी। कुछ ही काल में उनमें नई मा-मौनें जन्म ले लेंगी, और सब विभाजन सफल हो जायेंगे। इन्हें फिर शक्तिशाली बनाना मौनपाल के प्रबन्ध पर निर्भर करता है।

अगर मौनपाल के दो तीन मौनालय कम से कम दो तीन मील की दूरी पर भिन्न भिन्न स्थानों पर हों, तो वह एक मौनालय के मौनावश को दूसरे मौनालय में ले जाकर इस प्रकार सरलतापूर्वक विभाजन कर सकता है, क्योंकि इस प्रकार विभाजन करने में, जितनी मौनें जिस विभाजन में रख दी जाती हैं, वे सब वहां ठहर जाती हैं। उनके लिये वह स्थान नया होता है। इसलिये पुराने घर में लौट आने की समस्या पैदा ही नहीं होने पाती है। इस प्रकार प्रत्येक विभाजन में शक्ति-संतुलन हो जाता है।

अगर अलग अलग मौनालय न भी हों, तब भी मौनपाल दो तीन मील पर रहने वाले अपने किसी मित्र या परिचित व्यक्ति के स्थान पर ले जाकर भी

इस काम को कर सकता है। जब विभाजन अपना काम सुचारु-रूप से करने लग जावें, तब उन्हें पुनः मौनालय में वापिस लाया जा सकता है। इसके लिये सारा मौनावश नये स्थान में ले जाकर भी विभाजन कर सकते हैं और पुराने वंश को उसके स्थान में ही छोड़ कर, उससे वहीं पर बनाये गये नये विभाजनों को ही उठाकर भी हम इस काम को कर सकते हैं।

विभाजन करने के बाद ध्यान देने की बातें

विभाजन करना बड़ा सरल होता है। उसमें सफलता प्राप्त कर लेना वास्तव में बड़ी चतुरता का ही काम होता है। विभाजन के बाद थोड़ी सी असावधानी भी मौनावश को नष्ट कर सकती है। प्रत्येक विभाजन में जब तक नई माँ-मौनें जन्म लेकर कर्मठ के अन्डे देना प्रारम्भ न कर दें, तब तक उनका निरीक्षण बराबर करते रहना चाहिये। समय समय पर आवश्यकतानुसार काम करते जाना चाहिये। इसके बाद भी जब तक वे शक्तिशाली न बन जावें, उनका बड़ा डर रहता है। विभाजन बड़े शक्तिहीन होते हैं। शक्तिहीन वंश ही लूट, लड़ाई, शत्रु व बिमारियों के शिकार होते हैं। इसलिये मौनपाल को भरसक प्रयत्न उन्हें यथाशीघ्र शक्तिशाली बनाने के लिये करते ठीक रहते हैं।

आवश्यक सामान

मौनावंशों को बदलने में भिन्न भिन्न प्रकार के वंशों के लिये भिन्न भिन्न प्रकार के सामान की आवश्यकता होती है। जैसे स्थान से मौनों को बदला जावे उसी प्रकार का सामान रखना पड़ता है। अधिकांश जिस सामान की आवश्यकता होती है उसकी सूची निम्नप्रकार है।

१ मौनागृह या वाहक पिंजरा—मौनावंश को बदल कर रखने के लिये यह आवश्यक होता है।

२. धुआंकर—धुआं देने के लिये इसे अवश्य रखना पड़ता है।

३ जाली—इसको चेहरे पर लगाये बिना कार्य करना मूर्खता है।

४ चाकू—छत्तों को काटने के लिये यह आवश्यक है परन्तु यह लम्बा होना चाहिये।

५ डोरी या तागा—कटे छत्तों को चौखटा पर बांधने के लिये इसकी आवश्यकता रहती है। केले के रेशा से भी यह काम चल सकता है।

६ चौड़ा पात्र (बर्तन)—इसमें कटे हुए छत्ते समय समय पर रखने पड़ते हैं और इसमें से चौखटा पर बांधना सरल होता है।

७ पानी—बदलने की क्रिया करते समय हाथों में मधु लग जाना अवश्यम्भावी होता है। मधु लगे हाथों पर मौनें चिपक जाती हैं और काट देती हैं। इस कारण समय समय पर हाथों को धोने के लिये यह आवश्यक है।

८ दो तौलिये—एक हाथ पोंछने के लिये तथा दूसरा मौनागृह को आवश्यकतानुसार ढकने के लिये रखना उपयुक्त होता है।

९ कूची या छुरा—मौनों को छत्तों से छुड़ाने के लिये इसे काम में लाया जाता है।

१० रस्सी—घर लाते समय मौनागृह को बांधने के लिये यह अति आवश्यक है।

यदि पेड़ या चट्टान की मौनों को बदलना हो तो निम्नलिखित सामान की और आवश्यकता पड़ती है।

१. निर्वासक यंत्र—यदि मौनों को इससे बदलना हो, तब इसकी आवश्यकता रहती है।

२. आरी, कुल्हाड़ी और खोदने का सामान—प्रवेश द्वार को चौड़ा करने के लिये इनकी आवश्यकता पड़ती है।

३. सीढ़ी—मौनों के पास तक पहुंचने के लिये इसकी बड़ी आवश्यकता होती है।

इस सब सामान के अतिरिक्त एक सहायक (मनुष्य) का साथ में होना भी अति आवश्यक होता है।

कौन कौन सी मौनों को बदलना आवश्यक है

हमारे देश में वैज्ञानिक-मौनपालन अभी प्रारम्भिक अवस्था में ही है। इस कारण असंख्य मौनावंश अभी तक जंगलों में पेड़, चट्टान आदि में पड़े हैं या पुराने ढंग के आलो, जालों या सन्दूकों में बसाये गये हैं। इन सबको ही आधुनिक मौनागृहों में बदलना अति आवश्यक है। इस कारण निम्न प्रकार की मौनों को बदलने के विषय में जानना इस समय उपयोगी होगा।

१ दीवाली-जालों की मौनें।
२—सन्दूक, पेड़ के तने या पेटी आदि की मौनें।
३—पेड़ों पर की मौनें।
४—चट्टान या दीवारों की मौनें।

दीवाली-जालों की मौनों को बदलना

हमारे देश में लोग मकान बनवाते समय दीवालों में छोटे छोटे आले बनवा देते हैं, जो भीतर से पटले द्वारा ढक दिये जाते हैं तथा इनके बाहर मौनों के आने या जाने के लिये एक गोल छेद बना दिया जाता है। यह ढंग कोई लाभदायक नहीं है। अतएव इनमें पली हुई मौनों को आधुनिक मौनागृहों में बदल देना अति आवश्यक है। इनको निम्नलिखित विधियों द्वारा बदला जा सकता है :

चतुर मौनपाल वर्षा व ठंड के समय के अतिरिक्त किसी दिन भी जब कि सुन्दर धूप हो इस क्रिया को कर सकता है।

बदलते समय ध्यान देने योग्य बातें

प्रत्येक मौनपाल को मौनावश बदलने से पूर्व व बदलते समय निम्न लिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये:—

(१) कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व कोट उतार लेवें। पाजामा या पैन्ट जो भी हो उसे मोजों के भीतर भली भांति बन्द कर लेवें या डोर से बाध लेवें और कमीज के बटन लगा लेवें तथा आस्तीन भी इस प्रकार बाध लेवे कि कोई मौन कहीं से भी अन्दर न घुस सके। अन्यथा उसका बाहर निकलना कठिन हो जाता है और वह बिना डंक मारे नहीं छूटती। इसके अतिरिक्त मुह पर जाली भी अवश्य पहन लेनी चाहिये।

(२) धुवाकर जलाकर पहिले ही रख लेवें ताकि समय समय पर आवश्यकता-नुसार उसका प्रयोग किया जा सके।

(३) प्रत्येक काम सावधानी से किया जावे। थोड़ी सी असावधानी व शीघ्रता बड़े अनर्थ का भी कारण हो सकती है। छत्ता टूट कर गिर सकता है। जिससे मौनें या मा मौन भी मर सकती है। मौनें क्रुद्ध होकर उग्र रूप से डंक मारने की ओर प्रवृत्त हो जाती है।

(४) यदि मधु-पूर्ण छत्ते उसमें विद्यमान हों तो उन्हें काटते समय इस बात का ध्यान रहे कि मधु नीचे न गिरने पावे। अन्यथा मौनें उसमें सन जावेंगी। जिससे काम कठिन हो जावेगा।

(५) डाला या पेड़ का मोहरा खोलने या चौड़ा करने में न तो अधिक बल का ही प्रयोग किया जावे और न चोट ही इतनी जोर से मारी जावे कि छत्ते नीचे गिर पड़ें या मौनों को घबडाहट हो जावे।

(६) क्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व सब आवश्यक सामान अपने पास रख लिया जावे।

भीतर से पटला हटा कर बदराना—इस प्रकार से तैयार हो जाने पर मौनपाल सर्वप्रथम आरो के भीतरी ढक्कने को बड़ी सावधानी से छिनी सर, हथौड़ी आदि से इस प्रकार खोलें कि धुवाकर का मुह उसके अन्दर डालकर धुवा दिया जा सके। धुवा देने पर मौनें पटले को छोड़ देंगी। फिर पटले को धीरे धीरे अलग निकाल लिया जावे, परन्तु ध्यान रहे कि कहीं छत्ते पटले पर न चिपके हों और पटले को एक दम छुडाने में टूट न पड़ें। पटले का निकाल लेने के पश्चात उस पर लगी मौनों को धुवे आदि से भगा दें। (चित्र ६१)

चित्र—६१ दीवाला आला खोलना

पटला हटा देने पर देखें कि छत्ते किस प्रकार लगे हैं। (चित्र ६२) जिस ओर का छत्ता सबसे ऊपर लगा हो और सरलतापूर्वक निकाला जा सकता हो उसी ओर से कार्यारम्भ करें। परन्तु ध्यान रहे कि जाले के तले में जो धूल मिट्टी आदि इकट्ठा रहती है उसे भली प्रकार झाड कर साफ कर दिया जावे। क्योंकि छत्ता काटने से उस पर मधु का गिरना अवश्यम्भावी है। इसलिये मौनों का इसमें लथपथ होकर चिपकने से बचाने के लिये इस धूल आदि को सर्व प्रथम ही साफ कर देना अनिवार्य है।

अब सबसे ऊपर के छत्ते को धुवाकर से धुवा देकर मौनों को हटाने की चेष्टा करें। धुवे से मौनें उस छत्ते को छोड़कर अन्य छत्ता की ओर खिसक जायेंगी। मौनों का अधिकांश भाग उसमें से हट जाने पर उसे सावधानी से एक हाथ से नीचे पकड़ कर दूसरे हाथ से उसको चाकू से जड़ से काट डालें। परन्तु छत्ता गिरने न पावे और न मौनें ही दबने पावें। कदाचित कोई मौन काट देवे तो घबराकर हाथ बाहर निकालने की चेष्टा न करें। अन्यथा काम

और भी कठिन हो जावेगा। यदि छत्ता बड़ा हो तो उसे दो भागों में निकाला जा सकता है।

नीचे के शिशुपूर्ण भाग को पहिले काट लेना चाहिये फिर ऊपर का मधुपूर्ण भाग काटा जाना चाहिये। इस प्रकार छत्ते के टूटने का भय भी नहीं रहेगा और न मौनें ही मधु में लथपथ होने पावेंगी। मौनें मधु को सदा छत्ते के ऊपरी भाग में ही जमा करती हैं और शिशु नीचे के भाग में होते है। (चित्र ६४) तत्पश्चात छत्ते को धीरे से बाहर निकाल कर उसमें रही शेष मौना को ब्रश या कूची से झाड देना चाहिये। परन्तु ध्यान रहे कि मौनें खाले के भीतर ही झाड़ी जावें न कि बाहर। (चित्र ६५) फिर उस छत्ते को चौड़े बरतन में रखकर तागे से चौखट पर बाँध दिया जावे। चौखट में तार लगा होना अति उत्तम होता है। चौखट में छत्ता बाध देने पर उसे धीरे से मौनागृह में रख दें और फिर मौनागृह को कपड़े आदि से ढक दें। नया मौनपाल बिना तार लगे चौखटों में यह काम सरलतापूर्वक कर सकता है।

चित्र ६४—खालों के भीतर छत्तों का क्रम

चित्र ६३—खालों के भीतर बच्चों का क्रम

छत्ते को बाँधने के पूर्व ठीक चौखट की नाप का काट लेना चाहिए। छत्ते

के ऊपर वाली चौखट को पकड़ा रखकर यह काम सरल हो जाता है। फिर छत्ते व चौखट को उसी अवस्था में रखकर छत्ते को प्रत्येक तार के नीचे चाकू से पूरी लम्बाई में आधी गहराई तक काट दिया जावे। अन्यथा छत्ता चौखट में सही दशा में नहीं बैठेगा। इसके बाद छत्ते को चौखट सहित इस प्रकार उलटें कि वह चौखट के भीतर ठीक ठीक बैठ जावे। सब तार छत्ते में पूर्णरूप से दब जावें। तात्पर्य यह है कि छत्ता चौखट पर ठीक उसी भांति बैठ जावे जैसा कि वह प्राकृतिक अवस्था में होता है। फिर उसे तागे से तीन चार स्थानों पर बांध कर मौनागृह में रख दिया जावे। इस समय यह आवश्यक होता है कि छत्ता बांधने के बाद चौखट पर दृढ़ता पूर्वक अटक जावे। चाकू से छत्ते को काटने में यदि शिशु अवस्था की कुछ मौनें मर भी जावें तो मौनपाल को इस पर कुछ ध्यान नहीं देना चाहिये। क्योंकि मौनें बांधे गये छत्ते की स्वच्छता स्वयं कर लेंगी, उसे चौखट पर दृढ़ता पूर्वक जोड़ लेंगी तथा तागे को स्वयं ही काट कर फेंक देंगी।

चित्र ६४—मधु व शिशुओं का छत्ते में स्थान
A मधु, B शिशु

चित्र ६५—छत्ते से मौनों को भाड़ना

इसी प्रकार सभी छत्तों को चौखटों में बाँधकर मौनागृह में रख दिया

जावे। जाले के भीतर सिवाय मौनों के कोई भी छत्ता बचा न रहने पावे और ध्यान इस बात का रहे कि छत्ते काटते समय मधु इधर उधर न बिखरे। यदि मधु हाथ में लग जावे तो समय समय पर हाथ धोकर व पोंछ कर पुनः कार्यारम्भ किया जावे।

अब मौनें जाले के भीतर मण्डलाकार समूह में एकत्रित हो जायेंगी। उन्हें बदलने के लिए मौनागृह को जाल के समीप रख लिया जावे। उसके आधी के कन्ले गये कि छत्ता पूर्ण चौखटों की दो भागों में बाँट कर बीच में स्थान कर लेवें और उसे कपड़े, तौलिया आदि से भली प्रकार ढाक दिया जावे। उसका प्रवेश द्वार भी बन्द कर दिया जावे।

अब हाथ से सावधानी-पूर्वक उस मण्डलाकार समूह में थोड़ी थोड़ी मौनें लेकर, कपड़े को एक कोने से हटा कर, मौनागृह में छत्ता के मध्य किये गये स्थान पर उन्हें इस प्रकार झटके से झाड़ा जावे कि न तो हाथ पर अधिक मौनें ही रहें और न उनको चोट ही आने पावे। यदि अधिक मौनें हों तो पहिले सरलता से हाथ को उलट कर उनको गिरा दिया जावे और फिर बाकी मौनों को जो हाथ में चिपटी रह जायें हलका झटका देकर छुड़ा दिया जावे। फिर हाथ बाहर निकाल कर मौनागृह को पुनः कपड़े से ढक दिया जावे ताकि कोई भी मौन बाहर न निकल सके। इस प्रकार चार पाँच बार करने से लगभग सभी मौनें मौनागृह में आ जायेंगी। इतना करने पर मौनागृह को उसके ऊपर का कपड़ा थोड़ा हटा कर देखा जावे। यदि उसमें मा-मौन आ चुकी होगी तो वे शान्त होंगी और बाहर को न निकलेंगी। परन्तु मा-मौन के न होने पर वे एक प्रकार की अद्भुत ध्वनि करती हुई एक दम बाहर निकलने का प्रयास करने लगेंगी। ऐसे समय में मौनागृह को पुनः ढक कर जाले के भीतर मा-मौन की ढूंढ करनी चाहिये। सम्भव हो सकता है कि जाले के भीतर वह किसी छेद में घुस जावे। परन्तु जैसा कि वह कभी अकेले नहीं रहती है, मौनों के आने जाने से उसका पता लगाया जा सकता है। धुआं देकर वह उस स्थान से बाहर निकाली जा सकती है।

जब मा-मौन भी मौनागृह में आ जावे तो समझ लिया जाय कि मौनावश

बदला जा चुका है। उसके चौखटों को मिला दिया जावे और अन्त में भीतरी पटला लगा दिया जावे। अब मौनागृह को उठा कर बाहर से जाले के प्रवेश द्वार के पास किसी वस्तु के सहारे सामने को मुंह करके रख दिया जावे ताकि मौनें बाहर-भीतर आ-जा सकें। तत्पश्चात जाले के भीतर धुंआ देकर मौनों को भगा दिया जावे और उसका प्रवेश द्वार भी बंद कर दिया जावे ताकि कोई भी मौन उसके अन्दर न जा सके। जाले के भीतर धुआं देकर वहां मौनों को बैठने से रोका जावे।

इस प्रकार पुराने जाले का द्वार बंद हो जाने से मौनें थोड़ी देर में ही नये गृह का पता लगा कर उसमें आने जाने लगेंगी। जब ऐसा होने लगे तो तौलिये को हटा कर मौनागृह पर छत लगा देनी चाहिये। उसे सध्या काल तक उसी अवस्था में रहने दिया जावे। सध्या को जब विश्वास हो जावे कि सभी मौनें लौट आ चुकी हैं और बाहर बाकी नहीं रह गई हैं, तब मौनागृह का प्रवेश द्वार बद करके घर लाकर कहीं भी रखा जा सकता है। यदि देर हो चुकी हो और मौनों का आना-जाना बिल्कुल ही बद हो गया हो तो बिना प्रवेश द्वार बद किये भी उस हटा सकते हैं।

यदि किसी कारण मा मौन न आ पाई हो या खो गई हो अथवा मौनपाल की असावधानी से मर गई हो तो ऐसी अवस्था में मौनपाल जितनी भी अधिक से अधिक मौनें मौनागृह में ला सके उन्हें ही लेकर आ जावे। फिर उन्हें नई मा-मौन दे दी जावे या मां मौन बनाने की सामग्री दे दी जावे।

निवासक यंत्र की रीति—निर्वासक-यंत्र एक ऐसा यंत्र होता है जिससे मौनें बाहर तो निकल सकती हैं परन्तु भीतर नहीं जा सकतीं। यह क्रिया केवल मौनागृह के अन्दर की मौनों की भीड़ को कम करने के लिये प्रयुक्त हो सकती है। सर्व प्रथम जाले के द्वार पर कोई निर्वासक-यंत्र लगा दिया जावे। कुछ काल ठहरने पर मौनों का एक बहुत बड़ा भाग बाहर निकल आवेगा और भीतर जाने में असमर्थ होने पर बाहर ही रह जायगा। उन्हें अधिक परेशानी से बचाने के लिये द्वार के पास ही एक खाली मौनागृह खुला हुआ रख दिया जावे जिसमें एक-दो शिशुपूर्ण छत्ते रख दिये जावें। अब भीतर

से पहिली रीति की भाँति ही मौनावंश को बदल दिया जावे। भीतर की सभी क्रिया समाप्त हो चुकने पर बाहर रखे हुए मौनागृह के स्थान पर इस मौनागृह को रख दिया जावे। उसके छत्तों को मौनों सहित इसी में रख दिया जावे। यदि पुराने आले के द्वार पर अधिक मौनें हों तो वे हाथ से इसमें डाली जा सकती हैं। अन्यथा किसी हल्की वस्तु से हटाकर इस मौनागृह में जाने के लिये बाध्य की जा सकती हैं। शेष सभी क्रियायें पहली रीति की ही भाँति होंगी।

सन्दूक, पेटी आदि में रखी मौनों को बदलना

हमारे देश में मौनों को पालने का यह दूसरा ढंग है। लोग किसी भी छोटे सन्दूक या पेटी में मौनों को रख लेते हैं। इस प्रकार से रखी हुई मौनों को भी आधुनिक मौनागृहों में बदलना अत्यन्त आवश्यक है। इसकी अनेकों विधियाँ हो सकती हैं जिनमें से कुछ निम्न प्रकार हैं —

पहली रीति—सर्व प्रथम एक मौनागृह को तैयार कर लिया जावे जिसमें कि मौनों को बदलना हो। इस मौनागृह में एक या दो शिशुपूर्ण छत्ते कहीं से लाकर रख दिये जावें। शेष चौखटों में तार लगा होना आवश्यक है। एक दो चौखटों में छत्ताधार भी हो तो कुछ हानि नहीं होती। यदि बक्से में मौनों ने अधिक संख्या में छत्ते लगाये हों तो इनकी आवश्यकता नहीं होगी। अन्यथा ये काम में आ जावेंगे। इसके पश्चात मौनागृह को वहाँ बक्से उस स्थान पर ले जावें जहाँ पर कि सन्दूक या पेटी रखा है और जिसमें से मौनों को बदलना है।

पेटी या सन्दूक को उसके स्थान से हटा कर लगभग ८, १० फीट की दूरी पर उलट कर इस प्रकार रख दिया जावे कि उसका तला ऊपर को हो जावे और छत्ते उल्टे हो जावें। इसके स्थान पर नये मौनागृह को रख दिया जावे। मौनागृह का द्वार-खंड यदि पूर्णरूप से हटा दिया जावे तो अच्छा होता है क्योंकि मौनों को रास्ता खोजने में सरलता होगी। इस प्रकार समस्त मौनें इसमें जाने लगेंगी और कुछ ही काल में बक्से की सम्पूर्ण समूह मौनें निकल निकल कर इसमें आ जावेंगी।

अब छत्तों के पास जाकर उसके द्वार पर देखने से जब विश्वास हो जावे कि संग्रही-मौनें इसमें शेष नहीं हैं तो उसके तले को जो कि इस समय ऊपर को होगा, सावधानी से किसी वस्तु द्वारा खोलकर अलग कर लिया जावे। परन्तु ध्यान रहे कि झटका जोर से न लगने पावे जिससे मौनों में घबराहट पैदा हो जावे या भीतर छत्ते टूट जावें। इस समय तले को पूरा अलग करने से पूर्व एक किनारे से उठाकर धुवाँ देना लाभदायक रहता है। धुवें से मौनें तले को भी छोड़ देंगी और उनका ध्यान भी बदल जावेगा। फिर तले को हटा कर अलग रख दिया जावे। यदि बक्सा मौनागृह से आकार में छोटा हो। मौना-बक्स के छत्ता पर जो अभी तक उल्टी ही दशा में होवेंगे, धुवाकर से धुवा दे दिया जावे ताकि मौनें उपर्युक्त भाग को छोड़ कर अन्यत्र चली जावें। फिर तीक्ष्ण चाकू या छुरे से छत्तों के ऊपरी सामने के भाग को गोल कटोरे के आकार का इतना काटें कि मौनामण्डल इस गोल रिक्त स्थान पर समा सके। इस प्रकार काटने से छत्तों का कुछ भाग अवश्य नष्ट होगा परन्तु इससे विशेष हानि नहीं होती। क्योंकि प्राकृतिक ढंग से बने छत्तों का निम्न भाग नर-कोठियों से पूर्ण होता है जिन्हें काट देना ही मौनपाल के लिये उपयुक्त होता है। इस प्रकार छत्तों का अधिकतर यही भाग नष्ट होता है। परन्तु शिशु-पूर्ण छत्तों को अधिक काटकर नष्ट न किया जाय। यदि अधिक ही काटना आवश्यक हो तो यह इस प्रकार काटा जावे कि वे पुन. चौखटा पर बांध कर प्रयोग में आ सकें।

अब पट्टे या लकड़ी के एक चौरस टुकड़े को लेकर, जो कि तले से बड़ा हो, तले के स्थान को पूरा पूरा ढक दिया जावे। इसका कार्य कभी कभी मौनागृह के विपरती ढक्कन से भी लिया जा सकता है। इसके उपरान्त बक्से को चारों ओर से किसी हल्की वस्तु से थपथपाना आरम्भ करें। इस ध्वनि से मौनें भयभीत होकर छत्तों से निकल निकल कर एक स्थान पर एकत्रित होने लगेंगी। लगभग ८ या १० मिनट में वे सब मा-मौन सहित पट्टे या चौरस लकड़ी के भीतर छत्तों को काट कर बनाये गये गोलाकार रिक्त स्थान पर मंडल बना लेंगी। इस समय पट्टे को एक किनारे से उठाकर देखा जा सकता है। यदि सभी मौनें एकत्रित न हुई हों तो पट्टे को उसी प्रकार पुनः थपथपावें।

प्रथम ही बार पटपटाने से सभी मौनें एकत्रित हो जावेंगी अन्यथा दो या तीन बार इस क्रिया को करने से सभी मौनें अवश्य ही इसमें एकत्रित हो जावेंगी।

जब यह निश्चय हो जावे कि मौनें पट्टे पर आ गई हैं। तब पट्टे को उठाना चाहिये। परन्तु ध्यान रहे कि पट्टे को एकाएक उठाकर अलग न किया जाय। ऐसा करने से मौना मंडल टूट जावेगा और कुछ मौनें बक्से में ही रह जावेंगी। अतएव पट्टे को सदा धीरे धीरे उठाया जाय और मौनों के मंडल पर एकत्रित होने की क्रिया को भी देखा जाय। यदि आवश्यकता हो तो बक्से में रह गई मौना को मंडल की ओर शीघ्र जाने के लिये बक्से को पुनः समय समय पर पटपटाया जावे। इस प्रकार सभी मौनों के मंडल पर आजाने पर पट्टे को हटा लिया जावे।

अब पट्टे को, उसी दशा में, मौनों सहित सावधानी पूर्वक नवीन मौनागृह के पास लाया जावे, उसकी छत हटा कर उसे खोल दें और उसके चौखटों को दो भागों में इस प्रकार कर दें कि उनके मध्य में लगभग तीन चौखटों के बराबर या उससे अधिक स्थान रिक्त हो जावे। फिर पट्टे को मौनों सहित इस मौनागृह के ऊपर इस भाँति रख दिया जावे कि मौना मंडल, चौखटों के मध्य बनाये रिक्तस्थान पर लटक जावे और पट्टा मौनागृह को पूर्णतः ढक लेवे। रिक्तस्थान बनाने के लिये मौनामंडल के आकार का ध्यान रखा जावे और उसी के अनुसार चौखटों के मध्य रिक्त स्थान किया जावे। मौनागृह को खोलने के लिये दूसरे मनुष्य की सहायता भी ली जा सकती है या पट्टे को हटाने से पूर्व यह कार्य किया जा सकता है। यहां पर भी मौना के चौखटों पर जाने के लिये पट्टा पटपटाया जा सकता है।

तत्पश्चात बक्से के अन्दर बनाये गये शिशु पूर्ण छत्तों को सावधानी से काटकर ऊपर वर्णित विधि के अनुसार चौखटों में बांध कर मौनागृह में डाल देवें। मौनें उन्हें प्रयोग में ले आवेंगी।

दूसरी रीति—जब बक्सा इस आकार का हो कि वह मौनागृह के नीचे आ सके, तब यह क्रिया काम दे सकती है। सर्व प्रथम बक्स के तले के दोनों ओर सिरों पर ही दो लम्बे डंडे समानान्तर सावधानी पूर्वक ठोक दिये जावें।

फिर बक्से को उसी स्थान पर अलग कर रख दिया जावे। नया मौनागृह जो कि पूर्व ही से इस हेतु तैयार किया गया हो, जिसमें चौखटे छत्ताधार और शिशु छत्तों से पूर्ण कर लिये गये हों, बिना तले के इस बक्से के ऊपर इस प्रकार रख दिया जावे कि मौनागृह का निचला भाग बक्से को पूर्णरूप से ढक लेवे और वह समानान्तर डंडों पर दृढ़ता पूर्वक अटक जावे।

अब पूर्व-भांति ही नीचे के बक्से को चारों ओर से पटपटाना प्रारम्भ करें। मौनें भयभीत होकर ऊपर को भागने लगेंगी और कुछ ही काल में नवीन मौनागृह में बसने लगेंगी। जब यह ज्ञात हो जावे कि सभी मौनें मौनागृह के भीतर पहुंच चुकी हैं तो सावधानीपूर्वक बक्से को वहाँ से हटा लें और उसके स्थान पर तलपट रखकर मौनागृह रख देवें।

तत्पश्चात बक्से के अन्दर के शिशुपूर्ण छत्तों को प्रथम भांति ही काटकर चौखटों पर बांध कर मौनागृह के भीतर रख देवें।

यह मौनागृह में मौनों को बदलने की सीधी रीति है।

तीसरी रीति—यह रीति मौनावंश को बदलने की ठीक प्रथम रीति की ही भांति है। परन्तु अन्तर केवल इतना ही है कि इसमें पुराने बक्से के छत्ते काम में नहीं लाये जाते। उनमें से मौनें निकाल ली जाती हैं और छत्तों को अलग कर दिया जाता है। इस विधि को तभी प्रयोग में लाया जावे जब कि सही नाप के खिंचे खिंचाये रिक्त छत्ते मौनपाल के पास रखे हों। अन्यथा इन छत्तों को पूर्ण रूप से नष्ट कर देना ठीक नहीं होगा।

सबसे पहले एक मौनागृह खिंचे खिंचाये रिक्त छत्तों से तथा एक दो शिशुपूर्ण छत्तों युक्त चौखटों से भर कर तैयार कर लेवें। पहली रीति की भांति ही बक्से को उस स्थान से उठाकर कुछ दूरी पर रख देवें और उसके स्थान पर इस मौनागृह को रख देवें। फिर मौनों को भी उसी भांति पट्टे पर ले लेवें।

मौनों को प्रथम भांति ऊपर से मौनागृह में डालने के स्थान पर इस क्रिया में निम्न प्रकार सामने से डाला जाता है।

सर्व प्रथम नवीन मौनागृह के प्रवेशद्वार-पट को किसी पट्टे या ढकने की सहायता से चौड़ा कर लेवें और पट्टे में मौनों को थोड़ा थोड़ा लेकर प्रवेश द्वार

से कुछ दूरी पर झाड देवें। मौनें भीतर को जाने लगेंगी। इस काल मा-मौन का पता लगाना आवश्यक है। यदि मा मौन न मिले तो दुबारा उसी भाति पट्टे पर मौनों को लेकर उसे फिर झूडा जावे और मिलने पर मौनागृह में जाने दिया जावे। इस प्रकार एक, दो बार करने पर मा-मौन अवश्य मिल जावेगी और शेष मौनों को शिशुओं के पालन पोषण के लिये बक्से ही में रहने दिया जावे। इस बक्से में कम से कम ½ मौनों का शिशु मौनों की सेवा के लिये रहना आवश्यक है।

यह विदित हो जाने पर कि मा मौन इस नवीन मौनागृह में चली गई है, उसकी छत को व सहकक्ष को हटा लेवें। तिपरती लकडी के ढकने पर बने निर्वासक छिद्र पर निर्वासक यन्त्र लगा लेवें और उसे शिशु-कक्ष पर इस प्रकार रख देवें कि निर्वासक यन्त्र द्वारा मौनें शिशु-कक्ष में तो चली जावें परन्तु शिशु कक्ष से सहकक्ष में कदापि न जाने पावें। फिर बक्से को उठाकर सीधा कर लेवें और उसे मौनागृह के ऊपर तिपरती लकडी के ढकन पर इस भांति रख देवें कि उसका खुला तला नीचे को हो जावे। तात्पर्य यह है कि बक्सा अपने पहिले की सही स्थिति में आ जावे। बक्से का तला बन्द न किया जाय तथा चारों ओर के अन्य छिद्र बन्द कर दिये जावें। अब इनमें की शिशु मौनें अपनी अपनी निश्चित तिथि पर निकलती रहेंगी और निर्वासक यन्त्र से शिशु-कक्ष में उतरती जावेंगी। कुछ ही दिनों पश्चात् सम्पूर्ण शिशु छत्ते रिक्त हो जावेंगे। अब बक्से को हटा कर मौनागृह पर ढकन लगा दिया जावे और बक्से पर बने छत्तों को मोम बनाने के लिये प्रयुक्त कर लिया जावे।

इस क्रिया में एक बात ध्यान देने योग्य है। इस शिशु छत्तों से पूर्ण बक्से में मौनें कम रह जाती हैं। इसलिये यदि मौसम ठंडा हो या हो जावे तो शिशु-मौनों की ठंड से मर जाने की सम्भावना रहती है। इसलिये इस क्रिया का गरम ऋतु में ही किया जाना अधिक उपयुक्त है।

चौथी रीति—यह क्रिया पूर्णतः तीसरी रीति की ही भाति है। परन्तु अन्तर केवल इतना ही है कि बक्से में सेवक मौनें अधिक संख्या में छोड दी जाती हैं और उसे तला लगाकर, सुलटा करके नये मौनागृह के पीछे विपरीत

दिशा को मुह करके रख दिया जाता है। इसमें से भी लगभग तीन सप्ताह में सभी शिशु मौनें निकल निकल कर मौनागृह में आ जावेंगी।

इसके छत्तों को भी उसी प्रकार मोम के लिये प्रयुक्त किया जा सकता है।

तीसरी और चौथी विधियों में कुछ बात विशेष ध्यान देने योग्य होता हैं, अन्यथा हानि होने की सम्भावना रहती है। इनमें मौना को बक्से से पट्टे पर दो तीन या इससे अधिक बार में थोड़ा थोड़ा कर के लिया जावे, अन्यथा माँ मौन को ढूढना कठिन हो जावेगा या बक्से में शिशुओ के पालन-पोषण के लिये कम मौनें रह जाएगी। माँ मौन का पता अवश्य लगा लिया जाय तथा उसे नवीन मौनागृह के शिशु कक्ष में भेज दिया जाय। बक्से में सेवा के लिये कम से कम कुल मौना का ½ भाग रहना आवश्यक है।

इन दोनो विधियो मे मौनपाल छत्ते को काटने उन्हें पुनः चौखट पर लगाने तथा मधु की लथपथ से मौनों के मरने की सम्भावना से मुक्त हो जाता है।

वृक्षों के तनों के खोखलों में रखी मौनों को बदलना

हमारे देश में वृक्षों के तनों को काट कर, उस भीतर से खोखला बनाकर भी मौनों को पाला जाता है (चित्र ६६)। इसे भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न नामो से पुकारते है। इस प्रकार की मौनो को भी बदलना आवश्यक है।

चित्र ६६—वृक्षों के तनों के मौनागृह

इन मौना को बदलने के लिये कोई विशेष क्रियायें नहीं करनी पड़ती हैं। सुविधा अनुसार ऊपर वर्णित किसी भी क्रिया को प्रयोग में लिया जा सकता है।

पेड़ों और चट्टानों की मौनों को बदलना

अभी तक उन मौना को बदलने की विधिया का वर्णन किया गया है जो कि मनुष्यों द्वारा पुराने ढग से पाली गई हो। इनके अतिरिक्त भी हमारे देश म मौनो की एक बडी सख्या जगलों में अपनी प्राकृतिक अवस्था में पडी है। जैसा कि हमारे लिये अभी तक मौना को प्राप्त कर सकने के कोई भी साधन सुलभ नहीं हैं, हमारे लिये आवश्यक है कि हम इनकी ओर भी ध्यान दें। इन्हें बदला जाना भी अति उपयोगी हो सकता है। इस प्रकार की अवस्था म रहने वाली मौनें प्राय दो प्रकार से घर बनाकर रहती है। एक तो पेडा के खोखलो के भीतर और दूसरी चट्टान, गुफा आदि के भीतर। अतएव इन को प्राप्त करने की विधिया को समझना अति आवश्यक है।

पेड़ा पर घर बनाकर बस जाने वाली मौना को निम्न दो प्रकार से बदला जा सकता है।

१ प्रवेश द्वार को चौड़ा बनाकर—इसके लिये सर्व प्रथम आवश्यक है कि हम किसी प्रकार से मौनों के पास तक पहुँचने की व्यवस्था कर लेवें। इसे या तो पेड को काटकर नीचे गिरा देने से या सीढी आदि लगा कर कर सकते हैं।

जब मौनो के पास तक पहुँचने की व्यवस्था हो चुके तो सबसे पहिले एक पतली घास आदि की सींक को प्रवेश-मार्ग से डालकर पता लगाया जावे कि मौनों ने छत्ते ऊपर की दिशा को लगाये है या नीचे की दिशा को। यह सीक से सरलता पूर्वक जान सकते हैं। जिस ओर को साक सरलतापूर्वक जाकर मधु, पराग या छत्ता में पाये जाने वाले किसी अन्य पदार्थ से डूबकर बाहर निकले, समझ लिया जावे कि मौनों ने घर उसी दिशा में बनाया है। फिर इसी प्रकार से छत्तों की दूरी भी ज्ञात कर ली जानी चाहिये। अब आरी, बसूली, बगूला या किसी अन्य वस्तु से, जिससे भी सम्भव हो, एक छोटा सा छिद्र मौनों के आने जाने के लिये खोखल के उस स्थान पर बनालें जहा पर कि मौना ने छत्ते लगाये हो। फिर प्रवेश मार्ग से धुआकर स धुआ दें जिससे कि मौनें स्वाभाविक रूप से ऊपर को सरकेंगी और इस नये छिद्र से धुर्ये को और मौनो को भी बाहर

निकलने का मार्ग मिल जावेगा। मौनें शान्त भी हो जावेंगी। अन्यथा धुआं भीतर ही रुक जावेगा, मौनें भी मर जावेंगी तथा काम भी कठिन हो जावेगा।

तत्पश्चात् आरी, बसूला आदि की सहायता से प्रवेश द्वार का चौड़ा करने की चेष्टा करें और इतना चौड़ा कर लें कि छत्ते दिखाई देने लगें और उन्हें काटकर बाहर निकालना सम्भव हो सके।

इसके उपरान्त नवीन मौनागृह को समीप रखकर ढांचाली चालों से बदलने की विधि को प्रयोग में लावें। इसमें मां-मौन का ध्यान रखना आवश्यक होता है। वह खो भी सकती है। ऐसी अवस्था में नई मां-मौन या उसको बनाने के लिये कमेंट के अण्डे देना आवश्यक हो जाता है।

यह विधि उसी समय प्रयोग में आ सकती है जब कि पेड़ को काटना सरल तथा सम्भव हो।

२ बिना पेड़ को काटे मौनों को बदलना—यह विधि भी बड़ी सरल है परन्तु इसमें देर अवश्य लग जाती है। इसे चट्टान, मकान अथवा पेड़ा पर स्थित उन मौनों को बदलने के लिये प्रयोग में ला सकते हैं जहां पहुँचना तो सम्भव हो परन्तु काट कूट करना सम्भव न हो।

इसके लिये एक विशेष प्रकार के निर्गमक यन्त्र की आवश्यकता होती है जिसे कोई भी मौन पाल तार की पतली जाली से सरलता पूर्वक बना सकता है। यह गोलाई में तिकोना बनाया जाता है। इसका एक सिरा तो चौड़ा और दूसरा इतना सकरा बनाया जाता है कि उसमें एक ही मौन एक समय में निकल सके। इसकी लम्बाई १ फुट तक होती है।

इस प्रकार से मौनों को बदलने के लिये सर्व प्रथम एक हल्का लघु मौनागृह तैयार कर लिया जावे। जिसमें कुछ शिशुपूर्ण छत्ते, मां मौन कोठी सहित अवश्य रखे जावें। इस लघु मौनागृह को उस स्थान के पास लाकर और उसका मुह पेड पर मौनो द्वारा बनाये गये प्रवेश द्वार की ओर करके, उसे इतनी दूरी पर किसी भांति अटका दिया जावे कि बीच में लम्बे निर्गमक यन्त्र की लम्बाई से अधिक से अधिक एक इन्च की दूरी रह जावे। निर्गमक यन्त्र को पेड़

पर इस भांति लगा देवें कि उसका चौड़ा भाग पेड़ के छिद्र को पूर्ण-रूप से ढक लेवे और सकीर्ण सिरा मौनागृह के प्रवेश द्वार के समीप आ जावे।

इन्हें कुछ दिन तक इसी प्रकार छोड़ दिया जावे। पेड़ से मौनें निकलेंगी और भीतर जाने में असमर्थ होंगी और द्वार ढूंढते हुए लघु मौनागृह के अन्दर प्रविष्ट हो जावेंगी। यहां शिशु पूर्ण छत्ते व मा-मौन कोठी पाकर कार्य आरम्भ कर देंगी। कुछ ही दिनों में सभी मौनें निकल निकल कर इसी लघु मौनागृह में आ जावेंगी। इसमें तब तक मा मौन भी निकल आवेगी और यह एक वंश बन जावेगा। पेड़ के भीतर कुछ मौनें छत्ते व मां-मौन ही रह जावेंगी। अब निर्वासक यत्र को हटा कर अलग कर दिया जावे। लघु-मौनागृह की मौनें इसको अपने को भिन्न मानने लगेंगी। कुछ ही काल में इसकी लूट करके इसका मधु आदि अपने नये घर में ले आवेंगी। इसके पश्चात लघु-मौनागृह को घर ला सकते हैं।

चट्टान की मौनों को बदलना

प्राकृतिक रूप से घर बना कर रहने वाली मौनें चट्टानों के भीतर भी कभी कभी घर बना कर रहने लगती हैं। इन्हें बदलना भी अत्यन्त आवश्यक है।

इन मौनों को बदलने के लिये पेड़ो पर बसी मौनो को बदलने की कोई भी क्रिया प्रयोग में लाई जा सकती है।

छत्तों को काट कर चौखटों पर लगाना

दीवाली आलों से मौनों को बदलते समय इस क्रिया को समझा दिया गया है। इस क्रिया को जानना बड़ा आवश्यक है। इसलिये यहाँ पर इसका पुनः विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

(१) चौखटों पर लगाने के लिये सदैव वही छत्ते काटने चाहिये जो कर्मठ मौन के शिशुओं से पूर्ण हों। नर-शिशु छत्तों को चौखटों पर बाध कर रखने से कोई लाभ नहीं होगा।

(२) सर्व प्रथम छत्ते को किसी समतल वस्तु पर हल्के हाथ से चौरस रख दिया जावे फिर चौखट को उसके ऊपर चपटा रख कर चाकू से चौखट की सही

भीतरी भाग का नाप लिया जावे। क्योंकि छत्ता इसके अन्दर लगाया जावेगा न कि बाहर। (चित्र ६७)

चित्र ६८—छत्ते को काटना

(३) चौखट पर जितने तार लगे हों, तार के बिल्कुल नीचे भीतर में चाकू से छत्ते को आधी गहराई तक काट लिया जावे, अन्यथा तार छत्ते को चौखट के मध्य नहीं आने देंगे। फिर छत्ते को चौखट सहित इस प्रकार दबाया जावे कि छत्ता चौखट के मध्य आ जावे और तार पूर्ण रूप से छत्ते में डूब जावें। इस समय छत्ते को चौखट के बीचों बीच में कर देना आवश्यक है। अन्यथा छत्ता सदा के लिये टेढ़ा हो जायगा और कठिनाई पैदा करेगा। नया मोमपात बिना तार लगे चौखट भी इसके लिये प्रयुक्त कर सकता है।

(४) छत्ते को ठीक बीच लगा लेने पर तागे से कसकर बाँध दिया जाय। अन्यथा उसके छूट कर गिरने का डर रहता है। (चित्र ६८)

(५) यदि छत्ते के छोटे छोटे टुकड़े बच गये हों, जिनमें कि कमद शिशु विद्यमान हों, तो उनको भी जोड़ कर एक साथ

चित्र ६—छत्ते को बाधना

चौखट में बांध कर काम में ला सकते हैं। ये छत्ते बाद को काम में नहीं आते। शिशुओं के मौन बन कर निकलते ही इन छत्तों को नष्ट कर दिया जावे।

बदलने के पश्चात ध्यान देने योग्य बातें—मौनावंशों को बदलने के पश्चात निम्न तीन बातें मुख्य रूप से ध्यान में रखने की हैं।

(१) मौनावंश बदल कर पुराने स्थान से कम से कम १॥ या २ मील की दूरी पर हटाया जावे। अन्यथा मौनें पुराने ही स्थान पर चली जावेंगी। यदि मौनालय जिसमें कि मौनों को बदल कर ले जाना हो, इससे कम दूरी पर स्थित हो तो कम से कम एक सप्ताह के लिये बदले हुए वंश को ऐसे स्थान पर रख दिया जावे जो स्थान मौनों के पुराने घर तथा मौनालय से १॥ या २ मील की दूरी पर हो। यहां से ये फिर घर लाई जा सकती हैं।

(२) मौनावंश को घर लाने के पश्चात् मां-मौन को अवश्य देख लेवें। अनेकों बार बदलने की क्रिया में मां-मौन मर जाती है। यदि मां-मौन ४, ५ दिन में दिखाई दे जावे तो उत्तम है। अन्यथा उसे कर्मठ-मौन के अन्डे बच्चों से पूर्ण छत्ता अवश्य दे दिया जावे।

(३) बदलने के बाद कुछ दिनों तक शरबत देना आवश्यक होता है।

वाहक पिंजड़ा या ले जाने का पिंजड़ा

जैसा नाम से ही स्पष्ट है, यह मौनों को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने के लिये एक हल्का मौनागृह बना होता है। मौनों को बदलने के लिये इसका प्रयोग किया जा सकता है। ये भिन्न भिन्न नाप के बनाये जा सकते हैं। अधिकाश मौनपाल इसे ४, ५ चौखटों का बना लेते हैं। क्योंकि इतने चौखटों से काम चल जाता है। इसमें मधुकक्ष नहीं होता। तल-पट अलग नहीं होता। शिशु-कक्ष पर ही जुड़ा हुआ दूसरा तला बनाया जाता है। सामने से एक छिद्र बनाकर इसका प्रवेश मार्ग बना दिया जाता है। छत इसकी अन्य मौनागृहों से भिन्न होती है। जाली का बनाया गया चौकोर ढकना भी इसमें प्रयुक्त होता है। छत को कब्जेदार या पेच कसने वाला बनाया जा सकता है। परन्तु बनाते समय ध्यान इस बात का रहे कि छत

लगाने के पश्चात् कहीं से भी मीनों के आने जाने का मार्ग न हो। ऊपर से हाथ से पकड़ने का साधन भी लगा दिया जाता है।

मीनावंश बदलने में इससे बड़ी सुविधा होती है। इसे बांधने की आवश्यकता नहीं पड़ती। तथा इसे मीनपाल स्वयं ही ले जा सकता है। ...र लाकर दूसरी मीनों को बदल दिया जाता है।

मरगोमीन्ट-मौनालय-ज्योलीकोट का दूसरा बाह्य-मौनालय, तिरछाखेत (सातताल), जिला नैनीताल के पास

जाड़ों में नैनीताल के एक मौनपाल का पुआल और टाट से बंधा, बरफ से ढका हुआ मौनागृह

अध्याय १०

शीत-काल व शीत-कालीन-बन्धन

ठंडे प्रदेशों में जाड़े का मौसम मौनों के लिए अत्यन्त भयंकर होता है। मौनपाल को जाड़े से सकुशल अपनी मौनों को बचाना एक बड़ी परीक्षा का विषय हो जाता है। थोड़ी सी असावधानी से उसकी सम्पूर्ण सचित सम्पत्ति एकाएक नष्ट हो सकता है। इसके लिए जाड़ा प्रारम्भ होते ही यानी कार्तिकी अमृत स्राव के समाप्त होते ही उसके सम्मुख यह प्रश्न उठता है कि ठंड से बचाने के लिए मौनों को गरम स्थान को स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिए या उसी स्थान पर उनकी रक्षा का प्रबन्ध किया जाना चाहिए। वास्तव में इस समय मौनपाल को सोच समझ से काम लेना चाहिए। इसके लिए शीघ्रता का निर्णय हानिकारक हो जाता है।

मौनावंशों का स्थानान्तरित किया जाना

मौनावंशों को स्थानान्तरित करना कोई सरल काम नहीं है। इसमें धन तो व्यय होता ही है, साथ ही साथ मौनों के नष्ट होने का डर भी रहता है। इस काम को उसी मौनपाल ने अपनाना चाहिए जिसे अपने पर पूर्ण भरोसा हो। अगर मौनपाल चतुर हो तथा अनुकूल स्थान मिल सके तो यह कार्य अति लाभप्रद भी सिद्ध हो सकता है। पाश्चात्य देशों में मौनपाल इसे आवश्यक भी मानने लग गये हैं। वे भिन्न स्थानों के अमृतस्राव व मौसमों का अध्ययन करते हैं। एक स्थान का मौसम प्रतिकूल होते ही या वहां का अमृत स्राव समाप्त होते ही अपने मौनावंशों को अन्यत्र को लेकर चल देते हैं। इस प्रकार वे वर्ष में अनेकों अमृत स्रावों से मधु प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे मौनपालन को मनचल मौनपालन कह कर पुकारा जाता है।

इस सम्बन्ध में हमारे यहां अभी परिस्थितियां इतनी अनुकूल नहीं हैं। न तो यातायात के साधन ही सम्मुनत रूप से प्राप्त हैं, न हमारा मौनपालन सम्बन्धी ज्ञान ही परिपक्व है और न हमको अपने देश के भिन्न भिन्न स्थानों के अमृत स्रावों का ही पूर्ण ज्ञान है। इसलिए हमारे लिए इस अपनाना कुछ सोच समझ कर ही काम है।

हमको शीत से बचने के लिये अपने मौनावंशों को स्थानान्तरित करने की तभी सोचनी चाहिये जब हमको अपने ज्ञान पर पूर्ण विश्वास हो तथा हमें कोई ऐसा स्थान मिल सके जहां यातायात के साधन सुलभ हों। जो स्थान जाड़ों में गरम रहता हो और इस ही समय वहां अमृत स्राव भी होता हो। अगर हम इन बातों पर ध्यान देंगे तो मौनावंशों का स्थानान्तरित करना हमारे लिए लाभप्रद हो सकता है। थोड़े से मौनावंशों को लेकर स्थान परिवर्तन करने की कभी भी नहीं सोचनी चाहिये, बल्कि उनका उसी स्थान पर शीत काल से बचाने का यथोचित प्रबन्ध कर देना चाहिये।

मौनावंशों को स्थानान्तरित करना—अगर हमने मौनावंशों को स्थानान्तरित करने का संकल्प कर ही लिया हो तो हमें इस प्रकार इस क्रिया को करना चाहिये। ज्यों ही कार्तिकी अमृत स्राव से मधु निष्कासन समाप्त हो जावे। हमें मौनागृहों को ले चलने की तैयारी प्रारम्भ कर देना चाहिये।

इसके लिये सर्वप्रथम यात्रा की दूरी के अनुसार मौनों के भोजन का प्रबन्ध मौनावंशों में कर दिया जाना चाहिये। इसे हम कुछ दिन पूर्व से शरबत खिलाना प्रारम्भ करके कर सकते हैं या मधु निष्कासन के समय उनकी आवश्यकतानुसार कुछ मधु अनिष्कासित ही उसमें छोड़कर कर सकते हैं।

अब दूसरा काम मौनागृहों को इस प्रकार बांधने या जोड़ने का है कि रास्ते में उनके भाग इधर-उधर खिसक कर मौनों को बाहर निकलने का अवसर न दे देवें। इसके लिये मौनागृहों के प्रत्येक भाग को एक दूसरे से लोहे की पत्ती, पेंच या किसी अन्य प्रकार की कील से कस कर जोड़ देना चाहिये। जब यह सब कुछ किया जावे उस समय मौनागृहों में हवा के लिये उचित प्रबन्ध करने का ध्यान भी रखा जावे। इस मौनपाल द्वार दंड को हटा कर वहाँ पर जाली लगाकर

कर सकता है या छत हटाकर वहा पर जालीदार चौखट ठोकर कर सकता है। लेकिन यह सब उस समय आवश्यक होता है जब कि ग्रीष्म ऋतु में हम मौनागृहों को स्थानान्तरित कर रहे हों। इस काल इसकी आवश्यकता नहीं रहती।

चित्र ६६—मौनागृहों को मोटर में ले जाना

स्थानान्तरित करने का समय—हमारे लिये स्थानान्तरित करने का प्रत्येक समय हो सकता है क्योंकि यातायात के साधन आदि पर हमारा वश नहीं होता। केवल हमें इतना ही ध्यान रखना चाहिये कि स्थानान्तरित करने के दिन की पहली शाम को जब कि सब मौनें बाहर से आचुकी हों, मौनागृहों के प्रवेश द्वारा को बन्द कर लेने की क्रिया कर लेनी चाहिये। (चित्र ६६) अन्यथा मौनों का बहुत बड़ा भाग घर पर ही छूट रह जायगा। लेकिन विदेशी मौनपाल

दिन की अपेक्षा रात को यात्रा अधिक उपयुक्त मानते हैं। वे इस काल मौना-वंशों को बिना प्रवेश द्वार बन्द किये भी ले चलते हैं क्योंकि रात को मौनों की

चित्र ९०—मौनागृहों को नये स्थान पर रखना

कार्य-गति शिथिल पड जाती है। केवल इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि कहीं से भी उन पर प्रकाश न पड़े। अन्यथा वे बाहर निकल पड़ेंगी। अगर गर्मी के मौसम में स्थानान्तरित किया जा रहा हो तो मौनागृहो का द्वार सामने को करना वे उपयुक्त बताते हैं। इससे मौनागृहों के भीतर वायु के प्रवेश होने से मौनो में बेचैनी नहीं होने पाती है।

मौनों को नये स्थानों पर रखना—मौनावंशों को रखने के लिये स्थान का चुनाव पहले ही से कर लिया जाना चाहिये। उस स्थान पर मौना गृहों को रखकर एक दम द्वार नहीं खोलना चाहिये। कुछ काल बिना छेड़े मौनो को छोड़कर यात्रा की बेचैनी से मुक्त होने देना चाहिये। कुछ काल बाद

जब वे शान्त अवस्था में आ जावें तब द्वार खोलकर उन्हें बाहर आने का अवसर देना चाहिये। (चित्र ७०)

शीत कालीन-बन्धन

अब हमें सोचना है कि अगर हम मौनगृहों को ठंड से बचाने के लिये गरम स्थानों को स्थानान्तरित न कर सकें तो हमें क्या करना चाहिये। इसके लिये हमें तीन बातों की ओर ध्यान देना आवश्यकीय है। प्रथम—ठंड से उनका बचाव किस प्रकार करें। द्वितीय—जाड़ा में उनके खाने के लिये क्या व्यवस्था हो। तीसरा—मौनगृह के भीतर नमी आने को रोकने के लिये क्या किया जाय। इन्हीं सब व्यवस्थाओं को मौनपाल शीत-कालीन-बन्धन के नाम से पुकारता है।

बंधन का समय—इसका समय मौनपाल को अपनी अपनी स्थिति के अनुसार निश्चित करना चाहिये। कार्तिकी अमृत श्राव के बाद, कीड़े मकोड़ों के नाश व पाले के पड़ने से पूर्व यह काम कर लिया जाना चाहिये। शीत प्रदेशों में यह समय नवम्बर के अंतिम सप्ताह या दिसम्बर प्रथम सप्ताह में होता है।

बंधन से पूर्व के काम—अगर किसी मौनगृह में मां-मौन वृद्ध हो चुकी हो तो इस समय उसको बदलने का कार्य कर लिया जाना चाहिये। अन्यथा बसंत के अमृत श्राव में इससे हानि उठाना पड़ेगी। प्रत्येक मौनगृह में शिशु-कक्ष पर नमी के मौनगृह में न रुकने देने के लिये एक छोटा सा छिद्र कर दिया जाना चाहिये। यह छिद्र अत्यन्त आवश्यक होता है। अन्यथा शीत-काल की पानी से भरी हवा भीतर घुस कर नमी पैदा कर देती है। जो मौनों के लिये शीत से भी अधिक कष्टकारक होती है। मौनगृहों के प्रवेश द्वार शीतकाल की ठंडी हवा को भीतर प्रविष्ट होने से रोकने के लिये संकीर्ण कर दिये जाने चाहिये तथा मौनों की शक्ति अनुसार उनके जाड़ा भर के लिये भोजन मिश्री के रूप में बनाकर प्रत्येक मौनगृह के भीतर रख दिया जाना चाहिये। तब इसके बाद बांधने का कार्य प्रारम्भ करना चाहिये।

दिन की अपेक्षा रात को यात्रा अधिक उपयुक्त मानते हैं। वे इस काल मौना पर्यों को बिना प्रवेश द्वार बन्द किये भी ले चलते हैं क्योंकि रात को मौनों की

चित्र ८०—मौनागृहों को नये स्थान पर रखना

कार्य-गति शिथिल पड जाती है। केवल इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि कहीं से भी उन पर प्रकाश न पड़े। अन्यथा व बाहर निकल पड़ेंगी। अगर गर्मी के मौसम में स्थानान्तरित किया जा रहा हो तो मौनागृहों का द्वार सामने को करना वे उपयुक्त बताते हैं। इससे मौनागृहों के भीतर वायु के प्रवेश होने से मौना में बेचैनी नहा होने पाती है।

मौना को नये स्थानों पर रखना—मौनागृहों को रखने के लिये स्थान का चुनाव पहले ही से कर लिया जाना चाहिये। उस स्थान पर मौना गृहों को रखकर एक दम द्वार नहीं खोलना चाहिये। कुछ काल बिना छेड़े मौना को छोड़कर यात्रा की बेचैनी से मुक्त होने देना चाहिये। कुछ काल बाद

जब वे शान्त अवस्था में आ जावें तब द्वार खोलकर उन्हें बाहर आने का अवसर देना चाहिये। (चित्र ७०)

शीत कालीन-बन्धन

अब हमें सोचना है कि अगर हम मौनगृहों को ठंड से बचाने के लिये गरम स्थानों को स्थानान्तरित न कर सकें तो हमें क्या करना चाहिये। इसके लिये हमें तीन बातों की ओर ध्यान देना आवश्यकीय है। प्रथम—ठंड से उनका बचाव किस प्रकार करें। द्वितीय—जाड़ा में उनके खाने के लिये क्या व्यवस्था हो। तीसरा—मौनगृह के भीतर नमी आदि को रोकने के लिये क्या किया जाय। इन्हीं सब व्यवस्थाओं को मौनपाल शीत-कालीन-बन्धन के नाम से पुकारता है।

बन्धन का समय—इसका समय मौनपाल को अपनी अपनी स्थिति के अनुसार निश्चित करना चाहिये। कार्तिकी अमृत-श्राव के बाद, कीड़े मकोड़ा के नाशक पाले के पड़ने से पूर्व यह काम कर लिया जाना चाहिये। शीत-प्रदेशों में यह समय नवम्बर के अंतिम सप्ताह या दिसम्बर प्रथम सप्ताह में होता है।

बन्धन से पूर्व के काम—अगर किसी मौनगृह में मा मौन वृद्ध हो चुकी हो तो इस समय उसको बदलने का कार्य कर लिया जाना चाहिये। अन्यथा बसन्त के अमृत श्राव में उसे हानि उठानी पड़ेगी। प्रत्येक मौनगृह में शिशु-कक्ष पर नमी के मौनगृह में न रुकने देने के लिये एक छोटा सा छिद्र कर दिया जाना चाहिये। यह छिद्र अत्यन्त आवश्यक होता है। अन्यथा शीत-काल की पानी से भरी हवा भीतर घुस कर नमी पैदा कर देती है। जो मौनों के लिये शीत से भी अधिक कष्टकारक होती है। मौनगृहों के प्रवेश द्वार शीतकाल की ठंडी हवा को भीतर प्रविष्ट होने से रोकने के लिये संकीर्ण कर दिये जाने चाहिये तथा मौनों की शक्ति अनुसार उनके जाड़ा भर के लिये भोजन मिश्री के रूप में बनाकर प्रत्येक मौनगृह के भीतर रख दिया जाना चाहिये। तब इसके बाद बांधने का कार्य प्रारम्भ करना चाहिये।

मिश्री—मिश्री को यों तो हम बसन्त में भी मौना को खाने के लिये दे सकते हैं। लेकिन जाड़े में तो केवल एक मात्र इसी मिश्री के रूप में ही मौनों को खाना दिया जा सकता है। क्योंकि उस समय ठंड के कारण शरबत को खाना उनके लिये कठिन हो जाता है। मिश्री बनाना कोई कठिन काम नहीं है। इसके लिये हमेशा दौवार की चीनी का प्रयोग किया जाना चाहिये। पानी और चीनी का अनुपात १:५ का रखना चाहिये। लगभग दो सेर जल में दस सेर चीनी उपयुक्त रहती है। पहले जल को खौला लेना चाहिये और उसमें चीनी छोड़ देनी चाहिये। फिर करछी से इस प्रकार घुलाते जाना चाहिये कि न तो वह तले ही लगने पावे और न जलने ही पावे। फिर कुछ काल तक पकते ही रहने देना चाहिये। इसके बाद मय बरतन के ठंडे पानी के बरतन में शीतल होने के लिये छोड़ देना चाहिये। जब कुछ ठंडा हो जाय और फफोले उठने लगें तो उसे उलट कर किसी बरतन में जमने को रख दिया जाना चाहिये। जब वह जम जाय और बिलकुल ठंडा होजाय तो उसे बरतन को उलट कर सीधे धीरे से चौखटों के ऊपर औंधा करके मौनों के खाने के लिए रखा जा सकता है। मौनें नीचे से धीरे धीरे खा लेंगी।

(२) एक बरतन में पानी गरम करने को रख दिया जाय। जब पानी गरम हो जाय तो उसमें चीनी छोड़ दी जाय। और करछी से इस प्रकार घुमाते रहना चाहिये ताकि चीनी न जलने पावे और न तले ही लगने पावे। और उबलने के पूर्व चीनी अच्छी तरह घुल जाय। फिर उबलते रहने देना चाहिये। इतना उबलने देना चाहिये कि अगर उसे सींक से निकाल कर ठंडे जल में छोड़ दिया जाय तो वह जमकर कड़ाकेदार हो जाय और अगर उसको जीभ में रखा जाय तो वह एक दम से घुल जाय और स्वाद में अच्छा लगे। बस, जब ऐसा ही जाय तो समझ लेना चाहिये कि मिश्री तैयार हो गई। इसके बाद एक चौरस वस्तु पर कागज बिछा दिया जाय। अगर कागज पर मोम लगा दिया जाय तो अच्छा है नहीं तो कागज पर मिश्री चिपक जायगी। कागज के बीच में चार लकड़ी लगाकर मिश्री को बहने से रोकने के लिए एक चौखट नुमा बना लिया जाय और मिश्री का बरतन उस चौखट के भीतर कागज

पर उलट दिया जाय। जब यह कुछ शीतल हो जाय तो तीक्ष्ण चाकू से चौकोर टुकडों में काट लेना चाहिये। इन टुकडों को ज्यों का त्यों ठंडे होने पर सीधे चौखटों के ऊपर रख कर मौनों को खाने के लिये दिया जा सकता है। अगर कागज चिपक गया हो तो कागज वाला भाग ऊपर को कर देना चाहिये।

इस बात की ओर सदा ध्यान रखना चाहिये कि मिश्री जलने न पावे। जली हुई मिश्री मौनों के लिये हानि कारक होती है। अगर जलने का भय हो तो धीमी आंच में पकाने की चेष्टा करनी चाहिये।

बन्धन करना—जब मिश्री प्रत्येक मौनागृह के भीतर रख दी जावे तब बाधने का कार्य आरम्भ किया जाय। बन्धन करने के लिये सदा ऐसी घास प्रयोग में लानी चाहिये जो लम्बे रेशे वाली तथा गरमी देने वाली हो। इसके लिये धान की पुआल उपयुक्त होती है। इसे लपेट कर सुतली से मौनागृह के चारों ओर बाध दिया जाना चाहिये। लगभग ३″ मोटा पुआल तले व छत पर तथा २″ व २½″ तक मौनागृह के चारों ओर लपेटना पर्याप्त होता है। बाधते समय ध्यान रहे कि प्रवेश द्वार, हवादान और नमी के बाहर निकलने हेतु बनाया हुआ शिशु-कक्ष का छिद्र बन्द न होने पावे। इसके बाद टाट आदि से ढक दिया जाय। (चित्र ७१)

चित्र७१—शीतकालीन बन्धन

ध्यान देने की बातें—बन्धन करने के बाद दो बातें विशेष ध्यान में रखने की हैं। पहली बात तो यह है कि मौनागृह पर बँधी घास भीगने न पावे। अन्यथा यह घास गरमी के स्थान पर ठंडक को बढावेगी। सदा यह घास सूखी रखनी चाहिये। दूसरी बात यह है कि शिशु-कक्ष में नम हवा के भाप बन

पर निकालने के हेतु छिद्र अवश्य होना चाहिये। अन्यथा वह भीतर नमी को बढ़ा देगी जो मौनों के लिये ठंड से भी अधिक भयानक होती है।

अगर मौनागृह भीतर बरामदे आदि में रखे हों तो कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं होती। अगर बाहर खुले में रखे गये हों तो उनको ढाने की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसके लिये अमेरिका में मोमी कागज बाहर से लपेट दिया जाता है। लेकिन हम निम्न प्रकार से प्रयोग कर सकते हैं।

(१) अगर घर में बरामदा आदि उपलब्ध हो तो पतझड़ में ही मौनागृहों को थोड़ा थोड़ा खिसका कर उसमें ले जाया जावे।

(२) कहीं खुली छप्पर बना कर सब मौनागृह उसके भीतर बाहर को मुह करके रख दिये जावें।

(३) चार चार मौनागृहों को एक समूह में रखकर उनको एक साथ ढाने की व्यवस्था कर दी जाय। चार-चार मौनागृह चारों दिशाओं को बाहर को मुह करके साथ साथ रखे जा सकते हैं।

जब बन्धन हो चुके तो बचाव की एक और आवश्यकता शेष रहती है। सीधे उत्तर से आने वाली ठंडी हवा को सीधे मौनागृह के अन्दर पहुँचने से रोकने के लिये व्यवस्था की जानी चाहिये। इसके लिये चारों ओर तख्ते आदि से बाढ़ कर सकते हैं। लगभग गज डेढ गज ऊँची बाढ़ उपयुक्त रहती है और मौनों के आने जाने और हवा के वेग को कम करने के लिये तख्तों के मध्य कुछ अन्तर छोड़ दिया जाना चाहिये।

बस इसके बाद मौनों को छेड़ने की आवश्यकता नहीं रहती। कभी कभी अच्छे मौसम में जब धूप खिली हो, ठंडी हवा न बह रही हो, मौनें बाहर भीतर आ रही हों तो मौनागृह को खोल कर उनकी आवश्यकताओं का पता लगा सकते हैं। फिर तत्काल उनकी आवश्यकताओं को पूरा करके पहले की भांति बन्द कर देना चाहिये।

बसन्त और जाड़े की बरबादी

मौनपाल की अज्ञानता व लापरवाही से मौनों के वंश कभी कभी जाड़ों में और बसन्त में पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं या धीरे धीरे क्षीण होने लगते हैं।

इसी को बसन्त ऋतु में बसन्त की बरबादी और जाड़ों में जाड़ों की बरबादी कहते हैं।

क्षीण मौनवंशों का उचित बन्धन न किया जाना, नमी की अधिकता बसन्त के प्रारम्भ में मौनों में दस्त की बीमारी प्रकट कर देती है, जिससे मौनावंश क्षीण होने लगता है। कड़ाके का जाड़ा भी मौनों को नष्ट कर देता है। इसी को बसन्त की बरबादी कहते हैं।

बहुत स्थानों में मौसम इस प्रकार एकाएक बदलता है कि मौनों को उसकी सही जाँच नहीं हो पाती है। वे गरम समय में काम को निकल पड़ती हैं और लौट कर नहीं आ पाती हैं। जिसके कारण मौनावंश क्षीण होने लगता है। इसी को जाड़े की बरबादी कहते हैं।

अध्याय ११
मधु-निष्कासन

पुराने प्रकार से मौनों को पालने वाले जब छत्तों से मधु को प्राप्त करते हैं तब या तो वे छत्ते हाथ से निचोड़ लेते हैं या धूप में पिघला कर छान लेते हैं। इस प्रकार प्राप्त किया हुआ शहद तो अशुद्ध होता ही है, साथ ही साथ छत्ता भी समूल नष्ट हो जाता है। लेकिन आधुनिक चल-चौखट युक्त मौनागृहों में पाली गई मौनों से जब शहद प्राप्त किया जाता है तो एक यंत्र के द्वारा यह काम किया जाता है। जिसे मधु-निष्कासक यंत्र कहते हैं। इससे जो मधु प्राप्त होता है वह मनुष्य के हाथ से अछूता ही रहता है। उसमें किसी प्रकार की भी अशुद्धता नहीं आने पाती है। वह पूर्ण रूप से शुद्ध होता है। इसी मधु को हम निष्कासित मधु कहते हैं। इस प्रकार मधु निकालने की जो क्रिया होती है उसी को मधु निष्कासन क्रिया कहते हैं।

निष्कासित करने योग्य मधु—आधुनिक चल-चौखट-युक्त मौनागृह बड़ी वैज्ञानिक विधि से तैयार किया गया है। हम मौनों से जो मधु लेते हैं वह वास्तव में न तो हमारे लिये मौनों द्वारा संग्रह ही किया जाता है और न उनके लिये ही आवश्यकता से अधिक होता है। मौनें इस मधु को वास्तव में अपने विपत्ति-काल के लिये ही संग्रह करके रखती हैं। हम से अधिक उनको इसकी आवश्यकता रहती है। इसीलिये अगर हम उनके इस संचित भंडार को लूटने की चेष्टा भी करें तो हमें इतना निर्दय नहीं बन जाना चाहिये कि हम उनकी आवश्यकता को बिल्कुल ही भुला दें, जैसा कि पुराने ढंग से मौनें पालने वाले करते हैं। वे अपने स्वार्थ के लिये मौनों की आवश्यकता को तो भूल ही जाते हैं तथा थोड़े से शहद के लिये उनका विनाश करने में भी नहीं हिचकते। आधुनिक मौनागृह इसी दृष्टि कोण से बनाया गया है। इसके दो खंड होते हैं। एक नीचे का खंड, जिसको शिशु-कक्ष या शिशु खंड कहते

हैं। इसीमें इनके अंडे, बच्चे व अपने प्रयोग के लिये कुछ शहद और पराग भी सन्चित रहता है। बहुत से मौन-पाल शहद के लोभ में इस मधु को निकालने में भी नहीं चूकते। उस समय उनको इस प्रकार कुछ शहद तो अवश्य मिल जाता है लेकिन मौनावश की समृद्धि में इससे जो बाधा पडती है वह आने वाले अमृतश्राव मे उससे भी अधिक हानि देती है। मौनपाल को शिशु-कक्ष का मधु कदापि नहीं निकालना चाहिये। इस शिशु-कक्ष के ठीक ऊपर एक दूसरा कक्ष होता है जिसे सहकक्ष कहते हैं। शिशु-कक्ष के बाद मौनें इसमें चढ जाती है और शेष शहद इसमें जमा करने लगती हैं। इसी सहकक्ष के मधु को ही मौनपाल ने अपने लिये निकालना चाहिये। इसमें भी शिशु-कक्ष में उनके अपने हेतु सन्चित किये गये मधु व पराग को ध्यान मे रख लेना चाहिये। अगर उसमें कमी मालूम हो तब या तो सहकक्ष को उनके खाने के लिये छोड ही देना चाहिये या फिर पूर्ति कारक भोजन द्वारा उनकी आवश्यकता को पूर्ण करना चाहिये। जब तक शिशु-कक्ष मे मौनें सहकक्ष मे न आ जावें और उसमे मधु भर न लेवें तब तक मौनपाल को धैर्यपूर्वक बाट देखनी चाहिये।

सहकक्ष देना सहकक्ष हमेशा अमृत-श्राव के प्रारम्भ काल में शक्तिशाली मौनावशों को दिया जाना चाहिये जब कि प्रवश द्वार पर मौनों की कार्य-गति पर तीव्रता आने लगी हो, भीतर शिशु कक्ष से मौनें ढकने के निर्वासक छिद्र पर मोम से काम करने लगी हों। बहुत पहले सहकक्ष को देना मौनो की प्रगति में बाधक होता है, क्योंकि मौनों के पास गरम करने के लिये एक विस्तृत स्थान हो जाता है। अगर बाह्य मौनालय हो, जहा मौनपाल हर समय नहीं आपाता तो ऐसी स्थिति में मौनपाल दो सहकक्ष तक एक साथ दे सकता है। अन्यथा दूसरा सहकक्ष, प्रथम सहकक्ष के दो तिहाई भर जाने पर उसके ऊपर से दिया जाना चाहिये। इसी प्रकार तीसरे, चौथे सहकक्ष दिये जा सकते हैं।

सहकक्षों का हटाना—प्राय अमृत-श्राव के अन्त में जब कि सहकक्षों मे मधु का अधिकांश भाग बन्द किया जा चुके, मौनपाल सहकक्षों को निष्कासन के लिये हटा सकता है। मधु-कोठरियों का बन्द हो जाना अति

आवश्यक होता है। क्योंकि जब तक ये बन्द न कर दी जावें तब तक मधु पक नहीं कहा जा सकता है। कच्चा मधु पतला व कम स्वादिष्ट होता है। अमृत श्राव के समय मौनें इतनी कार्यव्यस्त रहती हैं कि उन्हें मधु को बन्द करने का ध्यान उतना नहीं रहता जितना कि मधु-संग्रह का। जब अमृत श्राव समाप्त होने लगता है तब वे इस ओर ध्यान देती हैं। इसलिये अमृत-श्राव के बाद भी मौनपाल को सहकक्षों को इंजन में शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। पूरा छत्ता या कम से कम तीन चौथाई छत्ता तो अवश्य ही बन्द हो जाना चाहिये।

मौनी-गोंद से सहकक्षों को छुडाना—मौनें कभी कभी सहकक्षों को आपस में इस प्रकार जोड देती हैं कि उन्हें अलग करना कठिन हो जाता है। इसलिये मौनपाल को चाहिये कि वह इन सहकक्षों को बडी सावधानी से छुडावें। अन्यथा छत्तों के टूटने व मौनों के बिगडने की सम्भावना रहती है।

मौनों को अपनी प्रत्येक कठिनाई व असुविधा का ज्ञान होता है। वे हवा व नमी को प्रविष्ट कराने वाले प्रत्येक छिद्र को सदा बन्द करने की चेष्टा करती हैं। इसके लिये वे एक प्रकार का चिपचिपा पदार्थ प्रयोग में लाती हैं, जिसे मौनीगोंद कहते हैं। मौनीगोंद मौनों द्वारा पराग-टोकरी में ही सचय करके लाया जाता है। लेकिन इसके बोझ को वह कभी भी स्वयं नहीं उतारती हैं। अन्य मौनें खाच खाच कर मौनीगोंद को इस्तेमाल ले लेती हैं। इसको संग्रह करके भी नहीं रखा जाता है। तत्काल काम में ले लिया जाता है।

इस मौनीगोंद को मौनें कुछ पौधों में विशेषतः कोपलों से संग्रह करती हैं। यह दिन में जब कि गर्मी अधिक रहती है अधिकांश संग्रह किया जाता है। किन्हीं स्थानों पर या किसी जाति की मौनों द्वारा इस गोंद का प्रयोग बहुत किया जाता है। वे मौनगृह के प्रत्येक भाग को तथा चौखटों को इतनी बुरी तरह से चिपका देती हैं कि मौनपाल के लिये उनका छुड़ाना कठिन हो जाता है। इसी कठिनाई से बचने के लिये निरीक्षण करते समय खुरच कर इसे अलग कर देना ठीक होता है। या मौनपाल "वैसलीन" की पॉलिश चौखटों पर करना इसके लिये लाभदायक बताते हैं।

मौनों को हटाना—सहकत्त को मधु निष्कासन के लिये मौनावंश से अलग करते समय उसमें मौना को छुड़ा लेना अति आवश्यक व कठिन होता है। यदि मौनालय कुछ ही दशा तक सीमित हो तब तो इसमें कुछ भी अधिक कठिनाई प्रतीत नहीं होती है। परन्तु बड़े मौनालयों में जहां सैकड़ों सहकत्त एक ही समय हटाने होते हैं, वास्तव में यह एक विचारणीय प्रश्न मौनपाल के लिये हो जाता है।

छोटा मौनपाल सरलता पूर्वक इस काम को निम्न विधियों से कर सकता है:—

१ **धुवें से**—मौनागृह को खोलकर धुवाकर से सहकत्त में धुवां ऊपर से नीचे को दिया जावे। कुछ ही काल में मौनें सहकत्त छोड़ कर नीचे उतर जायगी। जो रह जावें, उन्हें सहकत्त को हटा कर अलग रख कर धुवां देने से हटाया जा सकता है।

२ **ब्रुश या झाड़ू से**—इसके लिये पतले व मुलायम बालों वाले ब्रुश या रेशे वाले झाड़ का प्रयोग किया जा सकता है। सब प्रथम सहकत्त को हटाकर अलग रख लिया जाय। उसकी कुछ संग्रही मौनें तो स्वयं ही लौट कर अपने मौनावंश में आ जायगी और जो रह जावें उन्हें एक एक चौखट ले कर मौनागृह के अवतारक पट पर झाड़ू या ब्रुश से अलग किया जा सकता है। झाड़ू के लिए गिद्ध आदि के पर उपयोगी होते हैं।

३ **झटके से**—इसके लिये दूसरी विधि की ही भांति प्रथम सहकत्त को अलग कर लिया जाय। फिर झाड़ू या ब्रुश से हटाने के स्थान पर चौखटों को एक एक करके लेकर स्थिर हाथों से अवतारक पट के ऊपर झाड़ दिया जाय। झाड़ने में झटका ऊपर से नीचे को तीव्रता से लगाना चाहिए। बन्द मधु के छत्तों से मौनें इस क्रिया द्वारा यथाशीघ्र अलग हो जाती हैं। लेकिन इसमें ध्यान रखना पड़ता है कि झटके में चौखट तलपट पर न टकराने पावे या छत्ता टूटने न पावे। बिना तार लगे छत्तों पर इसका प्रयोग सावधानी से करना चाहिये। कम से कम ३, ४ से अधिक चौड़े छत्तों पर तो इसे कदापि प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए।

इन उपरोक्त तीनों विधियों के अलावा मौनपाल अपनी आवश्यकतानुसार मौनों को हटाने के लिये इन तीनों या दोनों विधियों के मिश्रण से नई विधि बनाकर भी काम निकाल सकता है। ये क्रियायें छोटे मौनपाल प्रयोग में ला सकते हैं। जिन्हें कठिनाई से कुछ ही सहकक्ष निकालने को होते हैं। क्योंकि इनमें सहकक्ष मौनालय में अधिक काल खुला रह जाता है। अगर सैकड़ों सहकक्ष हटाने हों तो लूट व लड़ाई की इनमें सम्भावना रहती है। इसके अलावा इनमें समय व परिश्रम भी अधिक लगता है।

अब नीचे दो विधियाँ हैं। जिन्हें बड़े मौनपाल सहकक्षों को मौनों से छुड़ाने के लिये प्रयोग में लाते हैं। अगर सम्भव हो तो प्रत्येक मौनपाल इन्हें अपना सकता है। ये विधियाँ इस प्रकार हैं.—

१ निर्वासक-यंत्र की विधि—यह तो प्रत्येक जानता है कि निर्वासक यंत्र एक ऐसा यंत्र होता है जिससे मौनें एक ओर को तो निकल आती हैं लेकिन लौटकर दूसरी ओर फिर नहीं जा सकती। ये यंत्र अनेकों प्रकार के बनने लगे हैं। इनका प्रयोग भी अलग अलग प्रकार से होता है। यहाँ पर एक साधारण निर्वासक यंत्र की विधि का ही वर्णन किया जायगा। यह निर्वासक यंत्र तिपरती ढक्कन के मध्य बने छिद्र में सही बैठ जाता है। इसे तिपरती लकड़ी के निर्वासक छिद्र पर इस भांति लगा दिया जाता है कि इसका मुंह नीचे की ओर हो जाय, फिर मौनागृह खोलकर इसे इसी भांति शिशु-कक्ष और सहकक्ष के मध्य रख दिया जाय। कुछ ही काल में सहकक्ष की मौनें शिशु-कक्ष में चली जायगी और लौट आने में असमर्थ होने से सहकक्ष मौनों रहित हो जायगा।

तिपरती लकड़ी को डालने के लिये यह विधि प्रयोग में आ सकती है। इसमें सहकक्षों को पहले हटाकर अलग नहीं करना पड़ता बल्कि सावधानी से मुक्तक यंत्र की सहायता से शिशु-कक्ष व प्रथम सहकक्ष को छुड़ा लिया जाता है। फिर सहकक्ष को हाथ से इतना ऊपर उठाया जाता है कि पूरे ४५° का कोण बन जावे। एक हाथ से सहकक्ष थाम कर दूसरे हाथ से धुआंकर से धुआं दे दिया जाय। फिर धुआं कर नीचे रखकर तिपरती द्वारा निमक्त कर डाल दिया

जाय। इसके बाद सहक्त्त नीचे पूर्व भाति ही छोट दिया जाय और सीध में कर दिया जाय। इस क्रिया में सावधानी की विशेष आवश्यक्ता रहती है। अधिक उठा दिये जाने पर सहक्त्तों के खिसक कर गिरने का डर रहता है, या हल्के हाथ से पकड़ने पर उनके एकाएक छूट जाने का डर रहता है।

गरम स्थानों पर तिपरती लकड़ी के ढक्न के स्थान पर जाली के बने ढक्न का प्रयोग करना उपयुक्त होता है। अन्यथा मौनागृह के भीतर अधिक गरम होने की सम्भावना हो जाती है।

इन ढकनों को लगाने का सबसे उपयुक्त समय प्रात. काल का ही होता है। क्योंकि इस काल समहा मोनें बाहर निकल जाती हैं और मौनागृह में भी हलचल अधिक नहीं रहती। आज प्रात• लगाये गये ढक्नों वाले मौनागृहों के सहक्त्त दूसरे दिन प्रात काल उसी समय हटा लिये जा सकते हैं। उस काल तक सहक्त्तों से थोडी सी मौनों के अतिरिक्त सभी नीचे आ चुकी होंगी। सहक्त्त हटाते ही ये बची हुई मौनें या तो स्वय ही उड जायगी या धुवे आदि से उड़ा दी जा सकती हैं।

२. कारबोलिक-ऐसिड की विधि—इसके लिये शुद्ध दानेदार कारबोलिक ऐसिड व इसके प्रयोगार्थ एक विशेष प्रकार के ढक्न की आवश्यकता होती है। घुला कारबोलिक-ऐसिड अपवित्र होता है। इसलिये उसको कभी प्रयोग में नहीं लाना चाहिये।

ढक्न—यह ढक्न ठीक सहक्त्त की लम्बाई, चौडाई के बराबर होता है। ऊंचाई २", २½" हो सकती है। इसके तीन भाग होते है। सबसे नीचे लकडी का तला होता है। (चित्र ७२)

इसके ऊपर मलमल या दूसरे कपड़े की अनेकों तहों वाला चौखट रखा रहता है और सबसे ऊपर काला-तेली-कपड़े का चौखट रहता है। इस कपड़े की आवश्यकता सूर्य की गरमी को खींचने के लिये होती है।

सर्व प्रथम कारबोलिक ऐसिड को २५ प्रतिशत तक पानी मे मिलाकर घोल बना लिया जाता है। फिर ढक्न को किसी समतल स्थान पर रख कर उसके काले-तेली-कपड़े वाले भाग को हटा लिया जाता है। मलमल आदि के

कपड़े को कारबोलिक-ऐसिड के घोल से इस भांति भिगा देना आवश्यक होता है कि कपड़ा पूर्ण रूप से भीग जावे लेकिन नीचे को टपकने न पावे। कारबोलिक-ऐसिड के टपकने से मौनों को हानि पहुँचती है। इसके बाद काले कपड़े वाला चौखट भी लगा दिया जाय।

चित्र ७२—कारबोलिक-ऐसिड प्रयोग करने का ढकन।
१—काले कपड़े का ढकन
२—कारबोलिक-ऐसिड से भीगे कपड़े का ढकन
३—ढकन की चौकी

इतना हो चुकने पर मौनागृह की छत हटा कर इस कारबोलिक-ऐसिड वाले ढकन को रख दिया जाय। कुछ ही काल में मौनें महकक्ष छोड़ देंगी। यह क्रिया हमेशा धूप वाले दिन की जानी चाहिए।

इसमें यह दूसरी सावधानी रखनी आवश्यक होती है कि किसी प्रकार भी मधु में कारबोलिक-ऐसिड न मिलने पावे। अन्यथा मधु बिगड़ जायगा। इसका अधिक काल तक महकक्ष के ऊपर रह जाना भी मधु में इसकी गन्ध पैदा कर देता है।

इसीलिए मौनपाल मौनें हटाने के बाद कम से कम २४ घंटे तक किसी ऐसे हवादार कमरे में जहां मौनें न आ सकें महकक्षों को एक दूसरे के ऊपर तिरछा करके रख देना आवश्यक समझते हैं।
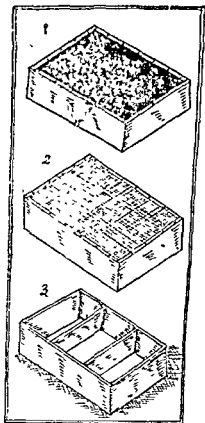
मधु-निष्कासन

अगर मौनपाल के पास अतिरिक्त सहक्त्तों की कमी न हो तो वह कभी भी आराम से मधु निष्कासन का काम कर सकता है । लेकिन अगर सहक्त्ता की कमी हो और मधु आन वेग पर हो तो उसे तत्काल सहक्त्ता खाली करके लौटाने आवश्यक हो जाते हैं ।

मधु निष्कासन का समय व स्थान—अगर मौनपाल के पास मधु निष्कासन करने के लिये ऐसा कमरा बना हो जिसमें मौनें वहाँ से भी प्रवेश न कर सकें, तब तो किसी समय भी यह काम किया जा सकता है । अन्यथा रात्रि को जब कि मौनें भीतर चली जाती हैं और उनके बाहर निकलने की सम्भावना नहीं रहती है, यह काम किया जाना चाहिये । बरसात के समय दिन में भी यह काम हो सकता है । क्योंकि उस समय भी मौनें बाहर कम निकलती हैं ।

मधु-निष्कासन के लिए आवश्यक सामान—मधु निष्कासन के लिये विदेश में बहुत प्रकार का सामान मौनपाल प्रयोग में लाते हैं । वास्तव में उनसे मौनपालों को उनके कार्य में सरलता रहती है । लेकिन उतना सामान प्राप्त करना हमारे लिये सम्भव नहीं है । जैसा कि अधिक मात्रा में अभी हम मधु उत्पादन भी नहीं कर सकते हैं, हमारे लिये उतना सब सामान आवश्यक भी नहीं होता । कम से कम नीचे लिखे अनुसार हमारे पास इस काम के लिये सामान का होना अति आवश्यक है —

१ **मधु-निष्कासक-यन्त्र**—यह यन्त्र सबसे आवश्यक होता है । इसकी सहायता से हम छत्ता से मधु बिना उन्हें नष्ट किये नहीं प्राप्त कर सकते हैं ।

२ **छूरे**—दो छूरों का होना आवश्यक है । ये छूरे इसी के प्रयोजनार्थ बने होते हैं । ये मधु-कोठरिया के बन्द मोहरों को खोलने के काम आते हैं । बिना मोहरों के खोले मधु नहीं निकल सकता है ।

३ **खोलने की नान्दी**— यह एक थाली का बना बरतन होता है ।

इसीमें मधु-कोठरियों के खोलने से निकले हुए छिलके एकत्रित किए जाते हैं। इसीमें उन छिलकों से अलग होकर मधु छन कर निकल आता है।

४. लकड़ी का आधार—यह अंग्रेजी अक्षर "T" के आकार का लकड़ी का होता है। इसे बाल्टी के ऊपर रखा जाता है। इसी पर मधु पूर्ण चौखट को अड़ाकर मधु-कोठरियों के खोलने का काम किया जाता है।

५. स्टोव व पानी का बरतन—छुरा को समय समय पर गरम करने के लिए स्टोव पर रखे बरतन में हर समय पानी के उबलते रहने की आवश्यकता होती है। ठंडे छुरे अच्छा काम नहीं करते। उन्हें इस पानी में डुबा कर समय समय पर गरम कर लिया जाता है। पानी का बरतन गहरा होना आवश्यक होता है ताकि उसमें छुरे अच्छी तरह डूब सकें।

६. छानने का सामान व मधु संग्रह करने का बरतन—मधु निष्कासन यंत्र से मधु को छान कर किसी अच्छे बरतन में रख लेने की आवश्यकता होती है।

चित्र ७२—छत्तों के मधुद्वार खोलना

मधु निष्कासन का प्रारम्भ—मधु निष्कासन की क्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व इस सम्बन्धी सभी आवश्यक सामान को स्वच्छता पूर्वक धोकर सुखा लिया जाय और तब उसे मधु निष्कासन कक्ष पर रख लिया जाय। तब स्टोव को जलाकर पानी गरम होने को रख दिया जाय और उसमें दोनों छुरे छोड़ दिये जाय। मधु निष्कासन-यंत्र का पूर्ण रूप से कड़ा किया जाना आवश्यक होता है। निष्कासन करते समय उसका हिलना हानिकारक व कष्टदायक होता है। निष्कासित किए जाने वाले मधुकक्षों को पास में ही एक के ऊपर दूसरा लगाकर रख लिया जाय। कमरे

या फर्श किसी भाति भी मैला होना ठीक नहीं रहता। फिर कमरे को पूर्ण रूप से बन्द करके मधु-निष्कासन का काम किया जाना चाहिए।

मोहरों का खोलना—जितने भी चौखटो का निष्कासक-यत्र हो, उतने चौखटो को सर्वप्रथम एक एक करके चित्र मे दिखलाये गये भाति खोलने की बाल्टी के ऊपर लकडी का आधार लगाकर चौखट को हाथ से उसमे अडा कर गरम किये हुए चाकू से उसके कोठो के मोहरों को छीलने का काम किया जाना चाहिये। (चित्र ७३) प्रत्येक चौखट के दोनो ओर के मोहरे सावधानी पूर्वक पूर्ण रूप से खोल दिये जाने आवश्यक होते हैं। इस समय यह बात और भी ध्यान देने की होती है कि एक बार में निष्कासक यत्र में रखने के लिये लगभग एक ही बोझ के छत्ते प्रयुक्त किये जाय। कम और अधिक बोझ के छत्तों को एक साथ एक ही बार में यत्र में रखने से निष्कासन का काम ठीक नहीं होने पाता है। जब छत्ते खुल जाँय, तब उन्हे एक एक करके निष्कासक यत्र की एक एक थैली में अडा कर रख दिया जाना चाहिये। (चित्र ७४)

चित्र ७४—छत्तों को निष्कासक यत्र में रखना

मधु-निष्कासन क्रिया—इसके बाद निष्कासक-यत्र को घुमाना चाहिये। घुमाने का काम धीरे धीरे प्रारम्भ करके कुछ तीव्रता पर लाकर समाप्त करना अच्छा होता है। (चित्र ७५) पहली बार में उतनी ही देर तक घुमाना उपयुक्त होता है जितने में छत्तों के एक ओर का आधा मधु निकल आय। इसके बाद छत्तों को निकाल करके पलट कर रख दिया जाता है। अब पुन.

उसी भांति धीरे धीरे घुमाना प्रारम्भ करके उसकी गति को तीव्रता पर ले जा कर उस समय छोड़ना ठीक होता है जब कि एक ओर का मधु पूर्ण रूप से निकल आवे। छत्तों को बीच बीच में यन्त्र को रोककर भी देखा जा सकता है। जब मालूम हो जाय कि एक ओर का सम्पूर्ण मधु निकल चुका है, तब छत्ता को निकाल कर पुन पलट देना आवश्यक होता है और पुन उसी भांति यन्त्र को घुमाकर छत्ता के दूसरी ओर के आधे मधु को भी निकाल लिया जाता है।
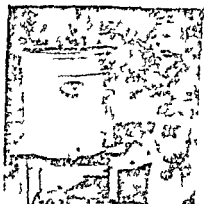
चित्र ७५—निष्कासक-यन्त्र को चलाना

अब इन रिक्त छत्तों को निकाल कर खाली सहकक्षा में रख लिया जाता है और दूसरी बार के लिये पुन पहली भांति छत्ते खालकर व उनके मोहरे खोल कर तैयार किये जा सकते हैं और उनसे मधु, निष्कासक यन्त्र में डालकर प्राप्त किया जासकता है। इन्हें भी फिर खाली सहकक्षों में भर लिया जाता है। खाली सहकक्षों में रिक्त छत्ते भरने से पूर्व उन्हें कागज या किसी चौड़े बरतन के ऊपर रखना ठीक होता है। अन्यथा मधु के टपक कर नीचे गिरने की सम्भावना रहती है।

चित्र ७६—निष्कासक-यन्त्र से मधु को निकालना

इसी प्रकार सम्पूर्ण छत्तों का मधु निकाला जा सकता है

एक बात ध्यान देने की और है। ज्यों ही मधु निकल कर निष्कासक-यन्त्र में इतना इकट्ठा हो जाय कि निष्कासक यन्त्र को चाल में भारीपन अनुभव होने लगे तो उसमें एकत्रित मधु को बाहर निकालकर अलग बरतन में रख लेना चाहिये। (चित्र ७६) कुछ मौनपाल इसी समय बाल्टी पर तार की जाली व कपड़ा डालकर छानने की क्रिया कर लेते हैं और कुछ मौनपाल सब मधु निकाल लेने पर बाद को एक साथ इस काम को करना पसन्द करते हैं। चाहे जो भी विधि अपनाई जाय यह आवश्यक होता है कि निष्कासक यन्त्र से निकालने के बाद मधु को अवश्य एक बार छान लिया जाना चाहिये। अन्यथा उसमें मोम के टुकड़े रह जायेंगे।

निष्कासन के बाद का काम—निष्कासन-कार्य हो चुकने पर सभी सामान धोकर यथास्थान रख दिया जाता है और मधु को बन्द करके सँभाल लिया जाता है। तथा रिक्त-छत्तों पूर्ण सहछत्तों को पुनः मौनगृहों में लौटा दिया जाता है ताकि उन पर लगे हुए मधु को मौनें ले लें। चौखटों को मधु-रहित हो जाने पर फिर उनको सुरक्षित स्थान पर उचित प्रकार से भविष्य के लिये रख लेना आवश्यक होता है।

अध्याय ११

मोम

शहद के बाद जो दूसरा बहुमूल्य व उपयोगी पदार्थ हमें मौना से मिलता है, वह मोम होता है। मौनें जो छत्ते शिशु पालन, अमृत व पराग के संग्रहार्थ बनाती हैं, उनमें ही मोम विद्यमान रहता है। यों तो इन छत्तों का मूल्य मौन व मौनपाल दोनों के लिये मोम से छत्तों के रूप में ही अधिक होता है, लेकिन फिर भी कुछ समय उपरान्त ये छत्ते अनुपयोगी हो जाते हैं, शिशुपालन व अमृत और पराग के संग्रह करने के योग्य नहीं रह जाते हैं। तब हम नहीं जानते हैं कि उनको हम किस प्रकार काम में लाना चाहिये। हम उनको फेंक डालते हैं। हमारे देश में मौनापालन अभी तक पुराने ढंग से ही किया जाता है। हम शहद निकालने के लिये अनिवार्य रूप से उपयोगी व अनुपयोगी छत्तों को काट कर मिट्टी में मिलने के लिये फेंक देते हैं। इस प्रकार हम मौना को कष्ट पहुंचाते हैं। अपनी हानि करते हैं। साथ ही साथ देश को भी आर्थिकक्षति पहुंचाते हैं क्योंकि बहुत से कामों के लिये देश को बाहर से मोम मंगाना पड़ता है।

मोम की उपयोगिता

मोम बहुत ही उपयोगी व दुर्लभ पदार्थ होता है। यों तो आजकल अनेकों प्रकार का वानस्पतिक मोम बनने लगा है लेकिन यह मोम मौनी मोम की समानता किसी प्रकार भी नहीं कर सकता है। अनेकों कामों में मौनी मोम के अतिरिक्त दूसरा मोम लाभदायक नहीं होता है। मोम का प्रयोग पॉलिश, वार्निस, आदि के लिये किया जाता है। सौन्दर्य के प्रसाधनों के निर्माणार्थ इसकी अत्यन्त आवश्यकता होती है। अनेकों प्रकार के कपड़े, कागज आदि पर इसका पॉलिश चढ़ाया जाता है। यह चित्रकारों के लिये बड़ा उपयोगी होता है। अनेकों वैज्ञानिक यन्त्रों के निर्माण में इसको प्रयोग में

लाया जाता है। गिरजों के लिये इसकी मोम बत्तियां भी बनती हैं। कैथलिक सम्प्रदाय वाले तो केवल इसी मोम से बनी मोम बत्तियों को ही गिरजों में जलाते हैं।

मोम कैसे बनता है ?

मौन के जीवन में मोम का बड़ा उपयोगी स्थान होता है। इसी से वह अपने घर का निर्माण करती है, जिसमें ही उसके सारे कर्म आधारित रहते हैं। इसका निर्माण करने के लिये मौन पहिले शहद खाती है। फिर उससे गरमी पैदा करके अपने भीतरी अवयवों द्वारा मोम का निर्माण करती है। इसके हेतु इसके पेट के भीतर की ओर आठ ग्रन्थियां होती हैं, जिनके द्वारा छोटे छोटे टुकड़ों में यह बाहर निकलता है।

मौनपालों का मत है कि मौनें १ पौन्ड मोम पैदा करने के लिये १० से १५ पौन्ड तक शहद खा डालती हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यह कितना मूल्यवान पदार्थ होता है। छत्तों को बरबाद करके हम अपनी कितनी बड़ी हानि करते हैं। मौनें नये छत्ते बनाने में संचित मधु को खा लेती हैं और जिस समय में वे अतिरिक्त मधु जमा कर लेतीं, उस समय को नये छत्तों के निर्माण में लगा देती हैं। इसलिये हमेशा मौनों द्वारा दिये गये छत्तों को सुरक्षित रखने के प्रत्येक प्रयत्न मौनपाल को करने चाहिए।

कौन से छत्तों से मोम निकालना चाहिये

मोम तो प्रत्येक प्रकार के छत्तों से निकाला जा सकता है। लेकिन मौनपाल को हमेशा उन्हीं छत्तों से मोम निकालने का प्रयत्न करना चाहिये, जो कि मौनारंश के काम किसी प्रकार भी नहीं आ सकते हों। मौनें बहुत बार दोहरे छत्ते लगा देती हैं। चौखटों के ऊपर व निर्वासक-पट पर छत्ते खींच देती हैं। जिन्हें निरीक्षण के समय हम अलग कर देते हैं। इन टुकड़ों को संग्रह करके हम मोम निकाल सकते हैं। इसके अलावा बहुत बार छत्ते मोमी पतिंगो द्वारा बरबाद कर दिये जाते हैं या अधिक पुराने हो जाने पर वे काम के नहीं रह जाते हैं। हम इन छत्तों से भी मोम निकाल सकते हैं। बहुत बार पुराने जालों से

शहद निकालने में या उनसे मौनें बदलने में छत्ते मिल जाते हैं, इनमें से भी अनुपयोगी छत्तों से मोम निकाला जा सकता है।

मोम निकालने की विधियां

छत्तों से मोम निकालने के बड़े ही अच्छे यंत्र अब बन गये हैं। पाश्चात्य देश के मौनपाल तो शहद व मोम निकालने के सभी यंत्रों को बिजली से ही चलाते हैं। हमारा ऐसा सौभाग्य कहां। हम तो अभी उन यन्त्रों को दर्शनार्थ भी नहीं पा सकते हैं। लेकिन फिर भी हमें काम तो करना ही है। यंत्रों के न मिलने से अनुपयोगी छत्तों को बिना मोम निकाले ही फेंक डालना तो उचित नहीं कहा जा सकता। इसलिये हम ऐसी विधियों का ही वर्णन यहाँ पर करेंगे, जिन्हें प्रत्येक मौनपाल सरलतापूर्वक अपना सकता है। भले ही इनसे छत्तों पर का पूरा मोम तो नहीं निकल पाता है। लेकिन फिर भी इस समय हमारे लिये यही विधियां उपयोगी हो सकती हैं, क्योंकि इन्हें ही हम इस समय अपना सकते हैं, और इनमें किसी विशेष यन्त्र की आवश्यकता भी नहीं होती है।

मोम दो प्रकार से निकाला जा सकता है। एक तो सूर्य की गरमी से और दूसरा पानी में छत्तों को उबाल कर।

सूर्य की गरमी से मोम निकालना

इसके लिये एक यन्त्र होता है (चित्र ७७) जिसे हम सूर्य-तापी-मोम निष्कासक-यन्त्र कहते हैं। इसे बनाना कोई भी कठिन काम नहीं है। साधारण बढ़ई या लोहार द्वारा इसे बनवाया जा सकता है। इसके लिये ६", १०" गहरे किसी भी नाप के एक सन्दूक की आवश्यकता होती है। कनिस्टर को काट कर भी इस प्रयोजन में लिया जा सकता है। अगर लकड़ी का सन्दूक बनवाया जावे, जैसा कि अधिकांश होता है तब भी उसके भीतर से चारों ओर टिन ठोंक देना चाहिये। अन्यथा मोम के बरबाद होने की या पूर्ण रूप से न निकल पाने की सम्भावना रहती है। इसके बाद बक्से को एक खड़ी जाली से दो भागों में विभक्त कर देना चाहिये। इसकी आवश्यकता इसलिये पड़ती है कि एक भाग

मे जब हम अनुपयोगी छत्ते या छत्ता के टुकड़ा को भर देते हैं तो सूर्य की गरमी से उनका मोम निकल कर जाली के द्वारा छन कर दूसरे भाग में सम्रहित हो जाता है। इसीलिये ये दोनों भाग बराबर भी नहीं बनाये जाते हैं। इनमें से एक भाग बड़ा छत्ते रखने को और दूसरा छोटा मोम के सम्रहित होने को बनाया जाता है। फिर इस पर आयने का दोहरा ढकन इस प्रकार लगा दिया जाता है कि दोनों आयने आपस में चिपकने न पावें, बल्कि कुछ अन्तर उनके मध्य में रह जावे। अगर दोहरा आयना न हो सके तो इकहरे से भी काम चलाया जा सकता है। इसके बाहर से लकड़ी या टिन पर काला रंग लगाना उपयुक्त होता है।
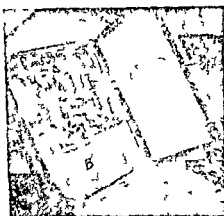
चित्र ७७—सूर्य-तापी-मोम निष्काशक-यन्त्र

जिन छत्तों से हमें मोम निकालना होता है वे सब बड़े भाग में भर दिये जाते हैं। इसके आयनेदार ढकन को लगा कर, उसे सूर्य की ओर मुंह करके इस प्रकार ढलवा रख दिया जाता है कि सूर्य की किरणें सीधे उसके शीशे पर पड़े और छत्तों वाला भाग जो हमेशा ऊपर की ओर रहता है इससे गरम होकर छत्तों को पिघलाना प्रारम्भ कर देवे। इस प्रकार छत्तों से मोम पिघल पिघल कर निचले भाग में निकल आवेगा। सूर्य के साथ ही साथ हम इसकी दिशा को भी बदल सकते हैं और समय समय पर इसमें नये छत्ते भी डाल सकते हैं। यह यन्त्र प्रत्येक मौनपाल को रखना चाहिये। अन्यथा बहुत से छत्ते बिना मोम निकाले हुए ही रह जाते हैं।

इसमें पुराने छत्तों से पूरा व अच्छा मोम नहीं निकल पाता है। निरीक्षण

के समय निकाली गई पुरानन, सहायक व संयोजक छत्तों के टुकड़े व नये बने हुए छत्तों का मोम हम इसमें निकाल सकते हैं।

उबाल कर मोम निकालना

१. शिकन्जे की विधि—यह विधि सर्वोत्तम समझी जाती है। क्योंकि इसमें मोम पूर्णतः निकल आता है। लेकिन इसके हेतु बना हुआ निष्कासक-यंत्र अभी हमारे देश में प्राप्य नहीं है। इसीलिये अभी हमारे लिये इसको अपनाना कठिन ही है।

इसके लिये एक ड्रम में शिकन्जा लगा रहता है। जो आँच से या बिजली से गरम किया जा सकता है। इसमें पानी भर कर उसे उबाल लिया जाता है। फिर जिन छत्तों से मोम निकालना होता है वे इसमें छोड़ दिये जाते हैं। जब वे पूर्ण रूप से पिघल जाते हैं और मोम पानी के ऊपर तैरने लग जाता है, तब शिकन्जे को कस दिया जाता है। इस प्रकार ४, ५ बार कसने से छत्तों के बुरादे से सम्पूर्ण मोम निकल आता है। फिर इसे दूसरे बड़े टब में उलट लिया जाता है। छत्तों के बुरादे को मोम के साथ आने से रोकने के लिये इसमें एक जाली भी होती है और उलटते समय उसे कपड़े में छान भी लिया जाता है। इस प्रकार पानी के ठंडा होते ही मोम ऊपर से आ जाता है। बहुत से निष्कासक यंत्रों में एक नली ऊपर से व एक नीचे से लगी रहती है। ऊपर की नली द्वारा मोम से पूर्ण उबला हुआ पानी बिना यंत्र को लौटाये ही निकाल लिया जाता है और नीचे की नली द्वारा नया गरम पानी और डाल दिया जाता है।

२ साधारण विधि—यह विधि साधारण है। इसमें छत्तों से पूरा मोम तो नहीं निकल पाता है लेकिन इसमें किसी भी अतिरिक्त सामान की आवश्यकता नहीं होती है। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति सरलतापूर्वक इसे अपना सकता है। इसके लिये एक बारीक कपड़े की थैली, पानी उबालने का बड़ा बरतन व एक इस पानी को ठंडा करने के लिये चौड़े बरतन की आवश्यकता होती है।

इसके लिये सर्व प्रथम जिन छत्तों मे हमें मोम निकालना होता है वे सब थैली में इस प्रकार बाध दिये जाते हैं कि एकाएक थैली खुलने न पावे । फिर यह थैली मय छत्तों के ठडे पानी में भिगोने डाल दी जाती हैं । अगर छत्ते बहुत पुराने हों, तो उनको लगभग २४ घटे भिगोया रहना उपयुक्त होता है ।

इसके बाद किसी चौड़े बरतन में स्टोव या चूल्हे के ऊपर पानी को खौला लिया जाता है । जब पानी खौल जावे, तब थैली को जलने से बचाने के लिये उसमे पहिले ३,४ लकड़ी के मोटे टुकड़े छोड दिये जावें, टुकड़ों के ऊपर से थैली को डाल दिया जावे । इस समय अगर थैली किसी भारी बोझ से दबा दी जावे तो उत्तम रहता है । इस प्रकार खौलते पानी मे रखे जाने से थैली के अन्दर बन्द छत्तों का मोम पिघल पिघल कर कपड़े के बाहर निकल आवेगा और सब निरर्थक पदार्थ भीतर ही रह जावेंगे । कुछ ही काल में मोम चमकता हुआ पानी के ऊपर तैरता दिखाई देने लगेगा । इस क्रिया में थैली को समय समय पर पलटने की आवश्यकता रहती है, ताकि वह जलने न पावे, तथा किसी लकड़ी से दबाते रहने की आवश्यकता रहती है, ताकि सब मोम बाहर निकल आवे ।

जब कुछ काल इस प्रकार हो जावे, मोम पानी के ऊपर तैरता दिखाई देने लग जावे, तब वह सब पानी किसी दूसरे एक ही बरतन में या दो तीन बरतनों में उलट दिया जावे । पानी के ठडा होते ही मोम की पपड़ी ऊपर से आ जावेगी, जो सरलता पूर्वक निकाल ली जा सकती है । पानी को शीघ्र ठडा करने के लिये अगर इन बरतनो को दूसरे ठडे पानी से भरे बरतनो मे इस भाति रख दिया जाय, कि उनका पानी मिलने न पावे, तो उपयुक्त रहता है । फिर दुबारा पानी खौलाकर यह क्रिया अपनाई जा सकती है । इस प्रकार दो तीन बार करने से समस्त मोम निकल आवेगा ।

इस क्रिया को अपनाने के लिये अगर पानी दो अलग अलग चूल्हों में अलग अलग बरतनो में उबाला जाय, तो अधिक सहूलियत रहती है । एक बरतन के पानी मे थैली को उबाल कर ज्योंही उसे ठडा करने के लिये उलटा

जावे, त्योंही थैली को निकाल कर दूसरे बरतन मे छोड दिया जावे। उसे उबलते समय तक नये बरतन का पानी थैली को पुन उबालने के लिये खौला कर तैयार हो जाता है। इस प्रकार समय की बचत हो जाती है।

मोम निकालने के लिये ध्यान देने की बातें

मोम अगर मौनालय से दूर किसी बन्द कमरे में निकाला जावे, तो उपयुक्त रहता है। क्योंकि छत्तों में अगर मधु की मात्रा होगी, तो मौनें वहीं आकर धावा बोल देंगी। इसी प्रकार मोम निकाल लेने के बाद थैली के भीतर का बचा हुआ निरर्थक पदार्थ, तथा वह पानी जिसमें थैली को उबाला गया था, मौनागृह से दूर ही फेंका जाना चाहिये। अन्यथा इसमें भी मधु का अंश होने से मौनों की लूट व लड़ाई होने का भय रहता है।

अध्याय १३
मौनों के शत्रु

दुनियाँ में प्रत्येक प्राणी के शत्रु होते हैं। इसी प्रकार मौनों के भी अनेकों शत्रु हैं। जो उनकी उन्नति के बाधक तथा प्राणों के घातक होते हैं। मौनपाल को उनका ज्ञान होना अति आवश्यक है। अन्यथा वह उनसे मौनों की रक्षा नहीं कर पायगा। जिससे उसे लाभ के स्थान पर मौनपालन के धन्धे में हानि ही अधिक उठानी पड़ेगी। ये मुख्य शत्रु निम्न लिखित हैं।

१—आदमी

आदमी मौनों का सबसे बड़ा मित्र भी है और सबसे बड़ा शत्रु भी। हमारे देश में अभी तक अधिकाश आदमी मौनों के मित्र होने के स्थान पर शत्रु ही अधिक हैं। हम थोड़े से शहद की प्राप्ति के लिये सारे मौनावश को नष्ट करने में नहीं हिचकते। उनसे सब कुछ छीन कर उन्हे दैव के ही आधीन छोड़ देते हैं। जगली मौनावंशों से शहद को प्राप्त करने वाले लोग, प्राचीन ढग से मौनों को पालने वाले लोग तथा हलवाई का पेशा करने वाले लोग, जो मीठे को खुला या आइनों की आलमारी में बन्द रखते हैं, वे मनुष्यों में मौन के सबसे बड़े शत्रु हैं। इनसे मौनों को बचाने के लिये यह आवश्यक है कि उनको मौनों की उपयोगिता से परिचित कराया जाय तथा नवीन वैज्ञानिक ढग से मौनों को पालने के लिये उत्साहित किया जाय।

२—मोमी पतिंगे या मोमी-कीड़े

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है। यह एक पतिगा या कीडा होता है जो अधिकांश मोम पर जीवन निर्वाह करता है। इसलिये मौनों के छत्ते उसके द्वारा बरबाद किये जाते हैं। यह छत्ते से मोम खाता है। साथ ही साथ उससे संयुक्त पराग, मौनीगोंद, अंडावस्था, कीटावस्था व कोष-कीटावस्था की मौनों को तक

अपना शिकार बना लेता है। नये छत्ता से पुराने छत्ता को यह अधिक पसन्द करता है। (चित्र ७८)

प्राचीन काल में यह मौनपाल के लिये वास्तव में एक बहुत बड़ी समस्या बनी थी। वे इसे मौना का भयंकर शत्रु मानते थे। लेकिन आज का मौनपाल इसकी उतनी चिन्ता नहीं करता। मौनपाल की अज्ञानता व असावधानता ही इसको हानि पहुँचाने का अवसर दे सकती है।
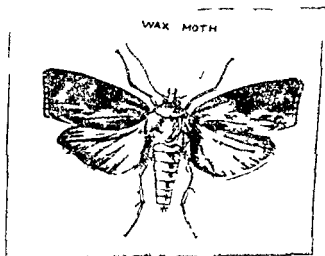
चित्र ७८—मोमी पतिंगा

पाश्चात्य मौनपालों ने इसकी पाँच जातियाँ खोज निकाली हैं। लेकिन अभी तक कहा नहीं जा सकता कि हमारे देश में इसकी कितनी जातियां होती हैं। यह अवश्य है कि इसकी दो तीन जातियाँ यहाँ भी पाई जाती हैं।

या तो यह कभी भी पैदा हो सकता है लेकिन बरसात में इसके पैदा होने की सब से अधिक सम्भावना रहती है। स्त्री पतिंगे अपने गर्भाधान के बाद अधिकांश रात के समय जब कि वातावरण शान्त रहता है, मौनागृहों के भीतर

प्रवेश कर जाती हैं और कहीं भी छिद्रों, जोड़ों, चौखटों में या किसी भी उपयुक्त स्थान में अंडे दे देती हैं। मां मौन की भांति इनमें भी स्त्री पतिंगा सैकड़ों से हजारों तक अंडे दे देती है।

इनके भी जन्म से पूर्व तीन अवस्थायें होती हैं। पहली—अंडावस्था—जिसमें यह लगभग दो सप्ताह तक रहता है। द्वितीय—कीटावस्था—जिसमें यह लगभग ४, ५ सप्ताह तक रह जाता है। तथा तीसरी—कोष-कीटावस्था—जिसमें यह १ से ४ सप्ताह तक तापक्रम की अधिकता व न्यूनता के अनुसार रहता है।

इसको पूर्ण पतिंगा बनने में कम से कम ७, ८ सप्ताह लग जाते हैं। अंडावस्था में यह कुछ हानि नहीं पहुँचाता। ज्यों ही कीटावस्था में पहुंचता है तो बरबादी आरम्भ कर देता है। सर्व प्रथम यह छत्ते के भीतर उसके कोठों की दीवारों को छेद कर एक लम्बी सुरंग सी मोम आदि को खाते हुए बना देता है। इस समय छत्ते की ऊपरी सतह ज्यों की त्यों बनी रहती है। उसे देखकर नहीं कहा जा सकता कि छत्ता मोमी पतिंगों का शिकार हो रहा है। धीरे धीरे कोष-कीटावस्था में पहुँचने से पूर्व यह मकड़ी के जाले के समान जाला उसी सुरंग के अन्दर बनाना आरम्भ कर देता है। (चित्र ७६) इसी जाले के भीतर इसकी कोष-कीटावस्था समाप्त होती है। फिर जाले को यह विस्तृत करते जाता है। जिसमें अनेकों कीड़ सुरक्षित रूप से परवरिश पाते रहते हैं। जब तक जाला अधिक विस्तृत न कर दिया गया हो। इसको एकदम नहीं देखा जा सकता। धूप में रोशनी पर छत्ते को लगाकर ही इसे देखा जा सकता है।

वास्तव में इसका प्रकट होना एक बड़ी बरबादी का कारण होता है। मौनपाल को इससे बचने का ध्यान रखना चाहिये। क्योंकि खिंचे-खिंचाये छत्ते जो कि मौनपाल की अमूल्य निधि होते हैं, थोड़ी सी लापरवाही से इनके द्वारा नष्ट किये जाते हैं। तथा ये मौनावंशों को भागने के लिये विवश कर देते हैं।

पतिंगे से बचने के उपाय—अपने मौनालय में मोमी पतिंगे का आक्रमण न होने देने के लिये मौनपाल को तीन स्थानों को निम्न जहां खाली छत्ते

होते हैं दृष्टि में रखना चाहिये। क्योंकि मोमी-पतिंगा अधिकांश खाली छत्तों पर से ही आक्रमण प्रारम्भ करता है। इनमें पड़ना स्थान है मौनागृह के भीतर-इसमें आने से मोमी पतिंगे को रोकने के लिये निम्न लिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिये।
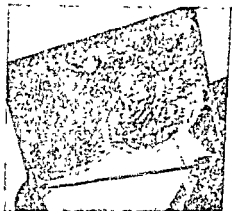
चित्र ७६—मोमी पतिंगे द्वारा नष्ट हुआ छत्ता

१. शक्तिशाली मौनावंश—मौनपाल यह ध्यान रखे कि उसके मौनालय में कोई भी शक्तिहीन मौनावंश न हो। शक्तिहीन मौनावंश ही इसके आक्रमण के अधिक शिकार होते हैं।

२. खाली छत्ते—मौनागृह के भीतर उतने ही छत्ते रखे जायें जितनों को मौनें पूर्ण रूप से ढक सकें। खाली छत्तों को मौनागृह के अन्दर छोड़ देना मोमी-पतिंगे को निमंत्रण देना है।

३. उचित निरीक्षण—मौनावंशों का निरीक्षण समयानुसार व ध्यान-पूर्वक करना चाहिये। मोमी पतिंगे के लक्षण दिखाई देते ही उपचार कर देना चाहिये।

४. गन्दगी—मौनावंश प्रत्येक प्रकार से स्वच्छ रहना चाहिये। उसी भांति मौनालय की स्वच्छता भी विशेष आवश्यक है। भूलकर भी मौनागृह में या मौनालय में छत्ते का कोई टुकड़ा बिखरा न रहने दिया जाय। इनमें मोमी पतिंगे को पनपने का अच्छा सुअवसर मिल जाता है। मौनागृह के तलपट की भी समय समय पर स्वच्छता करना आवश्यक है।

५ मौनागृहों के छिद्र—सदा अच्छे बढ़ई द्वारा अच्छी लकड़ी के बने मौनागृहों को प्रयोग में लाया जाय। मौनागृहों के जोड़ आदि खुलने न देने चाहिये। इन्हीं से स्त्री पतिंगे को भीतर जाने का मार्ग मिलता है, तथा इन्हीं में उसे अडे देने का अवसर प्राप्त हो जाता है।

अब दूसरा स्थान जो मौनपाल को ध्यान में रखना चाहिये वह उसका वह स्थान है जहाँ उसने खाली छत्ते भविष्य के प्रयोग के लिये सँभाल कर सुरक्षित रखे हैं। इनका भी समय समय पर निरीक्षण करते रहना चाहिये। ज्योंही कहीं भी पतिंगे का आक्रमण दिखाई दे तुरन्त उसका उपचार कर लेना चाहिये। यहां पतिंगे का आक्रमण रोकने के लिये निम्न उपाय काम में आ सकते हैं।

(१) छत्तों को बन्द स्थान पर सँभाल कर रखें। इसके लिये आलमारी ऐसी बना हो जिसके जोड़ कहीं से भी खुले न हों। जिससे मोमी पतिंगे को भीतर घुसने का रास्ता न मिल सके।

(२) खाली छत्तों को समय समय पर गंधक के धुवें से स्वच्छ कर लेना चाहिये। इस कार्य का करना बड़ा सरल है। खाली छत्ते कक्षों में भर दिये जाय और वे कक्ष एक दूसरे के ऊपर रख दिये जाँय। सबसे नीचे वाला कक्ष बिना छत्तों के होना चाहिये। सबसे ऊपर वाले कक्ष को ढक कर बन्द कर देना चाहिये। फिर किसी बरतन में जले कोयले रख कर उसमें गन्धक छोड़ देना चाहिये और बरतन को एक किनारे से कक्षों को उठाकर सबसे नीचे के खाली कक्ष में रख देना चाहिये। फिर उन्हें कुछ काल वैसे ही छोड़ देना चाहिये। गंधक का धुवां प्रत्येक छत्ते में पहुँच कर पतिंगे के कीटों को नष्ट कर देगा। यह क्रिया खाली छत्तों के लिये १०, १५ दिन के बाद दुहरा दी जानी चाहिये। ताकि खाली छत्ते पतिंगे के आक्रमण से सुरक्षित रह सकें।

अब तीसरा स्थान जो ध्यान देने का है वह है जंगली मौनों के छत्तों में से आक्रमणों को रोकना। जंगली अवस्था में खाली छत्ते बहुत बिखरे रहते हैं। उनमें भी पतिंगे को पनपने का अवसर मिल जाता है। व्यक्तिगत रूप से इनकी देखभाल करना मौनपाल के लिये असम्भव है। लेकिन

जहां कहीं भी उसे छते कहते दिखाई देवें हमेशा उन्हें नष्ट कर दिया जाना चाहिये।

३—अंगलार या वर्रे

ये मौनों के बड़े भयानक शत्रु हैं। पर्वतीय भागों में मौनपाल इनसे अत्यधिक परेशान रहते हैं। इन्हें अंगरेजी में 'वास्प' कहते हैं। (चित्र ८०) हमारे पर्वतीय भागों में अंगलार या भिड़ों के नाम से इन्हें जानते हैं। लेखक को इनका कटु अनुभव है। ये मौना को पकड़ लेते हैं। मौनागृहों के बाहर
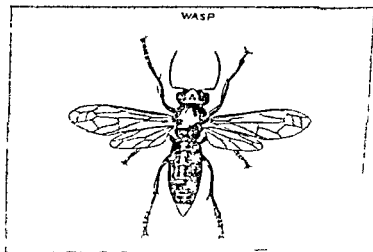
चित्र ८०—अंगलार या ततैय

आने जाने वाली मौनों को झपट कर पकड़ लेना इनका काम है। कभी कभी ये भीतर भी घुस जाते हैं। इनके भय से मौना को भागने के लिये विवश हो जाना पड़ता है। लेखक ने देखा उसके एक मित्र के लैंगस्ट्राथ नाप के १० चौखट पूर्ण मौनागृह की मौनें जिसमें लगभग ८ पौन्ड शहद जमा था तथा ६, ७ चौखटों पर अंडे बच्चों की भरमार थी इनके भय से भाग निकलीं। यों तो

ये शीतकाल के अलावा हमेशा रहते हैं लेकिन पतझड़ में अधिक भयकर हो जाते हैं। क्योंकि उस काल इनकी संख्या अधिक हो जाती है।

इनकी कुछ जातियां पेड़ पर और कुछ जमीन के नीचे छत्ते बनाती हैं। पर्वतीय प्रदेशों में यह विशेष कर दो प्रकार का मौनों के लिए भयकर होता है। प्रथम काला व बड़ा बहुत भयानक होता है। जिस घर को यह एक बार देख लेता है, उसे नष्ट करके या भगा करके ही दम लेता है।

इनसे बचाव करना मौनपाल के लिए व्यक्तिगत रूप से असम्भव है। मौनपाल संस्थाओं और राष्ट्रीय विभागों द्वारा ही इन से बचाव किया जा सकता है। खोज, खोज कर इनके छत्ता को नष्ट कर देना ही इनसे सुरक्षा का उपाय है।

व्यक्तिगत रूप से मौनपाल केवल इतना ही कर सकता है। अगर कहीं भी इनका छत्ता या आव तो गन्धक के धुंये या किसी अन्य विषैली वस्तु के धुंये से इन्हें मार दें। मौनागृह का द्वार इतना चौड़ा न रहने दें कि ये भीतर घुस सकें। ज्यों ही प्रथम अलगार आवे, उसे तत्काल एक पट्टे से या अन्य चीज से मार दें। ताकि वह अपने खोज की सूचना अपने छत्ते में देकर औरों को आने का अवसर न दे सके। इसके अतिरिक्त इन्हें रात्रि में भी जलाया जा सकता है।

४ चुथरौला

यह गिलहरी या बिल्ली की भांति का एक छोटा जानवर होता है। जो मधु का बड़ा लोभी होता है। यह भी कम भयकर नहीं होता है। छत्ता बरबाद कर देना व मधु को खा देना इसका प्रधान काम है। गोली से मारने की व्यवस्था करना ही इसका उपचार है। बड़े नाप के मौनागृहों का प्रयोग तथा उन्हें भारी बोझ से न्यारार रखना या तार से कस कर रखना, इससे बचाव करने के लिये उपयुक्त हो सकता है।

५—भालू

इसे रीछ या भालू कह कर पुकारते हैं। यह मधु का बड़ा प्रेमी होता है तथा पहाड़ी प्रदेशों में मौनों का बड़ा भयकर दुश्मन है। यह मौनागृह तोड़ देता है और मौनों को मार देता है तथा छत्ता को बरबाद कर देता है।

इनके उत्पात से बचने का उपाय यही है कि इसे गोली से मारने की व्यवस्था की जाय। और मौनागृह को कांटेदार तार से खम्भे गाड कर बाड़ दिया जाय।

६—चींटी

चींटियाँ मीठे की बड़ी प्रेमी होती हैं। अगर इनको मौनागृह के मधु का पता चल जाय तो ये बड़ी संख्या में धावा बोल देती हैं। मधु के अलावा ये मौनों को परेशान भी कर देती हैं। जिसके कारण मौना को घर छोड़ कर भी कभी कभी भाग जाना पड़ता है। ये अनेकों प्रकार की होती है। छोटी, बड़ी, भूरी व काली आदि। भूरे रंग की बडी चींटी अधिक परेशान करती है। इनसे बचने के लिये आवश्यक है कि मौनागृह के बाहर कहीं भी मीठा पदार्थ नहीं गिरा रहना चाहिये। तथा मौनागृह के जोड खुले नहीं होने चाहिये। मौनागृहों के आस-पास चींटियों के बिल नष्ट कर दिये जाने चाहिये। तथा मौनागृहों के चारों ओर स्वच्छ रखना चाहिये। जिन स्थानों में चींटियां अधिक परेशान करती हैं, वहां मौनागृह चार पाँवों वाली चौकियों पर रखने चाहिये और प्रत्येक पाव के नीचे एक एक प्याली पानी से भरकर रख देनी चाहिये। इससे चींटियां ऊपर नहीं पहुंच पायेंगी।

७—ड्रेगन फ्लाई

यह एक लम्बे आकार की मक्खी होती है। जो अक्सर मौनागृहों के बाहर से चुपचाप बैठी दिखाई देती है। अवसर पाते ही यह मौन को पकड लेती है। मौनपाल को चाहिये कि जहा भी ये दिखाई दें वहा उनको नष्ट कर दें।

८—चूहा

चूहा भी अगर कभी मौनागृह के भीतर प्रवेश कर जाय तो बहुत बडी हानि कर देता है। इसलिये मौनागृह का द्वार कभी भी इतना चौड़ा न रहने दिया जाय कि चूहा भीतर प्रवेश कर सके या कहीं अन्यत्र से उसे भीतर प्रवेश करने का मार्ग मिल जाय। इसके बचाव के लिए मौनपाल द्वार पर जालो का भी प्रयोग करते हैं।

६ मकड़ी।

मकड़ी भी बहुत बार मौनागृह के बाहर या भीतर मौना को फसाने के लिए अपना जाला तान देती है। निरीक्षण के समय मौनपाल को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह मकड़ी के जालों को नष्ट कर दे।

यही मौना के मुख्य मुख्य शत्रु हैं। मौनपाल को इनसे मौनों को बचाने का ध्यान रखना चाहिए। इनके अतिरिक्त अनेक प्रकार की चिड़िया, मेंढक, छिपकली आदि भी मौनों को हानि पहुंचाती हैं।

अध्याय १४
शब्दानुवाद

अ

अखिल भारतीय मौनपाल सघ	All India Bee-Keepers Association
अन्तपट	Inner Cover
अमृत	Nectar
अमृतोत्पादक पौधे	Nectar plants
अमृतधार	Nectar flow
अमृतनृत्य	Nectar dance
अमृतश्राव	Nectar flow
अवतारक पट	Alighting Board
अवलेह	Jelly

आ

आत्म सेचन	Self pollination
आला	Wall hive
आसन	Stand

ऋ

ऋतु विवरण तालिका	Weather-chart

ओ

ओसामृत	Honey dew

अ

अगलार	Wasp
अन्डा	Egg
अण्डावस्था	Egg stage

क

कणदारमधु	Granulated-honey
कर्त्तव्यच्युत कमठ	Laying worker
कमठ	Worker
कमठ कोठरी	Worker cell
कीट	Larva
कीटावस्था	Larval stage
कुमार मौनें	Young bees
कुंवारी-माँ-मौन	Virgin queen
कोठरी	Cell
कोठी	Cell
कोष कीट	Pupa
कोष-कीटावस्था	Pupa stage
कृत्रिम भकछूट	Artificial swarm
कृत्रिम भोजन	Artificial feeding
क्रासित मौनें	Cross bees

ख

खाद्य कक्ष	Food chamber
खाना	Food
खिलाना	Feeding

ग

गर्भाधान	Mating
गर्भार्थ उड़ान	Mating flight
गर्भित मां मौन	Mated queen

घ

घरछूट	Desertion
घर पहिचान की उड़ान	Midday flight
घिर्री	Embedder

च

चौकी	Stand
चौखट	Frame

छ

छत	Roof
छत्ता	Comb
छत्ताधार	Comb foundation
छत्तान्तर	Bee-space
छत्तामधु	Comb honey
छत्ता समाई	Comb space

ज

जमा मधु	Granulated honey
जाला	Wall hive
जाली	Bee-veil

ढ

ढकना	Cover

त

तलपट	Floor board
तापमान	Temprature
तार लगाना	Wiring
तिपरती ढक्कन	Inner cover

द

द्वार दंड	Entrance-rod
द्विभित्ती मौनागृह	Double walled hive
दीवाली जाला	Wall hive
दुश्मन	Enemy
दोहरा मौनागृह	Double walled hive

ध

धुवाँकर	Smoker

न

नमी	Moisture
नर कोठरी	Drone-cell
नर-मौन	Drone
निर्वासक पट	Escape board
निर्वासक यन्त्र	Bee escape
निष्कासित-मधु	Extracted Honey

प

पटला	Dummy
परसेचन	Cross-pollination

पराग	Pollen
पराग टोकरी	Pollen basket
पराग नृत्य	Pollen dance
परागाश्रयी पौधे	Pollen plants
पश्चात बकछूट	After swarm
पश्चिमी मौन	Apis melifica
पारदर्शक मौनागृह	Observation hive
पुरुषपाश	Drone-trap
पुरुष बिन जनन शक्ति	Parthenogenesis
पुरुषमौन	Drone
पुरुषाभाव जनन शक्ति	Parthenogenesis
पुष्प	Flora
पुष्प तालिका	Flora chart
पूर्तिकारक	Substitute
पातिङ्गा	Apis florea
प्रधान अमृतधार / प्रधान अमृतस्राव	Main honey flow
प्रधान बकछूट	Prime swarm
प्रवेशक पिंजड़ा	Introducing cage
प्रवेश द्वार	Entrance

ब

बकछुट	Swarm
बकछुट रोक	Swarm control
बदलना	Transferring
बसन्त की बरबादी	Spring dwindling
बातायन	Ventilation
बाहक पिंजड़ा	Carrying cage
बाह्य भोजन	Outdoor feeding
बाह्य मौनालय	Out-apiary
विभाजक पट	*Dividing board*
बुनियादी छत्ता	Comb-foundation
बन्द	Sealed
बन्द मधु	Sealed honey
बन्द मधु कोठरी	Sealed honey cell
बन्द मौनालय	House apiary
बन्द शिशु	Sealed brood
बन्द शिशु कोठरी	Sealed brood cell
वन्य मौनागृह	Wild colony
वन्य मौनी पुष्प	*Wild bee flora*
वंश मनोवृत्ति	Colony morale
बांटना	Dividing

भ

भोजन खिलाना	Feeding
भंवर	Apis dorsata

म

मधु	Honey
मधु-अवलेह	Royal Jelly
मधु खंड	Super
मधु छत्ता	Honey comb
मधु निष्कासक यंत्र	Honey extractor

मधु निष्कासन	Honey extraction
मिलाना	Uniting
मिश्री	Candy
मुक्तक यंत्र	Hive tool
मुक्त-कीट	Unsealed larva
मुक्त-मधु	Unsealed honey
मुक्त शिशु	Unsealed brood
मोम	Bee-wax
मोमी पतिंगा	Wax moth
मौन, (मोना)	Honey bee
मौनपाल	Beekeeper
मौनपालन	Beekeeping
मौनागृह	Hive
मौनाचर	Bee pasturage
मौनाविज्ञान	Apiculture
मौनाविज्ञ	Apiarist
मौनालय	Apiary
मौनावंश	Colony
मौनामंडल	Cluster
मौनी गोंद	Propolis
मौनी परदा	Bee veil
मौनी पुष्प	Bee flora
मौनी-पौधे	Bee plant
मौनी रोटी	Bee bread
माँ-मौन	Qneen bee
माँ-मौन अपघात	Balling of the queen
माँ मौन उत्पादक	Queen breeder
माँ-मौन उत्पादन	Queen breeding
माँ मौन कोठी	Queen cell
माँ मौन पालन	Queen rearing
माँ मौन पिंजड़े	Queen cages
माँ-मौन मिश्री	Queen candy
माँ मौन-रोक द्वार	Queen gate
माँ-मौन रोक पट	Queen excluder
माँ-मौन लप्सी	Royal Jelly
माँ मौन हीन मौनावंश	Queenless-colony
ल	
लघु मौनागृह / लघु मौनावंश	Nucleus
लप्सी	Jelly
लुटेरी	Robber
लूट	Robbing
व	
वायु	Air ventilation
वायु दंड	Ventilation-rod
श	
शक्तिशाली बनाना	Building up the colonies
शक्तिशाली मौनावंश	Strong colony
शक्तिहीन मौनावंश	Weak colony
शरबत	Syrup

शरीर-रचना	Anatomy	सहकक्ष	Super
शहद	Honey	सहायक छत्ता	Brace cor
शत्रु	Enemy	सहायक-मौनालय	Out apiar
शिशु	Brood	सूर्यतापी मोम-निष्कासक यंत्र	Solar-wax extracto.
शिशु-कक्ष	Brood-chamber	सेचन क्रिया	Pollinatio
शिशु-कोठरी	Brood cell	स्थान	Situatio
शिशु-खंड	Brood-chamber	स्थिति	Locality
		संग्रह कोठरी	Storage ce
शिशु-छत्ता	Brood comb	संग्रही-मौन	Forager
शिशुपालन	Brood rearing	संचालक मौनें	Control be
शीतकालीन बरबादी	Winter dwindling	संयोजक छत्ता	Burr comb
शीतकालीन बंधन	Winter packing	**ह**	
		हवा	Air, ventila
		हवादान	Ventilator
स		हर्षनृत्य	Joy-dance
		क्ष	
सचल मौनपालन	Migratory bee-keeping	क्षुधार्थ-भोजन	Starvation feeding
समतलसूचकयंत्र	Lavel		